" आज के दिन मैंने तुम्हारे
लिए तुम्हारे धर्म को पूरा कर दिया,
मैंने तुम्हारे ऊपर अपना
उपकार पूरा कर दिया।
और इस्लाम को तुम्हारी जीवन
व्यवस्था के रूप में चुन लिया। "
(कुरआन, 5:3)

ऐ अल्लाह! मेरे सृष्टा,
मालिक और नियन्ता,
मेरे कर्मों को देखने वाले,
मैं दुआ करता हूँ, विनती करता हूँ
और इस विनम्र प्रयास को स्वीकार करने की
प्रार्थना करता हूँ!

इस पुस्तक के पाठकों को
मार्गदर्शन का प्रकाश प्राप्त करने में
उनकी सहायता कर
और क़ियामत के दिन मुझे मुक्ति दे दे!

जिस दिन तेरी दया और कृपा
के अतिरिक्त कोई सहारा न होगा!

आमीन!

इस्लाम

आप के लिए

सैयद हामिद मोहसिन

हिन्दी अनुवाद

अब्दुल्लाह दानिश

सलाम सेन्टर

SALAAM Centre

शान्ति और बन्धुत्व का प्रेरक

Islam Aap ke Liye (Hindi)

ISLAM For You (English)

Copyright © 2014 SYED HAMID MOHSIN.

ISBN: 978-81-928089-4-9

All rights reserved. No part of this book may be reproduced or transmitted in any form or by any means, electronic, mechanical, including photocopy, recording, or any information storage and retrieval system, without permission in writing from the author, except for the situation below which is permitted.

For Reprinting

Reprinting or reproducing this book on the condition that absolutely no change, addition, or omission is introduced is permitted free of charge. To make high quality reprints, you may contact the author / Salaam Centre to obtain free copies of the soft copy or printing files of this book.

The web site of this book :

This e-book is available on the Web, world wide at:

www.Islamforyou.in, www.Quranforall.in

Price: Rs. 150/-

Printed and Published by :

SALAAM CENTRE

65, Ist main, S.R.K. Garden, Jayanagar, Bangalore – 560 041

Branch: #5, Rich homes, Richmond raod, Bangalore - 560 025

Contact: +91 99011 29956 / +91 99451 77477 / 080-2663 9007

Email: salaamcentrebangalore@gmail.com

विषय सूची

1. इस्लाम 1
2. अल्लाह का एकत्व, इस्लामी आस्था का सुदृढ़ आधार 5
★ 'अल्लाह', उसके नाम का अर्थ ही प्रेम है 10
★ तौहीद 13
★ मानव जीवन पर तौहीद का प्रभाव 15
3. 'रिसालः' पैग़म्बरवाद 19
★ अल्लाह के पैग़म्बर 21
4. फ़रिश्ते 23
5. मृत्यु के पश्चात जीवन 25
★ विश्वास करें या न करें 29
6. अवतरित पुस्तकें 33
★ क़ुरआन 'अल्लाह का प्रभावशाली भाषण' 35
★ क़ुरआन का प्रभाव 44
★ वह्य अवतरण एक आसमानी सम्प्रेषण 45
★ क़ुरआन का संकलन 46
★ पैग़म्बर की जीवनी 49
★ हदीस 50
★ सुन्नत 51
7. ईमान (आस्था) की प्रासंगिकता 53
★ इस्लाम के पाँच स्तम्भ 55
★ धार्मिक कर्मकाण्ड और इस्लाम में समर्पित जीवन 57
★ मस्जिद 58
★ पूरी धरती मस्जिद है 60
★ अज़ान 61
★ वज़ू या अर्द्ध स्नान 63
★ सलात (नमाज़) 66
★ नमाज़ कैसे अदा करें 69
★ नमाज़ का महत्व 75
★ रमज़ान और रोज़ा 77
★ ज़कात, ग़रीबों का अधिकार 81
★ ज़कात के व्यापक प्रभाव 82
★ हज या तीर्थयात्रा 85
★ विश्व-बन्धुत्व 87
8. इस्लाम की मौलिक धारणाएँ 89
★ जीवन की धारणा 90
★ गुनाह (पाप) की धारणा 92

★ तौबा, पश्चाताप की धारणा 94
★ 'ईमान', आस्था की धारणा 96
★ प्रकृत्ति की धारणा 98
★ ख़लीफ़ा, मनुष्य अल्लाह का प्रतिनिधि 99
★ नेकी की धारणा 100
★ 'मध्यमार्ग' सन्तुलन की धारणा 101
★ सेवा की धारणा 103
★ स्वतन्त्रता की धारणा 105
★ समता की धारणा 107
★ बन्धुत्व की धारणा 109
★ न्याय की धारणा 110
★ 'इल्म' ज्ञान की धारणा 112
★ शान्ति की धारणा 113
★ नैतिकता की धारणा 114
★ 'जेहाद' की धारणा 117
★ 'शरीअत' इस्लामी क़ानून की धारणा 118
★ शरीअत के उद्देश्य 119
★ 'फ़िक़्ह', विधान के इस्लामिक सिद्धान्त की धारणा 120
★ 'इज्तेहाद', क़ानून में परिवर्तन के सिद्धान्त 121
★ 'शूरा', परामर्श की धारणा 122
★ 'हलाल और हराम' 124

9. व्यवहारिक जीवन में इस्लाम 127
★ इस्लाम में पारिवारिक जीवन 127
★ माता-पिता के प्रति कर्त्तव्य 128
★ महिलाएँ 130
★ पिता 136
★ बच्चे 137
★ वयोवृद्ध 138
★ सगे-सम्बन्धी 139
★ इस्लाम में सामाजिक जीवन 141
★ पड़ोसी 141
★ निर्धन 143
★ रोगी 143
★ नौकर 144
★ विकलांग 144
★ अनाथ 145
★ सभी रचनाओं के लिए दया 147
★ चिड़ियों और पशुओं के प्रति व्यवहार 148
★ हरी-भरी धरती 151

★ हरित क्षेत्र 152
★ प्राकृतिक संसाधन 153
★ व्यक्तिगत जीवन 155
★ नैतिक अस्तित्व 158
★ त्याग 158
★ मुस्कुराना दान है, सामाजिक न्याय 159
★ दान और परोपकार, मुलाकात और अभिवादन 160
★ सज्जनता और सद्आचरण, विनम्रता और ईमान, अल्लाह अच्छाई को पसन्द करता है, दया 161
★ वास्तविक प्रेम, सहयोग, आभार, वादों को पूरा करना 162
★ ईमानदारी, सच बोलना, अमानतदारी 163
★ सामाजिक परिवर्तन, शालीनता, बातचीत में सज्जनता, व्यापार 164
★ दूसरों की कमियाँ छिपाना, किसी के घर में प्रवेश से पहले उससे अनुमति लो, सफाई आधा ईमान है, बन्धुत्व 165
★ 'कमज़ोरों के मित्र बनो', उच्च शिक्षा और ज्ञान 166
★ चरित्र और व्यवहार, पीठ पीछे बुराई, सन्देह 167
★ झूठ बोलना, गुमान करना पाप है 168
★ अपमानजनक पाप, फ़िज़ूलखर्ची 169
★ अहंकार, कामनाएँ, ईर्ष्या, व्यंग करना 170
★ जमाखोरी, अवैध सम्पत्ति 171
★ बेईमानी और धोखा, शरारत और भ्रष्टाचार, लालच 172
★ भ्रष्टाचार, शराब और जूआ 174
★ रिबा या व्याज या सूदखोरी 175
★ गर्भपात और गरीबी का भय 176
★ नस्लवाद 178
★ आतंकवाद 179
★ इस्लामी जीवन के कुछ विशेष पहलू 181
★ भोजन और पेय पदार्थ 181
★ मादक पेय हराम हैं 182
★ परिधान (वस्त्र) 183
★ त्यौहार, ईदुल फित्र, ईदुल अज़हा 184
★ जुमे की नमाज़ 185
★ मुस्लिम संसार 186
★ निष्कर्ष 188
★ आभार 189
★ सन्दर्भ सूची 190

पैग़म्बर (सल्ल0) और आपके साथियों के नाम पढ़ने के शिष्टाचार

पैग़म्बर मुहम्मद का नाम आने पर ''सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम'' (उनके ऊपर अल्लाह की सलामती और कृपा हो) कहना।

जब भी पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल0) के नाम का उल्लेख हो तो मुसलमानों के लिए अनिवार्य है कि वह आप पर दुरुद भेजें। इसीलिए जब भी आप (सल्ल0) का नाम आता है तो यह दुआ ''सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम'' (उनके ऊपर अल्लाह की सलामती और कृपा हो) आती है।

पैग़म्बर मुहम्द (सल्ल0) के लिए जो दुआएँ पढ़ी जाती हैं उनसे इस इस्लामी विश्वास को बल मिलता है कि मुहम्मद (सल्ल0) पूज्य नहीं हैं- बल्कि एक मनुष्य हैं, हालाँकि आप मानवता के नायक हैं और सम्पूर्ण मानवता के लिए पैग़म्बर हैं लेकिन आपको भी अल्लाह की दया और कृपा की आवश्यकता है- यह अति महत्वपूर्ण दुआ है जो मुसलमानों के मन में पैग़म्बर (सल्ल0) की प्रतिष्ठा का स्मरण कराती है और उन्हें चेतावनी देती है कि वह पैग़म्बर को किसी भी तरह पूज्य का स्थान प्रदान करने या अल्लाह के समकक्ष ठहराने से बचें। यह मौलिक रूप से तौहीद''एकत्ववाद'' के इस्लामी मौलिक विश्वास की रक्षा करती है।

पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल0) के साथियों (सहाबा) के लिए रज़िय अल्लाहु तआला अन्हु (रज़ि0) अर्थात उनसे अल्लाह प्रसन्न हुआ कहना।

पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल0) के साथियों के नाम का उल्लेख होने पर यह दुआ 'रज़िय अल्लाहु तआला अन्हु' पढ़ना उनके सम्मान के लिए मुसलमानों से अपेक्षित हैं।

1

इस्लाम

इस संसार में, प्रत्येक धर्म का नामकरण या तो इसके संस्थापक के नाम पर अथवा इसके समुदाय या राष्ट्र जिसमें इसकी उत्पत्ति हुई थी, के आधार पर हुआ। उदाहरण के लिए ईसाई धर्म ने अपना नाम अपने पैग़म्बर हज़रत ईसा मसीह के नाम पर रखा, बौद्ध धर्म का नाम उसके संस्थापक गौतम बुद्ध के नाम पर पड़ा। ज़रदुश्ती धर्म का नाम उसके संस्थापक ज़रदुश्त के नाम पर रखा गया और यहूदी धर्म का नाम जूदिया देश के यहूदा क़बीले के नाम पर पड़ा, क्योंकि यह धर्म उसी देश में आया था। इस्लाम के अतिरिक्त सभी धर्मों के नामकरण के ऐसे ही कारण रहे हैं। इस्लाम धर्म को यह विशेषता प्राप्त है कि इसका नाम किसी विशेष व्यक्ति या समुदाय या देश से सम्बन्धित नहीं है। इस्लाम धर्म किसी मानव मस्तिष्क की पैदावार भी नहीं है। इस्लाम का असली संस्थापक और कोई नहीं बल्कि स्वयं अल्लाह है, और इसके उदय की तिथि भी इस्लाम के पहले पैग़म्बर, पैग़म्बर आदम (अलै0) से जुड़ी हुई है।

इस्लाम अरबी भाषा का शब्द है। इस्लाम का अर्थ समर्पण और आज्ञापालन है। समर्पण का अर्थ अल्लाह के आदेशों को स्वीकार करना है। आज्ञापालन का अर्थ अल्लाह के आदेशों को व्यवहार में लाना अथवा उनपर अमल करना है। अल्लाह के लिए समर्पण और उसका आज्ञापालन करने से शान्ति प्राप्त होती है। इसीलिए इस्लाम का अर्थ शान्ति भी है। जो व्यक्ति इस्लामी जीवन-शैली को स्वीकार करता है और उसके अनुसार जीवन व्यतीत करता है, उसको मुसलमान कहा जाता है।

अल्लाह के लाभकारी क़ानून का पालन करके उसकी मर्ज़ी के सामने समर्पण और आज्ञापालन शान्ति और भाई-चारे का सबसे अच्छा कवच है। यह एक तरफ मनुष्य को अपने और दूसरे व्यक्तियों के बीच शान्ति स्थापित करने और दूसरी तरफ मानव

समुदाय और अल्लाह के बीच सम्बन्ध बनाने में मदद करता है। यह प्रकृत्ति के विभिन्न तत्वों के बीच सामंजस्य स्थापित करता है। जब हम अपने चारो तरफ देखते हैं तो हम पाते हैं कि सभी चीज़ें सूरज, चाँद, सितारे, ऊँचे पहाड़, विशाल और अथाह समुद्र अल्लाह के एक क़ानून का पालन कर रही हैं। हम उनके बीच अव्यवस्था और टकराव नहीं पाते। हर चीज़ अपने उपयुक्त स्थान पर मौजूद रहती है। हम अल्लाह द्वारा पैदा की हुई प्राकृतिक व्यवस्था में पूरी क्रमबद्धता और सामंजस्य देखते हैं। सूरज पूर्व में निकलता है और पश्चिम में छिप जाता है और इस क़ानून के पालन में कभी कोई अपवाद नहीं हुआ। चाँद और तारे रात में चमकते हैं। रात गुज़रती है, एक नया दिन आता है और इसी तरह प्रक्रिया चलती रहती है। फूल खिलते हैं और बसन्त ऋतु में पेड़ों पर हरी पत्तियाँ निकल आती हैं। इस्लाम के अनुसार मनुष्य के अतिरिक्त संसार की हर चीज़ या संसार की हर प्रक्रिया अल्लाह के क़ानून द्वारा संचालित हो रही है। यही प्रक्रिया पूरे भौतिक संसार को निश्चित रूप से अल्लाह का आज्ञाकारी और उसके क़ानून के सामने समर्पण करने वाला बना देती है, जिसका अर्थ यह भी है कि यह भौतिक संसार इस्लाम की स्थिति में है या यह भी कह सकते हैं कि मुस्लिम है। भौतिक संसार की अपनी कोई पसंद नहीं है। उसे अपने फैसले से किसी ऐच्छिक प्रक्रिया का पालन नहीं करना है, बल्कि वह अपने रचयिता अल्लाह के क़ानून का आज्ञापालन कर रहा है। यही इस्लाम का क़ानून या समर्पण है।

हर चीज़ का एक तयशुदा कोर्स है जिसका उल्लंघन नहीं किया जाता। क्या कभी आपने प्रकृति की इन चीज़ों द्वारा अल्लाह के क़ानून का उल्लघंन करते हुए पाया है? वास्तव में नहीं। क्यों? इसका साधारण उत्तर यह है कि उन्हें अल्लाह का आज्ञापालन करने के लिए ही बनाया गया है। उनकी कोई अपनी पसंद नहीं है बल्कि उन्हें आज्ञापालन करना ही है। यही कारण है कि हम प्राकृतिक व्यवस्था में शाश्वत शान्ति और क्रमबद्धता देख रहे हैं।

मनुष्य प्रत्येक रचना से भिन्न हैः अल्लाह ने हमें ज्ञान, बुद्धि और सही और ग़लत के बीच चुनाव करने की योग्यता प्रदान की है। अल्लाह ने हमें केवल यह योग्यताएँ देकर बस नहीं किया। उदाहरण के लिए हम भूल जाते हैं कि उसने हमारे पास लगातार याद दिहानी भेजने की व्यवस्था की है। अल्लाह ने हमारे मार्गदर्शन के लिए पैग़म्बर और किताबें भेजने की व्यवस्था की। एक मुसलमान बिना किसी भेद के हज़रत मुहम्मद (सल्ल0) से पहले आये हुए सभी पैग़म्बरों को मानता है। वह मानता है कि

अल्लाह के वे सभी पैग़म्बर और उन पैग़म्बरों के वे सभी अनुयायी मुसलमान थे और उनका धर्म इस्लाम था, और इस्लाम अल्लाह द्वारा दिया हुआ पूरे संसार का एक मात्र सच्चा धर्म है। (देखिए, क़ुरआन 2:128-140; 3:78-85; 17:42-44; 31:22; 42:13) अल्लाह के अन्तिम पैग़म्बर हज़रत मुहम्मद (सल्ल0) हैं और इन्सान के मार्गदर्शन के लिए अन्तिम किताब क़ुरआन मजीद है।

अल्लाह ने अपना आज्ञापालन करने के लिए हमें मजबूर नहीं किया है। उसने हमें चुनाव करने का अधिकार दिया है कि हम उसका आज्ञापालन करें या उसकी अवज्ञा करें। क्यों? इसलिए कि वह हमारी परीक्षा लेना चाहता है। इस परीक्षा के बाद एक पुरस्कार और दण्ड का दिन आएगा। यही फैसले का दिन होगा। इस परीक्षा में जो लोग पास होंगे उन्हें जन्नत का शाश्वत आनन्द और संतुष्टि प्राप्त होगी और जो लोग इस परीक्षा में फेल होंगे उन्हें जहन्नम की भयानक सज़ा झेलनी पड़ेगी। हम अल्लाह की इबादत और आज्ञापालन करके यह पुरस्कार पा सकते हैं और उस दण्ड से बच सकते हैं।

सभी मनुष्य अपनी प्रकृति के अनुसार अच्छी चीज़ों को पसन्द करते हैं और बुरी चीज़ों को नापसंद करते हैं। उदाहरण के लिए हम सभी सच्चाई को पसन्द करते हैं और झूठ से घृणा करते हैं। एक झूठा भी अपने आप को झूठा कहलाना पसन्द नहीं करता! क्यों? इसलिए कि हम अपने दिलों में जानते हैं कि झूठ बोलना बुरी बात है। इसी तरह दूसरों की सहायता करना, दया का व्यवहार करना, विनम्रता, माता-पिता और गुरु का सम्मान, ईमानदारी और हर तरह के अच्छे व्यवहार को सदैव पसंद किया जाता है और उनकी प्रशंसा की जाती है। लेकिन अभद्रता, धोखा, झूठ, दूसरों के दिल को चोट पहुँचाना, अपने माता-पिता और गुरु की अवज्ञा करना, बुरे नाम लेना और दूसरे बुरे व्यवहारों को सभी लोग नापसंद करते हैं। इसलिए हम कह सकते हैं कि मनुष्य की प्रकृति अच्छी चीज़ों को पसंद करती है और ग़लत चीज़ों को नापसंद करती है। अच्छी चीज़ों को क़ुरआन की भाषा अरबी में मअरूफ कहा जाता है और ग़लत चीज़ों को मुन्कर कहा जाता है।

मनुष्य की प्रकृत्ति यह भी है कि वह शान्ति को पसंद करता है और अशांति से घृणा करता है। जिस तरह अशांति, अल्लाह की अवज्ञा का परिणाम है उसी तरह शान्ति अल्लाह के क़ानून का पालन करने से प्राप्त होती है। इस्लाम ने यही शान्ति स्थापित की जो मनुष्य की प्रकृत्ति का अंग है। इसलिए इस्लाम को प्रकृत्ति का धर्म कहा जाता है, और इसी का नाम अरबी भाषा में *दीनुल फितरः* है।

2

अल्लाह का एकत्व
इस्लामी आस्था का सुदृढ़ आधार

जब अन्तिम पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल0) से अल्लाह के बारे में पूछा गया, तो इसका सीधा उत्तर अल्लाह की ओर से क़ुरआन में अवतरित हुआः

"कहोः "वह अल्लाह यकता है, अल्लाह निरपेक्ष (और सर्वाधार) है, न वह जनिता है, और न जन्य, और न कोई उसका समकक्ष है।"

(क़ुरआन, 112:1-4)

यह अल्लाह का स्पष्ट कथन है, जिसमें अल्लाह ने स्वयं मानवता के सामने अपना विवरण प्रस्तुत किया है और सन्देह के लिए कोई अवसर नहीं छोड़ा है। अल्लाह एक है और वह अपनी सभी रचनाओं से ऊपर है, और वह सभी चीज़ों पर सामर्थ्यवान है।

"अल्लाह, कि जिसके सिवा कोई पूज्य-प्रभु नहीं, वह जीवन्त सत्ता है, सबको सँभालने और क़ायम रखनेवाला है। उसे न ऊँघ लगती है और न निद्रा। उसी का है जो कुछ आकाशों में है और जो कुछ धरती में है। कौन है जो उसके यहाँ उसकी अनुमति के बिना सिफ़ारिश कर सके? वह जानता है जो कुछ उनके आगे है और जो कुछ उनके पीछे है। और वे उसके ज्ञान में से किसी चीज़ पर हावी नहीं हो सकते, सिवाय उसके जो उसने चाहा। उसकी कुर्सी (प्रभुता) आकाशों और धरती को व्याप्त है और उनकी सुरक्षा उसके लिए तनिक भी भारी नहीं और वह उच्च, महान है।" (क़ुरआन, 2:255) (अल्लाह के गुणों और

क्षमताओं को बताने वाली इस पवित्र आयत को आयतुल कुर्सी कहा जाता है)

धर्म, चाहे जो भी हो, मान्यताओं और परम्पराओं का एक समूह होता है- इनमें मुख्य बिन्दु अल्लाह की धारणा है। एक बार यदि यह मुख्य बिन्दु धुँधला हो जाए, पूरी व्यवस्था धराशायी हो जाती है। इस्लाम का मूल मन्त्र जैसा कि पैग़म्बर मुहम्मद(सल्ल0) और आपसे पहले के अन्य सभी पैग़म्बरों ने बताया है, यह सिद्धान्त है कि ''अल्लाह के सिवा कोई पूज्य नहीं, वह हर चीज़ का पैदा करने वाला और सँभालने वाला है। वह सर्वशक्तिमान और सब कुछ जानने वाला है। उसकी खुदाई में कोई साझीदार नहीं है।

उसके और उसकी रचनाओं के बीच कोई मध्यस्थता करने वाला नहीं है। यही वास्तव में इस्लाम की एकेश्वरवादी धारणा है जो निरपेक्ष, उचित और किसी बात में समझौता न करने वाली है। कोई भी मनुष्य या किसी भी देवता को अल्लाह और उसकी रचनाओं के बीच मध्यस्थता करने की अनुमति नहीं है चाहे वह सजीव हो या निर्जीव। अल्लाह सदैव से है और सदैव रहेगा। वह अन्तिम सच्चाई है। अल्लाह के सिवा किसी भी उपास्य को न पुकारो। उसके अतिरिक्त कोई स्वामी नहीं। उसकी छवि (चेहरे)के अतिरिक्त हर चीज़ नाश हो जाएगी।

अल्लाह अरबी भाषा का शब्द है जो अल-इलाह का संक्षिप्त रूप है। वह अल्लाह, केवल एक ही अल्ल्लाह है। वही पैदा करने वाला, सँभालने वाला, नष्ट करने वाला और क़ायनात को फिर से बनाने वाला है। वह दयावान और सबसे बड़ा कृपाशील है। वह प्रभु है, पवित्र है, सर्वशक्तिमान है, सर्वज्ञ है, विवेकशील, न्याय करने वाला, क्षमाशील और स्नेह करने वाला है। वही प्रथम है, वही अन्तिम है, सदैव से है और सदा रहने वाला है, और प्रत्यक्ष भी है और परोक्ष भी। वह अल्लाह है, सत्य है और अन्तिम वास्तविकता है..... वह अल्लाह एक और अकेला है और उसके जैसा कोई नहीं।

" एक अल्लाह एक मानवता "

"और जब तुमसे मेरे बन्दे मेरे सम्बन्ध में पूछें, तो मैं तो निकट ही हूँ, पुकारनेवाले की पुकार का उत्तर देता हूँ जब वह मुझे पुकारता है, तो उन्हे चाहिये कि वे मेरा हुक्म मानें और मुझ पर ईमान रखें, ताकि वे सीधा मार्ग पा लें।"

(क़ुरआन, 2:186)

और क़ुरआन में फिर कहा गया है:

"हम जानते हैं जो वसवसे उसके जी में आते हैं।
और हम उससे उसकी गर्दन की रग से भी अधिक
निकट हैं।" (क़ुरआन, 50:16)

इस प्रकार मनुष्य को, इस प्रकार प्रस्तुत करना जैसे वह अल्लाह के आमने-सामने हो और अल्लाह और मनुष्य के बीच कोई आध्यात्मिक या व्यक्तिगत तत्व मध्यस्थ न हो। इस्लाम ने निश्चित रूप से मनुष्य और अल्लाह के बीच भेद पर ज़ोर दिया है। यह इस्लाम की अद्वितीय विशेषता यह है कि वह किसी पुरोहितवाद के अस्तित्व को नहीं मानता जो इन्सान और अल्लाह के बीच हस्तक्षेप करने की योग्यता रखता हो।

अल्लाह के मनुष्य से निकट होने की इस धारणा के सम्बन्ध में, क़ुरआन में एक अनिवार्य नियम यह है कि अल्लाह और मनुष्य के बीच रचयिता और रचना होने के सम्बन्ध में यह बताया गया है कि अपनी उत्पत्ति के अनुसार सभी इंसान समान हैं और इससे मानव बन्धुत्व की धारणा प्रतिबिम्बित होती है। इस प्रकार इस्लाम एक अल्लाह और एक मानवता पर आधारित सबसे अधिक आदर्श धारणा प्रस्तुत करता है।

'' अल्लाह की सत्ता और प्रभुता अविभाज्य है ''

जैसा कि हम चारो तरफ देखते हैं कि प्रत्येक परिवार में परिवार का एक मुखिया होता है। प्रत्येक विद्यालय में एक प्रधान अध्यापक होता है, प्रत्येक राज्य का नेतृत्व एक राष्ट्रपति या प्रधानमन्त्री करता है और प्रत्येक नगर का एक मेयर या प्रशासक होता है। इसी तरह किसी उत्पाद के पीछे कोई उत्पादक होता है और किसी कलाकृति के पीछे कोई कलाकार होता है। जब हम किसी सुन्दर या अद्‌भुत वस्तु को देखते हैं तो हमारे मन में तुरन्त उसके बनाने वाले का विचार आता है। इसी आधार पर यह समझा जा सकता है कि यह व्यापक क़ायनात, आसमान की एक दरार विहीन छत, जो हम सबके ऊपर झूल रही है और ये पहाड़ जो धरती को सन्तुलित किए हुए हैं, ये समुद्र जो ज्वार-भाँटा की ऊर्जा के बुलबुले उठाते हैं, ये जंगल जो अपने हरे आवारण से हमारी आँखों को ठण्डक देते हैं, नदियाँ जो साँप की तरह धरती पर रेंगती हैं। आकाशगंगा की निरन्तर गति जो रात को दिन में बदलती है और दिन को रात में, और हमें गर्मी से जाड़े की ओर और जाड़े से गर्मी की ओर लगातार वापस लाती और ले जाती है, समुद्रों से भाप बनना, जो पानी का चक्र चलाता है और उसे फसलों तक ले जाता है, इससे ग़ल्ला पैदा होता है और लगातार ऊर्जा के स्रोतों को पूरी मानवता और दूसरे जीवधारियों के लिए चार्ज करती रहती है। यह सभी चीज़ें हमारे मन को एक सर्वोच्च स्वामी के अस्तित्व की ओर आकर्षित करती हैं, जिसके बल पर क़ायनात की पूरी व्यवस्था, एक क्रमबद्ध ढंग से चल रही है।

इसका तार्किक निष्कर्ष यह है कि हर चीज़ को एक व्यवस्था में पिरोए रखने में कोई ताक़त अवश्य काम कर रही होगी। इस सुन्दर प्रकृति के पीछे कोई महान कलाकार अवश्य होना चाहिए जो क़ायनात की हर चीज़ की योजना एक पैमाने के अनुसार बना रहा होगा और उसे कोई उद्देश्य प्रदान कर रहा होगा। उसकी कला और डिज़ाइन सबसे उत्कृष्ट होगी। सच्चे ईमान वाले उस कलाकार को पहिचानते हैं और उसे अल्लाह या खुदा कहकर पुकारते हैं। वे उसे खुदा कहकर पुकारते हैं क्योंकि वह रचना करने वाला और संसार का मुख्य योजनाकार है। वह जीवन को आरम्भ करने वाला और तमाम मौजूद चीज़ों का देने वाला है। वह कोई इन्सान नहीं है क्योंकि कोई इन्सान किसी इन्सान की रचना नहीं कर सकता। वह कोई जानवर नहीं और न वह कोई पेड़-पौधा

है। न वह कोई मूर्ति है और न वह किसी तरह की कोई प्रतिमा है क्योंकि इनमें से कोई भी चीज़ अपने आप को या दूसरी चीज़ों को पैदा नहीं कर सकती। वह कोई मशीन नही है। वह न तो सूरज है और न वह चाँद है या कोई और सितारा, क्योंकि यह चीज़ें स्वयं किसी और के आदेश के अधीन चलती हैं। वह इन सभी चीज़ों से ऊपर है, क्योंकि वह इन सभी चीज़ों का बनाने वाला और उनका सँभालने वाला है।

किसी चीज़ का बनाने वाला उस चीज़ से भिन्न और बड़ा होना चाहिए जिसको वह बनाता है। हम यह भी जानते हैं कि कोई भी चीज़ अपने आप जीवित नहीं हो सकती और यह अद्‌भुत संसार अपने आप की रचना स्वयं नहीं कर सकता या अचानक किसी घटना द्वारा स्वयं अस्तित्व में नहीं आ सकता। संसार में लगातार होते हुए परिवर्तन सिद्ध करते हैं कि जो रचनाएँ हैं और जिन सभी रचनाओं को बनाया गया है वह किसी न किसी बनाने वाले द्वारा बनाई गयी हैं।

अल्लाह की सत्ता और प्रभुता अविभाज्य है। वह सर्वशक्तिमान है और अपनी रचनाओं और रचना पर पूरा नियन्त्रण रखता है। उसने अपनी सत्ता का न तो बँटवारा किया है और न ही अपनी क़ायनात की प्रक्रिया को विभिन्न हिस्सों में बाँटा है। उसने सूरज और चाँद को चलाने की ताकत किसी को नहीं दी है, या रचनाओं के मामलों को किसी और एजेण्ट के हाथ में नहीं दिया है। यदि सत्ता का कोई इस तरह का बँटवारा होता तो क़ायनात में निश्चित रूप से बुरी तरह टकराव और अव्यवस्था फैलती और यह अव्यवस्था संसार के अन्दर जो क्षमता पायी जाती है, उसे छीन लेती।

संसार को बनाने वाला और सँभालने वाला, मनुष्य को बनाने वाला और उसे जीविका देने वाला, प्रकृत्ति की सक्रिय शक्ति और प्रभावकारी सत्ता सभी एक हैं, और उसे अल्लाह या ईश्वर कहा जाता है। वह सभी रहस्यों का रहस्य है और संसार की सभी चीज़ों में सर्वोच्च है।

' अल्लाह '
उसके नाम का अर्थ ही प्रेम है

मुसलमान अल्लाह को एक और केवल एक उपास्य मानते हैं जिसे पूरा समर्पण प्राप्त है और उसे सभी चीज़ों से अधिक श्रद्धा दी जाती है और इसमें उपासना की इस्लामी धारणा भी निहित है।

वास्तव में इस्लाम में इबादत का अर्थ हफ्ते में एक दिन काम करना नहीं है। बल्कि यह हमारे रचयिता और संसार को चलाने वाले के प्रति श्रद्धा या अपार प्रेम का लगातार प्रदर्शन है। उसकी इबादत केवल यह नहीं है कि हम अपना सिर उसके सम्मान और श्रद्धा में झुका दें, बल्कि यह भी है कि हम उसके आदेशों का पालन भी करें। ये आदेश प्यार भरे दिशा-निर्देश हैं जो उस हस्ती द्वारा दिए गए हैं जिससे हम प्यार करते हैं। वास्तव में जो हमसे प्यार करता है, ताकि सफलता, सम्मान और खुशहाली की ओर हमारा मार्गदर्शन किया जाए और हम निराशा, प्रकोप या भटकाव में न पड़े। ऐसा ही उन माता-पिता के साथ होता है जो अपने बच्चों के लिए नियम बनाते हैं जिसका उद्देश्य यह नहीं होता कि उनका दमन करना है या उनको कठिनाई में डालना है बल्कि इसका उद्देश्य पूर्णतः इसके विपरीत है, और वह यह है कि उनकी रक्षा की जाए, उनको बचाया जाए और उनका अन्तिम सफलता की ओर मार्गदर्शन किया जाए।

जब पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल0) के साथियों ने आपसे अल्ल्लाह के बारे में पूछा तो अल्ल्लाह ने स्वयं इन सुन्दर शब्दों में उत्तर दिया, जिन्हें क़ुरआन में रखकर अमर कर दिया गया हैः

"और जब तुमसे मेरे बन्दे मेरे सम्बन्ध में पूछें, तो मैं तो निकट ही हूँ, पुकारनेवाले की पुकार का उत्तर देता हूँ जब वह मुझे पुकारता है, तो उन्हे चाहिये कि वे मेरा हुक्म मानें और मुझ पर ईमान रखें, ताकि वे सीधा मार्ग पा लें।"

(क़ुरआन, 2:186)

एक मुसलमान जानता है कि वह ऐसे अल्लाह से मामला कर रहा है जो उससे प्यार करता है और उसके लिए अच्छी चीज़ें पसन्द करता है। वास्तव में प्यार का सबसे ऊँचा प्रदर्शन दया और क्षमा है जिसका वादा अल्लाह ने उन लोगों के लिए किया है जो उसके ऊपर विश्वास करते हैं और उसके आदेशों के अनुसार कर्म करते हैं।

उसने न केवल अपने बन्दों और अपने श्रद्धालुओं से अपनी अपार क्षमाशीलता का वादा किया है, बल्कि उसने यह भी वादा किया है कि उनके दिलों को प्यार से भर देगा जैसा कि क़ुरआन के निम्नलिखित शब्दों में कहा गया हैः

"निःसन्देह जो लोग ईमान लाए और उन्होंने अच्छे कर्म किये शीघ्र ही रहमान उनके लिए प्रेम उत्पन्न कर देगा।" (क़ुरआन, 19:96)

मुसलमान अपने सभी काम इस दुआ के साथ प्रारम्भ करते हैं, "अल्लाह के नाम से जो बड़ा दयावान और अत्यन्त कृपाशील है।" मुसलमानों की यह दुआ याद दिलाती है कि अल्लाह की दया, प्यार और कृपा वास्तव में सभी वस्तुओं पर आच्छादित और उनमें निहित है। यह इसलिए भी पढ़ी जाती है कि मुसलमान अपने आप को सन्तुष्ट कर सकें और अपने कर्मों में बरकत प्राप्त करें और यह दुआ इस बात का संकेत भी होती है कि उनका यह कर्म पूरी तरह से केवल एक अल्लाह के लिए समर्पित है। मुसलमानों को आदेश दिया गया है कि वह अपने सभी कामों में अल्लाह के लिए इस प्यार और दया का प्रदर्शन उसी तरह करें, जिस तरह वह हमसे प्यार करता है और हम पर दया करता है। वह केवल अपने जैसे इन्सानों से ही प्यार न करें, बल्कि दूसरे जानदारों और पर्यावरण से भी प्यार करें। जैसा कि ऊपर बताया गया है, इस्लाम के दोनों पवित्र स्रोतों क़ुरआन और पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल0) की शिक्षाओं में प्यार और दया अधिकतर एक सामान्य विषय है।

जब कोई चिन्तन करता है तो उसे यह भी पता चलता है कि मनुष्यों के बीच प्यार का बंधन मौजूद है, अधिकतर लोग सहमत होंगे कि यह प्यार का वही बंधन है जो माँ और उसके बच्चों में होता है। एक बार पैग़म्बर (सल्ल0) ने इसी उदाहरण द्वारा अपने साथियों के सामने अल्लाह की बड़ाई और दया का चित्रण किया जो उसका आज्ञापालन करते हैं और उसकी इबादत करते हैंः

एक बार पैग़म्बर (सल्ल0) ने देखा कि एक औरत बैचेनी से अपने खोए हुए

बच्चे को तलाश कर रही है। जब उसने उसे पाया तो उठा लिया और उसे अपने पेट से चिपका लिया और उसे दूध पिलाया। उस समय अल्लाह के पैग़म्बर (सल्ल0) ने जो लोग उनके आस-पास थे, उनसे पूछाः ''क्या तुम सोच सकते हो कि यह औरत अपने बच्चे को जहन्नम में फेंक सकती है?'' आपके साथियों ने कहाः ''अल्लाह की क़सम! वह नहीं फेंक सकती''। इसपर आपने फ़रमायाः ''अल्लाह अपने बन्दों के लिए उससे अधिक दयावान है जितनी दयावान यह महिला अपने बच्चे के लिए है।''

इसी धारणा के अनुसार इस्लाम में अल्लाह अपने आप को 100 विभिन्न नामों से पुकारता है। अल्लाह के ये 100 नाम उसकी योग्यताओं और विशेषताओं की ओर संकेत करते हैं। यह देखना रोचक है कि जिन दो नामों को अल्लाह अक्सर अपने नाम के साथ लिया जाना पसंद करता है वह दोनों नाम अल-रहमान (अत्यन्त दयावान) और अल-रहीम (अत्यन्त कृपाशील) हैं। इस प्रकार क़ुरआन की पहली आयत या जिस आयत से क़ुरआन प्रारम्भ होता है वह यही है ''अल्लाह के नाम से जो अत्यन्त दयावान और बहुत कृपाशील है।''

तो इस तरह इसका अनुकरण करते हुए अल्लाह की दयालुता का वर्णन क़ुरआन में बार-बार किया जाता है। जिन जगहों पर अल्लाह ने अपने अल-रहमान होने का उल्लेख किया है, उनकी संख्या 50 बार है और जिन जगहों पर अल्लाह ने अपनी कृपा का उल्लेख किया है वह 40 बार आए हैं। अल्लाह ने अपने आप को अत्यन्त कृपाशील अर्थात अल-रहीम 55 बार कहा है यह भी महत्वपूर्ण है। इस प्रकार अल्लाह की दयालुता का वर्णन क़ुरआन में 150 जगहों पर आया है।

इसकी तुलना इस बात से कीजिए कि अल्लाह ने क़ुरआन में अपने प्रकोप और क्रोध का उल्लेख केवल 19 बार किया है और हक़ीकत यह है कि अल्लाह ने अपने आप को कभी ऐसे नाम से नहीं पुकारा है जिसमें क्रोध और प्रकोप की विशेषताएँ हैं। इससे भी बढ़कर अल्लाह ने अपने आप को सबसे बड़ा क्षमाशील क़ुरआन में लगभग 100 बार कहा!

तौहीद

यह घोषणा ''अल्लाह के अतिरिक्त कोई उपास्य नहीं'' तौहीद कही जाती है। तौहीद जीवन, क़ायनात और हर चीज़ के सम्बन्ध में इस्लामी दृष्टिकोण का प्रतिनिधित्व करती हैः यह मुसलमानों का वैश्विक दृष्टिकोण है।

अल्लाह का एकत्व विभिन्न प्रकार के व्यक्तियों की एकता में प्रतिबिम्बित होता है। क्योंकि हम सभी लोग अल्लाह द्वारा बनाए गए हैं। हम सब उसकी दृष्टि में बराबर हैं। एक नस्ल और दूसरी नस्ल, गरीब और अमीर, ताक़तवर और कमज़ोर, मर्द और औरत के बीच कोई अन्तर नहीं है। इस्लाम मानव समता के दृष्टिकोण के मामले मे किसी समझौते को बर्दाश्त नहीं करता।

इसके अतिरिक्त चूँकि हर चीज़ का मालिक अल्लाह है, कोई भी व्यक्ति किसी चीज़ पर अपना सम्पूर्ण अधिकार नहीं रखता। क़ायनात के सभी प्राकृतिक संसाधन भूमि और सम्पत्ति पूरी मानव नस्ल के लिए हैं और इसके सभी सदस्य इन संसाधनों का उपयोग करने का समान अधिकार रखते हैं। किसी भी व्यक्ति को दूसरों की तुलना में बड़ा हिस्सा लेने का अधिकार नहीं है क्योंकि वह स्वतन्त्र रूप से प्राकृतिक ताकत न तो पैदा करता है और न पैदा कर सकता है।

तौहीद पर ईमान

अल्लाह के एकत्व में विश्वास करना ईमान का मुख्य अंग है और क़ुरआन में इसका बहुत सुन्दर चित्रण किया गया हैः

''कहोः ''वह अल्लाह यकता है, अल्लाह निरपेक्ष (और सर्वाधार) है, न वह जनिता है, और न जन्य, और न कोई उसका समकक्ष है।''

(क़ुरआन, सूरः 112)

इसका अर्थ यह है कि अल्लाह सबकुछ जानने वाला, विवेकशील और

सर्वशक्तिमान है। वह दयावान है, कृपाशील है और प्यार करने वाला है। वह हर पल हमारे साथ होता है। वह हमें देखता है लेकिन हम उसे नहीं देखते। सदैव से है और सदैव रहेगा। वह पहला भी है और अन्तिम भी उसका न कोई साझीदार है, न बेटा और बेटी है और न वह किसी के द्वारा जन्मा है। वह हमें प्राण देता है और इसे वापस भी लेता है। मृत्यु के बाद सबको उसी की ओर लौट कर जाना है।

इस धरती पर जो कुछ है उसकी रचना अल्लाह ने की है। वह उनकी देख-रेख करता है और हर प्राणी की आवश्यकताओं की पूर्ति करता है। वह हमारे मार्गदर्शन का एक मात्र स्रोत है।

मुसलमान का पहला कर्त्तव्य यह है कि वह अपने ईमान की घोषणा करे। यह घोषणा करने के लिए व्यक्ति को शब्दों में कहना चाहिए और दिल में इसका विश्वास रखना चाहिए।

''ला इलाह इल्लल्लाह मुहम्मदु र्रसूलुल्लाह''
''अल्लाह के अतिरिक्त कोई उपास्य नहीं
और मुहम्मद अल्लाह के सन्देशवाहक हैं।''

एक व्यक्ति को सबसे पहले अपने दिल से किसी अन्य उपास्य या किसी अन्य श्रद्धा की वस्तु का विचार निकाल देना चाहिए। तभी उसके दिल में अल्लाह के एकत्व का विश्वास जड़ जमा सकता है।

आईए हम इसे एक उदाहरण से समझने का प्रयास करते हैं। मान लीजिए कि हमारे पास एक ज़मीन का टुकड़ा है, इसमें झाड़-झंकार भरा हुआ है और हम उसमें गेहूँ की फसल उगाना चाहते हैं। अब यदि हम इसको अच्छी तरह साफ किए बिना बहुत अच्छे क़िस्म के गेहूँ का बीज इस ज़मीन में बोते हैं तो हम गेहूँ की अच्छी फसल पाने की आशा नहीं कर सकते। तो हमें क्या करना चाहिए? हमें ज़मीन की जुताई करनी चाहिए। खर-पतवार और झाड़ियों को साफ करना चाहिए और बीज बोने से पहले ज़मीन तैयार करना चाहिए। तभी हम अच्छी फसल की आशा कर सकते हैं।

आईए हम ज़मीन की तुलना मनुष्य के हृदय से करते हैं। यदि हृदय झूठे भगवानों की आस्थाओं से भरा हुआ है तो हम उसमें अल्लाह के एकत्व, *तौहीद* के जड़ पकड़ने की आशा नहीं कर सकते। इसलिए इसे किसी अन्य उपास्य की धारणा से मुक्त करना होगा तभी अल्लाह का एकत्व 'तौहीद' उसमें जड़ जमा सकता है और ईमान की रोशनी उसमें चमक सकती है।

मानव जीवन पर तौहीद का प्रभाव

"ला इलाह इल्लल्लाह" या *तौहीद पर ईमान* या *इस बात पर ईमान कि अल्लाह के सिवा कोई उपास्य नहीं,* मानव जीवन पर इसका सुदूरवर्ती प्रभाव पड़ता है।

अल्लाह के एकत्व *'तौहीद'* में विश्वास करने वाला अपने आप को अल्लाह की मर्ज़ी के सामने समर्पित कर देता है और उसका सच्चा बन्दा और गुलाम बन जाता है। ज़मीन और आसमान में जो कुछ भी है सबको अल्लाह ने मनुष्य की सेवा के लिए पैदा किया है। जब व्यक्ति अल्लाह के आदेशों के सामने अपने आप को समर्पित कर देता है तो वह यह समझता और स्वीकार करता है कि अल्लाह ने अपनी सभी रचनाओं को हमारे लाभ के लिए पैदा किया है।

कुरआन जब यह कहता है तो इसी बात की पुष्टि करता है,

> *"क्या तुमने देखा नहीं की धरती में जो कुछ भी है अल्लाह ने तुम्हारे लिए वशीभूत कर रखा है?"* (कुरआन, 22:65)
>
> *"क्या तुमने देखा नहीं कि अल्लाह ने जो कुछ आकाशों में और जो कुछ धरती में है, सबको तुम्हारे काम में लगा रखा है और उसने तुम पर अपनी प्रकट और अप्रकट अनुकम्पाएँ पूर्ण कर दीं है?"* (कुरआन, 31:20)

यह दो आयतें स्पष्ट रूप से इशारा करती हैं कि अल्लाह ने ज़मीन और आसमान की हर चीज़ को इंसान के आराम के लिए पैदा किया है। दूसरी चीज़ों और रचनाओं द्वारा सेवा किए जाने का उपकार उसी समय स्पष्ट होगा जब हम तौहीद पर विश्वास करेंगे और उसके अनुसार कर्म करेंगे। इसका अर्थ यह है कि हमें अल्लाह का पूरी तरह आज्ञाकारी होना चाहिए।

1. यह ईमान वाले के अन्दर उच्च स्तर का आत्म-सम्मान, आत्म-विश्वास और सन्तोष पैदा करता है। वह जानता है कि अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए वह और किसी

पर नहीं बल्कि अल्लाह पर निर्भर है। उसे दृढ़ विश्वास होता है कि केवल अल्लाह ही उसकी सभी आवश्यकताओं को पूरा करने की क्षमता रखता है और उसके अतिरिक्त और कोई उसे लाभ या हानि पहुँचाने की क्षमता नहीं रखता।

2. एक ईमान वाले के अन्दर आत्म-विश्वास कब पैदा हो सकता है और उसके अन्दर आत्म-सम्मान कब पैदा हो सकता है? वह ऐसा उसी समय बन सकता है जब वह महसूस करे कि वह अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए और किसी पर नहीं बल्कि अपने रचयिता पर निर्भर है। वह परेशान नहीं होता क्योंकि वह जानता है कि यदि वह सच्चा आज्ञाकारी है तो अल्लाह उसकी सभी आवश्यकताओं को में ध्यान रखेगा।

3. यह विश्वास ईमान वाले को विनम्र और शालीन बना देता है। वह कभी अहंकारी नहीं होता। वह अच्छी तरह जानता है कि ज़मीन की हर चीज़ अल्लाह की है और उसे केवल अल्लाह के अधीन होने के कारण ही धरती की सारी रचनाओं पर नियन्त्रण प्राप्त है। वह अच्छी तरह यह भी जानता है कि उसके पास जो कुछ है वह अल्लाह की ओर से ही मिला है इसलिए गर्व या अहंकार पैदा होने का कोई कारण नहीं।

4. अल्लाह के एकत्व या तौहीद में विश्वास ईमानवाले को कर्त्तव्यपरायण और अनुशासित बनाता है। ईमान वाला जानता है कि इस जीवन और परलोक के जीवन में सफल होने के लिए उसे अपने रचयिता के आदेशों का पालन करना चाहिए। यह जागरुकता उसे अपने कर्त्तव्यों की अनदेखी करने और दूसरे गुनाहों से बचने के लिए जागरूक रखता है।

5. यह व्यक्ति को बहादुर और साहसी बनाता है यह उसके मन से मृत्यु का डर और सुरक्षा की चिंता को निकाल देता है। ईमान वाला जानता है कि अल्लाह ही निर्धारित समय पर मौत देगा और उसके अतिरिक्त कोई और ईमान वाले की सुरक्षा को हानि नहीं पहुँचा सकता। यदि वह आज्ञापालन करता है तो उसे चिन्ता करने की कोई आवश्यकता नहीं है। वह बिना किसी डर के अपने कर्त्तव्यों का पालन करता रहता है।

6. तौहीद में विश्वास करने वाला अच्छी तरह महसूस करता है कि वह पूरी क़ायनात का एक अंग है। वह सम्पूर्ण क़ायनात के स्वामी, सर्वशक्तिमान अल्लाह की सभी रचनाओं में सबसे उत्तम है। यह विश्वास उसके चिन्तन के क्षितिज को फैला देता है और उसका दृष्टिकोण व्यापक हो जाता है।

7. यह विश्वास ईमान वाले के अन्दर पक्का इरादा, धैर्य और कठिन परिस्थितियों में कर्म करते रहने का साहस प्रदान करता है। ईमान वाला एकाग्रचित्त हो जाता है और वह अपने प्रभु की खुशी पाने के लिए अपने आप को समर्पित कर देता है।

8. ला इलाह इल्लल्लाह में विश्वास करने का सबसे महत्वपूर्ण प्रभाव यह है कि वह अल्लाह के आदेशों का पालन करने वाला बना देता है। अल्लाह के एकत्व, तौहीद में विश्वास करने वाले को विश्वास होता है कि अल्लाह हर चीज़ को देख रहा है और वह एक क्षण के लिए भी अल्लाह की नजरों से नहीं बच सकता। वास्तव में अल्लाह उसकी अपनी गर्दन की नस से भी ज्यादा करीब हैं। (क़ुरआन, 50:16)

9. अल्लाह के एकत्व, तौहदी में विश्वास करने वाला अपने कर्मों को अपनी आस्था का प्रतिबिम्ब बनाकर अल्लाह की खुशी प्राप्त करने की कोशिश करता है। बिना कर्म के विश्वास के लिए इस्लाम में कोई स्थान नहीं।

3

' रिसाल '
पैग़म्बरवाद

एक फ़रिश्ता अल्लाह के सन्देश को एक चुने हुए व्यक्ति तक पहुँचाता है और इसी व्यक्ति को इस सन्देश को लोगों तक पहुँचाने की ज़िम्मेदारी दी जाती है। क़ुरआन की शब्दावली में सन्देश के इस मानव अभिकर्त्ता (एजेण्ट) को दूसरे शब्दों में पैग़म्बर (सन्देश पहुँचाने वाला), रसूल (भेजा हुआ), बशीर (शुभ सूचनाएँ देने वाला) या नज़ीर (डराने वाला) आदि कहा जाता है।

पैग़म्बर महान और धर्म-परायण लोग होते हैं और ये आध्यात्मिक, सांसारिक या सामाजिक व्यवहार के अच्छे आदर्श होते हैं। उनको अनिवार्यतः चमत्कार नहीं दिए जाते। (यद्यपि इतिहास उन सभी के साथ चमत्कारों को जोड़ता है और उन्होंने स्वयं सदैव यह घोषणा की है कि ये चमत्कार वह स्वयं नहीं दिखा रहे हैं बल्कि अल्लाह दिखा रहा है) केवल उनकी शिक्षाएँ ही उनकी सच्चाई की कसौटी होती हैं।

क़ुरआन के अनुसार कुछ पैग़म्बर ऐसे हुए हैं जिनको दिव्य पुस्तकें दी गयी हैं और कुछ पैग़म्बर ऐसे भी हैं जिनको नयी किताबें नहीं दी गयीं। बल्कि उन्हें अपने से पहले के पैग़म्बर को दी गयी किताब का पालन करना था। दिव्य सन्देशों में मौलिक सच्चाईयों में कोई अन्तर नहीं होता। ये मौलिक सच्चाईयाँ अल्लाह का एकत्व, भलाईयों का आदेश देना और बुराईयों से बचना और रोकना आदि हैं।

कुछ पैग़म्बरों को किसी एक घर, वंश या परिवार, एक नस्ल या एक क्षेत्र के

लोगों को शिक्षा देने के लिए भेजा गया। जबकि अन्य पैग़म्बरों को व्यापक मिशन दिया गया जो पूरी मानवता के लिए और सदैव के लिए था।

रिसालत या पैग़म्बरवाद अल्लाह और मनुष्य के बीच संचार का माध्यम है। अत्यन्त दयावान अल्लाह ने इन्सान को मार्गदर्शन दिया है ताकि वह सीधे रास्ते पर चलकर संसार को एक आनन्दमय और शान्तिपूर्ण जगह बनाए ताकि वह रहने योग्य हो। जो लोग इस मार्गदर्शन का पालन करेंगे उन्हें मृत्यु के बाद वाले जीवन में महान पुरस्कार मिलेगा।

इस क़ायनात की रचना और धरती पर मनुष्य के भेजे जाने के साथ ही अल्लाह ने अपने चुने हुए बन्दों के द्वारा मानवता को सन्देश भेजने की व्यवस्था की। उन पैग़म्बरों ने अपने लोगों को अल्लाह की इबादत करने और केवल उसी का आज्ञापालन करने का आदेश दिया। उन्होंने लोगों को अल्लाह के रास्ते पर चलने की शिक्षा दी, उनका मार्गदर्शन किया और उन्हें प्रशिक्षित किया।

पैग़म्बर इन्सान थे। हमें उनको अल्लाह के बेटे कभी नहीं कहना चाहिए। अल्लाह एक है और उसका न कोई साझीदार है और न बेटा और न बेटी है। अल्लाह के लिए बेटा, बेटी या साझीदार ठहराना बहुत बड़ा गुनाह है।

सभी पैग़म्बरों का सन्देश एक ही रहा है और वह सन्देश यह था कि केवल अल्लाह की इबादत की जाए और झूठे देवताओं का इंकार किया जाए। *"हमने नूह को उसकी क़ौम की ओर भेजा और उसने कहा, मेरी क़ौम के लोगों, अल्लाह की बन्दगी करो उसके अतिरिक्त तुम्हारा कोई पूज्य नहीं। मैं तुम्हारे लिए एक बड़े दिन की यातना से डरता हूँ।"* (क़ुरआन, 7:59) दूसरे शब्दों में सभी पैग़म्बरों ने इसी सन्देश का प्रचार किया कि "अल्लाह के सिवा कोई उपास्य नहीं"।

आप पूछ सकते हैं कि हमें सर्वशक्तिमान अल्लाह की ओर से मार्गदर्शन की आवश्यकता क्यों है। इसका साधारण सा उत्तर है: हम इंसान कमज़ोर और दुर्बल हैं। हमारे पास भविष्य का ज्ञान नहीं है और जो ज्ञान हमारे पास है भी, वह सीमित है। इसके अतिरिक्त हम पूर्ण नहीं हैं। आप देख सकते हैं कि अपनी बहुत सी कमज़ोरियों को देखते हुए हम अपने लिए ऐसा मार्गदर्शन प्राप्त करने में असमर्थ हैं जो सभी युगों और सभी परिस्थितियों के लिए अच्छा हो। यही कारण है कि अल्लाह ने, पैग़म्बरों के माध्यम से हमारा मार्गदर्शन करके हमें उपकृत किया है।

अल्लाह के पैग़म्बर

पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल0) की एक हदीस के अनुसार अल्लाह द्वारा भेजे हुए पैग़म्बरों की कुल संख्या लगभग 1,25,000 है। एक मुसलमान की हैसियत से हम ईमानवालों को इन सभी पैग़म्बरों और रसूलों पर विश्वास करना चाहिए। (क़ुरआन, 2:285) अल्लाह द्वारा मानवता का मार्गदर्शन पैग़म्बर हज़रत आदम (अलै0) से प्रारम्भ होकर पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल0) तक पूरा हुआ।

क़ुरआन इनमें से सबसे अधिक महत्वपूर्ण 25 पैग़म्बरों के नामों का उल्लेख करता है।

अल्लाह के निम्नलिखित पैग़म्बरों का नाम क़ुरआन में आया है:

1.	आदम	(Adam)
2.	इदरीस	(Enoch)
3	नूह	(Noah)
4.	हूद	
5.	सालेह	
7.	इब्राहीम	(Abraham)
8.	इस्माईल	(Ishmael)
9.	इस्हाक	(Isaac)
10.	लूत	(Lot)
11.	याकूब	(Jacob)
12.	यूसुफ	(Joseph)
13.	शोएब	
14.	अय्यूब	(Job)

15.	मूसा	(Moses)
16.	हारुन	(Aaron)
17.	जुल-किफ्ल	(Ezekiel)
18.	दाऊद	(David)
19.	सुलेमान	(Solomon)
20.	इलियास	(Elias)
21.	अल-यसा	(Elisha)
22.	यूनुस	(Jonah)
23.	ज़करिया	(zachariah)
23.	यहया	(John)
24.	ईसा	(Jesus)
	मुहम्मद	

इन सब पर अल्लाह की दया और कृपा हो।

4

फ़रिश्ते

फ़रिश्ते कौन हैं ?
वे क्या करते हैं ?
क्या हम उन्हें देख सकते हैं ?
वह इन्सान से किस तरह भिन्न हैं ?

फ़रिश्ते अल्लाह की विशेष रचनाएँ हैं। उन्हें विशेष कर्त्तव्यों को पूरा करने के लिए दिव्य प्रकाश (नूर) से बनाया गया है। इनके मुक़ाबले में पहले इन्सान पैगम्बर आदम (अलै0) को मिट्टी से पैदा किया गया था। ये शुद्ध रूप से आध्यात्मिक और शान वाले लोग हैं जिनकी प्रकृति को खाने-पीने या सोने की आवश्यकता नहीं। उनके अन्दर किसी तरह की न तो शारीरिक इच्छाएँ होती हैं और न भौतिक आवश्यकताएँ। ये दिन-रात अल्लाह की सेवा और गुणगान में लगे रहते हैं। उनकी संख्या बहुत अधिक है और प्रत्येक को एक विशेष दायित्व और अल्लाह का गुणगान और प्रशंसा करने की ज़िम्मेदारी दी गयी है। वे कभी थकते नहीं। वे सदैव अल्लाह का आज्ञापालन करने के लिए तैयार रहते हैं। यदि हम फ़रिश्तों को अपनी खुली आँखों से नहीं देख सकते तो इसका अर्थ यह नहीं है कि इनका अस्तित्व नहीं है। संसार में बहुत सी ऐसी वस्तुएँ हैं जो हमारी आँखों से दिखायी नहीं देतीं या हमारी इन्द्रियों की पहुँच से बाहर हैं। लेकिन हम उनके अस्तित्व पर विश्वास करते हैं। बहुत से ऐसे स्थान हैं जिन्हें हमने कभी नहीं देखा है और बहुत सी वस्तुएँ जैसे गैस और हवा हैं जिन्हें हम अपनी नंगी आँखों से न देख सकते हैं और न सूँघ सकते हैं न छू सकते हैं न चख सकते हैं और न सुन सकते हैं। इसके बावजूद हम उनके अस्तित्व को मानते हैं।

फ़रिश्तों को अपने कर्त्तव्यों को पूरा करने के लिए आवश्यक विशेषताएँ और क्षमताएँ प्रदान की गयी हैं। वे सदैव अल्लाह का आज्ञापालन करते हैं और कभी उसकी

अवज्ञा नहीं कर सकते। इसके विपरीत इन्सान को स्वतन्त्र इच्छा प्रदान की गयी है और वह अच्छे और बुरे का चुनाव कर सकता है। इसीलिए मनुष्य को क़यामत के दिन अपने कर्मों का हिसाब देना पड़ेगा।

फ़रिश्ते वही काम करते हैं जिनका आदेश अल्लाह उन्हें देता है। ये अल्लाह की मर्ज़ी के बेगुनाह बन्दे हैं। अपनी स्वतन्त्र इच्छा का उपयोग करने में ये मनुष्य की सहायता करते हैं। मनुष्य यह फैसला करता है कि उसे क्या करना है और फ़रिश्ते उस फ़ैसले को व्यवहार में लाने में उसकी मदद करते हैं।

जब तक फ़रिश्ते इन्सान के रूप में प्रकट न हों, हम उनको नहीं देख सकते। फ़रिश्ते जिब्रील एक बार इन्सान के रूप में पैग़म्बर (सल्ल0) के साथियों की सभा के सामने प्रकट हुए। वह लोगों को शिक्षा देने के लिए आए थे लेकिन केवल पैग़म्बर ही जान सके कि वह फ़रिश्ता हैं। फ़रिश्ते अपने कर्त्तव्य का निर्वाह करने के लिए उपयुक्त आकार ग्रहण कर सकते हैं।

अल्लाह के साम्राज्य में बहुत से फ़रिश्ते हैं। उनमें से प्रमुख निम्नलिखित हैं:

जिब्रील या जिब्रईल

मीकाईल या मीकाल

इज़राईल (मौत का फ़रिश्ता, इन्हें अज़राईल भी कहा जाता है)

इस्राफ़ील

हज़रत जिब्रील (अलै0) अल्लाह के सन्देश को पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल0) और दूसरे पैग़म्बरों के पास लेकर आते थे।

इजराईल- इनको मौत का फ़रिश्ता भी कहा जाता है और यह इन्सानों के प्राण निकालते हैं।

इस्राफ़ील (अलै0) प्रलय के समय क़यामत के दिन सूर में फूक मारेंगे।

कुछ फ़रिश्ते हमारे कर्मों का रिकार्ड तैयार करने में व्यस्त रहते हैं। उन्हें किरामन कातिबीन या ईमानदार लिखने वाले कहा जाता है। हमारा कहा हुआ कोई एक शब्द भी इनके द्वारा लिखे जाने से नहीं छूट सकता। (देखिए क़ुरआन, 50:18)

अल्लाह अपने साम्राज्य की भली-भाँति देख-रेख करता है और फ़रिश्ते उसके आज्ञाकारी सेवक हैं। फ़रिश्ते जन्नत में हममें से उन लोगों का स्वागत करेंगे जो अल्लाह के आदेशों का पालन करते हैं और बुरे कर्म वालों को जहन्नम में फेंकेंगे। (देखिए क़ुरआन 39:71-74)

5

मृत्यु के पश्चात जीवन

क़यामत और फ़ैसले का दिन

परलोक के जीवन पर विश्वास, इस्लाम के मौलिक विश्वासों में से एक है। क़ुरआन की पहली सूरः में अल्लाह की विशेषताओं 'रहमान' और 'रहीम' का वर्णन करने के बाद अल्लाह तआला फ़रमाता है कि वह फ़ैसले के दिन का मालिक है। (क़ुरआन, 1:3) अगली सूरः बक़रः की तीसरी आयत में कहा गया है कि ईमानवाले वह हैं जो "बिन देखे पर ईमान रखते हैं....." (क़ुरआन, 2:3)

"ग़ैब या बिन देखे" की धारणा में मौत के बाद मृतकों का उठना, उठाए जाने का दिन, जन्नत और जहन्नम या संक्षेप में परलोक से सम्बन्धित हर चीज़ सम्मिलित है। वास्तव में क़ुरआन की सूरः अल-बक़रः की चौथी आयत में परलोक पर ईमान के महत्व को इन शब्दों में एक बार फिर याद दिलाया गया हैः "उन्हें परलोक के बारे में पक्का विश्वास होता है।"

क़ुरआन अन्तिम दिन की घटनाओं का चित्रण बहुत स्पष्ट और प्रभावशाली भाषा में प्रस्तुत करता है। एक ऐसी घड़ी में, जिसे अल्लाह उपयुक्त समझेगा और इस घड़ी को केवल अल्लाह ही जानता है, यह संसार समाप्त कर दिया जाएगा। यह घड़ी क़ायनात की इतनी भयानक घटना होगी जिसकी कल्पना मनुष्य नहीं कर सकता। फ़ैसले के दिन मरे हुए लोगों के शरीर को उनकी कब्रों से उठाया जाएगा और उन्हें उनकी

आत्माओं से जोड़ दिया जाएगा। वह लोग जो प्रलय के समय धरती पर जीवित होंगे वह मर जायेंगे और इन्सानों की इस विशाल सभा में सम्मिलित हो जायेंगे। अतीत, वर्तमान और भविष्य के सभी इंसान उस समय अल्लाह के सामने खड़े होंगे, उस समय हर व्यक्ति उसी तरह अकेले खड़ा होगा जिस तरह वह संसार में अकेले आया था और वह अपने कर्मों का हिसाब देगा। उस दिन इंसान का अल्लाह पर ईमान, भले कर्म, अपने जैसे इन्सानों के साथ लेन-देन में अच्छा व्यवहार और दूसरी रचनाओं के साथ भला व्यवहार ही उसके किसी काम आ सकेगा।

जिन लोगों ने अल्लाह पर विश्वास किया होगा, जिन्होंने समर्पण के साथ उसका आज्ञापालन किया होगा और उसकी खुशी के लिए जीवन व्यतीत किया होगा और जिन्होंने इस संसार को एक समर्पित बन्दे के रूप में छोड़ा होगा, उनके लिए ऐसा सुख और संतोष प्रतीक्षा कर रहा है जिसकी इस दुनिया में कल्पना भी नहीं की जा सकती।

जिन लोगों ने अल्लाह का इंकार किया होगा और उसके मार्गदर्शन को मानने से इंकार किया होगा, जिन्होंने अल्लाह के अतिरिक्त अन्य देवताओं की पूजा के लिए अपने आप को समर्पित किया होगा, और जिन्होंने बुरे कर्म किए होंगे। उन्हें एक भयानक और डरावने ठिकाने में डाल दिया जाएगा। जहाँ उनके साथ वैसे ही और लोग होंगे जिन्होंने उन्हीं की तरह अल्लाह से दूर रहकर जीवन व्यतीत किया होगा। वहाँ वह लोग निरन्तर यातना और पीड़ा में जीवन व्यतीत करेंगे। वहाँ वे कामना करेंगे कि दुनिया में जाने का एक और अवसर मिल जाए और वह अपने वर्तमान ज्ञान की रोशनी में संसार के पिछले जीवन से एक अलग जीवन व्यतीत करें। लेकिन उस समय देर हो चुकी होगी।

पुरस्कार के रूप में जन्नत का वर्णन और दण्ड के रूप में जहन्नम का वर्णन केवल एक चित्रण है ताकि हम ऐसी चीज़ों की कल्पना कर सकें जो इस संसार में हमारी समझ से बाहर हैं। इसके बारे में बताते हुए क़ुरआन कहता हैः

> ''कोई जान नहीं जानती कि क्या चीज़ उससे छिपा कर रखी गयी हैः अर्थात पुरस्कार के रूप में वह आनन्द उस चीज़ के बदले में जिसे वह किया करते थे।''
>
> ''जन्नत में ऐसी चीज़ें होंगी जिनके जैसी चीज़ें न किसी आँख ने देखा होगा और न कानों ने सुना होगा और न मन ने कभी इनके बारे में सोचा होगा।''
>
> (हदीस)

इस्लामी दृष्टिकोण के अनुसार परलोक के जीवन को निम्नलिखित क्रम के अनुसार बयान किया जा सकता हैः अन्तिम दिन, उठाया जाना, फ़ैसले का दिन और अद्‌भुत आनन्द या दण्ड। क़ुरआन की निम्नलिखित आयतें उन घटनाओं का सजीव चित्रण प्रस्तुत करती हैं:

"जबकि आकाश फट जायेगा, और जबकि तारे बिखर जायेंगे, और जबकि समुद्र बह पड़ेंगे, और जबकि क़ब्रें उखाड़ दी जायेंगी। तब हर व्यक्ति जान लेगा कि किसे उसने प्राथमिकता दी और किसे पीछे डाला। ऐ मनुष्य! किस चीज़ ने तुझे अपने उदार प्रभु के विषय में धोखे में डाल रखा है?" (क़ुरआन, 82:1-6)

"जब सूर्य लपेट दिया जायेगा, जब तारे मैले हो जायेंगे, जब पहाड़ चलाये जायेंगे, जब दस मास की गाभिन ऊँटनियाँ आज़ाद छोड़ दी जायेंगी, जब जंगली जानवर एकत्र किए जायेंगे, जब समुद्र भड़का दिए जायेंगे, जब लोग क़िस्म-क़िस्म कर दिए जायेंगे,....." (क़ुरआन, 81:1-7)

"फिर जब वह बहरा कर देने वाली प्रचण्ड आवाज़ आयेगी। जिस दिन आदमी भागेगा अपने भाई से, और अपनी माँ और अपने बाप से।और अपनी पत्नी और अपने बेटों से। उनमें से प्रत्येक व्यक्ति को उस दिन ऐसी पड़ी होगी जो उसे दूसरों से बेपरवाह कर देगी।"

(क़ुरआन, 80:33-37)

"जिस दिन नरसिंघा में फूँक मारी जायेगी, तो तुम गिरोह के गिरोह चले आओगे।" (क़ुरआन, 78:18)

"अतः जब तारे विलुप्त (प्रकाशहीन) हो जाएँगे, और जब आकाश फट जाएगा, और जब पहाड़ चूर्ण-विचूर्ण होकर बिखर जाऐंगे।"

(क़ुरआन, 77:8, 9, 10)

"उसी की ओर तुम सबको लौटना है यह अल्लाह का पक्का वादा है। निःसन्देह वही पहली बार पैदा करता है। फिर दोबारा पैदा करेगा, ताकि जो लोग ईमान लाए और उन्होंने अच्छे कर्म किए उन्हें न्यायपूर्वक बदला दे। रहे वे लोग जिन्होंने इन्कार किया उनके लिए खौलता पेय और दुखद यातना है, उस इन्कार के बदले में जो वे करते रहे।" (क़ुरआन, 10:4)

"क्या जिसने आकाशों और धरती को पैदा किया उसे इसकी सामर्थ्य नहीं कि उन जैसों को पैदा कर दे? क्यों नहीं, जबकि वह महान सृष्टा, अत्यन्त ज्ञानवान है।" (क़ुरआन, 36:81)

"यह फ़ैसले का दिन है, हमने तुम्हें भी और पहलों को भी इकट्ठा कर दिया।" (क़ुरआन, 77:38)

"और जब कर्म-पत्र फैला दिए जायेंगे।" (क़ुरआन, 81:10) *"उसके लिए जो तुममें से सीधे मार्ग पर चलना चाहे। और तुम नहीं चाह सकते सिवाय इसके कि सारे जहाँ का रब अल्लाह चाहे।"* (क़ुरआन, 81: 28-29) *"तो कोई भी व्यक्ति जान लेगा कि उसने क्या उपस्थित किया है।"* (क़ुरआन, 81:14) *"अतः जो कोई कण भर भी नेकी करेगा, वह उसे देख लेगा, और जो कोई कण भर भी बुराई करेगा, वह भी उसे देख लेगा।"* (क़ुरआन, 99:7-8) *"अब आज किसी जीव पर कुछ भी जुल्म न होगा और तुम्हें बदले में वही मिलेगा जो कुछ तुम करते रहे हो।"* (क़ुरआन, 36-54)

विश्वास करें या न करें

कुरआन कहता हैः

''आकाशों और धरती के रहस्यों का सम्बंध अल्लाह ही से है। और उस क़ियामत की घड़ी का मामला तो बस ऐसा है जैसे आँखों का झपकना या वह इससे भी अधिक निकट है। निश्चय ही अल्लाह को हर चीज़ की सामर्थ्य प्राप्त है।'' (कुरआन, 16:77)

संसार के सभी धर्म और आधुनिक विज्ञान भी यह मानते हैं कि इस संसार का अन्त होने जा रहा है लेकिन इस सवाल का जबाव अभी नहीं मिला है किः कैसे? जब हम सितारों से सजे हुए आसमान की ओर देखते हैं तो हम यह पूछने के लिए मजबूर हो जाते हैंः इस क़ायनात का अंजाम अन्ततः क्या होने वाला है? हममें से प्रत्येक अपने दिलों में इस बात की चिन्ता करता है कि उसके अपने अस्तित्व का अंजाम क्या होना है। यह सोचकर ईमान वाले और अनिश्वरवादी दोनों परेशान होते हैं। क्या मौत ही आखिरी मंजिल है? क्या इससे परे भी कुछ है?

दुनिया में ऐसे लोग भी हैं जो इसकी परवाह नहीं करते कि मृत्यु के बाद भी जीवन है। कुछ लोग ऐसे भी हैं जो मृत्यु के बाद जीवन में विश्वास ही नहीं रखते।

मृत्यु के पश्चात जीवन के बारे में अनिश्वरवादियों ने अनेक संदेह प्रकट किए हैं। वह नहीं समझ पाते कि अल्लाह मृत्यु के बाद किस तरह मर्दों और औरतों को उठाएगा। लेकिन अल्लाह इंसान को जब शून्य से उठा सकता है तो मृत्यु के बाद उसका उठाना अल्लाह के लिए कोई कठिन काम नहीं। (देखिए कुरआन, 22:5-7, 36:77-79)

कुरआन कहता हैः

''क्या मनुष्य यह समझता है कि हम कदापि उसकी हड्डियों को एकत्र न करेंगे? क्यों नहीं, हम उसके पोरों को ठीक-ठाक करने का सामर्थ्य रखते हैं।''

(कुरआन, 75:3-5)

आज भी ऐसे लोग मौजूद हैं जिनके लिए मृत्यु के पश्चात जीवन, मरने के बाद उठाए जाने पर विश्वास करना कठिन महसूस होता है। उनकी समझ से यही जीवन ही केवल एक जीवन है और मौत के बाद कुछ नहीं होगा। हास्यास्पद बात यह है कि इस तरह का विश्वास रखने वाले अपने विश्वास को सामान्य विवेक और विज्ञान के

आधार पर सिद्ध करने का प्रयास करते हैं। इस मामले में वह अपने आप को दूसरों की तुलना में अधिक विकासशील समझते हैं और अपने विरोधियों को वह रुढ़िवादी कहते हैं। असहज बात यह है कि वह कभी नहीं समझते कि अनिश्वरवाद उतना ही पुराना है जितना पुराना अल्लाह पर ईमान लाना है। उस समय जब कुरआन अवतरित हो रहा था तो मक्का के कुरैश भी मृत्यु के पश्चात जीवन का इंकार करते थे। उनके तर्क आज के विकासशील लोगों के द्वारा प्रस्तुत तर्कों से भिन्न नहीं थे।

कुरआन कहता हैः

"उसकी क़ौम के सरदार जिन्होंने इन्कार किया और आख़िरत के मिलन को झुठलाया..... वे कहते है बस हमारा यही सांसारिक जीवन ही है। (यहीं) हम मरते और जीते हैं। हम कोई दोबारा उठाये जाने वाले नहीं।"

(कुरआन, 23:33-37)

कुरआन बताता है कि मृत्यु के पश्चात जीवन पर विश्वास न करना समाज के उन लोगों का फैशन है जो जनता का शोषण करते हैं। न तो वह खुद अल्ल्लाह से डरते हैं और न वह दूसरों को सच्चे रास्ते का पालन करने देना चाहते हैं। वे बिना किसी साक्ष्य के अपनी अज्ञानता पर हठ करते रहते हैं। और चाहते हैं कि दूसरे लोग भी उनके अंधकार का अनुसरण करें।

कुरआन मृत्यु के पश्चात जीवन की अनिवार्यता का वर्णन बार-बार करता है जैसा कि इंसान की नैतिक चेतना की माँग है। वास्तव में मृत्यु के पश्चात जीवन पर विश्वास, अल्लाह के एकत्व पर विश्वास का तार्किक परिणाम है। उत्तरदायित्व के बिना अल्लाह की प्रतिष्ठा प्रतीकात्मक रह जाएगी। वह ऐसा मालिक होगा जो उदासीन होगा जिसने एक बार इंसान को पैदा करने के बाद उसके अंजाम से उसे कोई सरोकार न होगा। अल्लाह न्याय करने वाला है। यह मान्यता वास्तव में धरती पर मानवता के नैतिक अस्तित्व को ही धराशायी कर देगी।

कुरआन हमें शिक्षा देता है कि वर्तमान जीवन, जीवन के अगले अस्तित्व की तैयारी के लिए एक परीक्षा है। एक दिन आएगा जब पूरी क़ायनात नष्ट कर दी जाएगी और इसे फिर पैदा किया जाएगा और मरे हुए लोगों को अल्लाह के सामने फ़ैसला करने के लिए खड़ा किया जाएगा।

"क्या तुमने देखा नहीं कि अल्लाह ने आकाशों और धरती को सोद्देश्य पैदा किया? यदि वह चाहे तो तुम सबको ले जाये और एक नवीन सृष्ट जन-समूह ले आए। और यह अल्लाह के लिए कुछ भी कठिन नहीं है।"

(कुरआन, 14:19-20)

उठाए जाने का दिन, एक ऐसे जीवन का आरम्भ होगा जो कभी समाप्त नहीं होगा। यह वही दिन होगा जिसमें अल्लाह हर इंसान को उसके अच्छे या बुरे कर्मों का पूरा-पूरा बदला देगा।

एक दिन ऐसा अवश्य होना चाहिए जिस दिन ग़रीब-अमीर, ताक़तवर और कमज़ोर, अच्छे और बुरे सबके साथ न्याय कर दिया जाए। वही फ़ैसले का दिन होगा।

पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल0) ने फ़रमायाः

''क़यामत के दिन लोगों के बीच सबसे पहले जिस चीज़ का फ़ैसला होगा वह खून-खराबा के बारे में होगा।''

महान जाँच-पड़ताल और न्यायिक प्रक्रिया से पहले न्याय की सभी माँगों को पूरा किया जाएगा। निष्पक्ष और पारदर्शी न्याय की निर्धारित प्रक्रिया पर सख्ती से अमल किया जाएगा, रिकार्ड प्रस्तुत किए जायेंगे और गवाहों को पुकारा जाएगाः

यहाँ तक कि हमारी आँखें, कान और खालें भी गवाही देंगीः

और विचार करो जिस दिन अल्लाह के शत्रु आग की ओर एकत्र करके लाए जाएँगे, फिर उन्हें श्रेणियों में क्रमबद्ध किया जाएगा, यहाँ तक कि जब वे उसके पास पहुँच जाएँगे तो उनके कान और उनकी आँखें और उनकी खालें उनके विरुद्ध उन बातों की गवाही देंगी, जो कुछ वे करते रहे होंगे। वे अपनी खालों से कहेंगे कि ''तुमने हमारे विरुद्ध क्यों गवाही दी?'' वे कहेंगीः ''हमें उसी अल्लाह ने वाक-शक्ति प्रदान की है, जिसने प्रत्येक चीज़ को वाक-शक्ति प्रदान की।'' उसी ने तुम्हें पहली बार पैदा किया और उसी की ओर तुम्हें लौटना है।

(क़ुरआन, 41:19-21)

जो लोग गुनाह करते हैं, अल्लाह की अनदेखी करते हैं और अनैतिक कामों में लिप्त होते हैं। वह लोग अल्लाह से गुजारिश करेंगे कि उन्हें दुनिया में फिर भेज दिया जाए ताकि वह वहाँ अच्छे कर्म करें और नास्तिकता और मूर्ति पूजा को छोड़कर, वे इस्लाम धर्म स्वीकार करने की घोषणा करेंगे। लेकिन उनकी यह सारी प्रार्थनाएँ पूर्णतः निरस्त कर दी जायेंगी। उन्हें पहले ही बता दिया गया था कि उन्हें दुबारा कोई अवसर नहीं मिलेगा। शाश्वत अपमान उनका भाग्य होगा। इसके बाद फ़रिश्ते घसीट कर उन्हें जहन्नम में ले जायेंगे। वह लोग, जिनका रिकार्ड अच्छा होगा उनको उदारतापूर्वक पुरस्कार दिया जाएगा और अल्लाह की जन्नत में गर्मजोशी से उनका स्वागत होगा।

इंसानों की बड़ी संख्या शान्तिपूर्ण जीवन व्यतीत करना पसंद करती है। कुछ गिने-चुने बुरे लोग होते हैं जो हर किसी का जीवन कठिन बना देते हैं। क्या उनके अपराधों के कारण उनको सज़ा नहीं मिलनी चाहिए। अगर सांसारिक अदालतों में वह

जबावदेही से बच जाते हैं तो क्या हुआ? क्या उन्हें हमेशा के लिए बिना किसी दण्ड के छोड़ दिया जाएगा? अल्लाह ऐसे अत्याचारियों को दण्ड अवश्य देगा जिनके अपराध अनगिनत होंगे, उन्होंने नरसंहार किया होगा, समाज में भ्रष्टाचार फैलाया होगा, बहुत से लोगों को अपनी इच्छाओं की पूर्ति के लिए गुलाम बनाया होगा।

और ऐसे लोग भी हैं जो गुनाह करते हैं, अल्लाह की अनदेखी करते हैं और अनैतिक गतिविधियों में लिप्त होते हैं। इसके बावजूद वे राजनीति और व्यापार में सफल दिखायी देते हैं। कुछ नेक और भले लोग भी हैं जो कष्ट और दुख में जीवन व्यतीत करते हैं। यह स्थिति चिंताजनक है और अल्लाह के न्याय के प्रतिकूल है। यदि अपराधी लोग मानवकृत सामान्य क़ानूनों, सांसारिक अदालतों से बिना किसी दण्ड के बच जाते हैं और इससे बढ़कर बहुत सम्पन्न बन जाते हैं तो भले लोगों के लिए क्या बचता है? नैतिकता और भलाई को क्या चीज़ बढ़ाएगी। भलाई को पुरस्कृत करने और बुराई से रोकने के लिए कोई न कोई रास्ता अवश्य होना चाहिए। यदि यहाँ इस धरती पर ऐसा न किया जा सका- और हम जानते हैं कि यह न्याय सदैव या तुरन्त नहीं किया जाताः तो यह न्याय किसी न किसी दिन अवश्य होना चाहिए, और वह फैसले या क़यामत के दिन होगा।

इस प्रकार अपने कर्मों का हिसाब देना न्याय की महत्वपूर्ण आवश्यकता है। यह उत्तरदायित्व सभ्य, कमज़ोर और ग़रीब हर एक का है और यह उत्तरदायित्व न्याय के लिए है।

मृत्यु के पश्चात जीवन में और फ़ैसले के दिन पर विश्वास केवल परलोक की सफलता की ही गारंटी नहीं है बल्कि यह व्यक्तियों को अपनी गतिविधियों में उत्तरदायी और अधिक कर्त्तव्यपरायण बनाकर इस संसार को शान्तिपूर्ण और आनन्दमय बनाता है और दुनिया की जटिल समस्याओं का राहत देने वाला समाधान उपलब्ध कराता है।

6

अवतरित पुस्तकें

हम मनुष्य अल्लाह के बन्दे और धरती पर उसके प्रतिनिधि हैं। लेकिन हमें अल्लाह के प्रतिनिधि की हैसियत से अपने कर्त्तव्य निर्वाह के लिए मार्गदर्शन की आवश्यकता होती है। हम अपने आप का मार्गदर्शन करने में असमर्थ हैं क्योंकि हमारे अन्दर बहुत सी कमज़ोरियाँ हैं और हमारे पास अतीत, वर्तमान और भविष्य का बहुत सीमित ज्ञान है। केवल अल्लाह ही इन सभी कमियों से ऊपर है और वह ही ऐसा मार्गदर्शन करने की क्षमता रखता है जो सभी युगों और सभी स्थानों के लिए उपयुक्त हो। हम जानते हैं कि अल्लाह ने हमें बिना मार्गदर्शन के नहीं छोड़ा है और उसने जीवन में हमें सीधा रास्ता दिखाने के लिए पैग़म्बरों के भेजने की व्यवस्था की है। इसके साथ-साथ अल्लाह ने मार्गदर्शन के लिए अपने कुछ पैग़म्बरों के साथ किताबें भी भेजी हैं।

अल्लाह के उपकार अनन्त हैं। वह हमें वह सब कुछ देता है जिसकी हमें आवश्यकता है। कल्पना कीजिए कि हमारे जन्म से जवानी तक वह कितने अद्‌भुत ढंग से हमारे पालन-पोषण के लिए स्नेह करने वाले और प्यार करने वाले माता-पिता की व्यवस्था करता है। वही हमें उस समय खुराक देता है जब हम अपनी माँओं के पेट में होते हैं। हमारी माँओं की छाती में हमारे जन्म के साथ ही दूध उतार देता है।

वास्तव में यह सबकुछ हमें दयावान और कृपाशील अल्लाह ही देता है।

"अल्लाह का मानवता पर सबसे बड़ा उपकार उसकी किताबों में दिया हुआ मार्गदर्शन हैं। शुद्ध, पूर्ण और सबसे अधिक उपयोगी ज्ञान विवेकशील और महान अल्लाह की ओर से ही प्राप्त होता है।"

(क़ुरआन, 2:146-147, 4:163, 53:1-6)

एक मुसलमान अल्लाह की उतारी गयी सभी किताबों पर विश्वास रखता है

जिनका उल्लेख क़ुरआन में आया है। वह किताबें हैं, तौरात जो हज़रत मूसा (अलै0) को दी गयी, ज़बूर हज़रत दाऊद (अलै0) पर उतारी गयी, इंजील हज़रत ईसा (अलै0) पर उतारी गयी और क़ुरआन हज़रत मुहम्मद (सल्ल0) पर उतारा गया। क़ुरआन में हज़रत इब्राहीम (अलै0) के सहीफ़ों का भी उल्लेख आया है।

सभी आसमानी किताबों में से केवल क़ुरआन अपने शुद्ध और मूल रूप में सुरक्षित है, तौरात, ज़बूर और इंजील अपने मूल रूप में अब मौजूद नहीं हैं। आज इन नामों से जो किताबें मौजूद हैं, वह उन पैग़म्बरों के अनुयायियों द्वारा उनकी मृत्यु के अनेक वर्षों बाद लिखी गयी हैं। लिखने वालों ने अल्लाह के शब्दों को बदल दिया और उन्हें तोड़-मरोड़ दिया। उन्होंने आसमानी शब्दों के साथ मानवकृत शब्दों को मिला दिया।

आज जो बाईबिल मौजूद है। वह ओल्ड टेस्टामेन्ट और न्यू टेस्टामेन्ट का एक संग्रह है और इब्रानी और यूनानी हस्तलिपियों से उसका अंग्रेजी में अनुवाद किया गया है। कोई ध्यानपूर्वक पढ़ने वाला इसमें की गयी वृद्धि और परिवर्तनों को आसानी से देख सकता है।

जो बाईबिल आज मौजूद है। उसमें इंसानों के हाथ से बहुत सी बातें जोड़ी गयी हैं जो सही प्रतीत नहीं होतीं। ये दिव्य संदेश नहीं हैं। इसमें पैग़म्बरों के बहुत से भ्रामक और झूठे विवरण सम्मिलित हैं। पैग़म्बरों को अल्लाह का जो सन्देश दिया गया था, वह उनके अनुयायियों की लापरवाही या ग़लतियों से या तो खो गया है या नष्ट हो गया है। दूसरी ओर क़ुरआन में मनुष्य के लिए अल्लाह का मार्गदर्शन अपने मूल रूप और मूल भाषा में मौजूद है। जिसमें कोई परिवर्तन या विचलन नहीं हुआ है। यह पहले के पैग़म्बरों के उन सन्देशों का पुनः स्पष्ट विवरण प्रस्तुत करती है जिसे उन पैग़म्बरों के अनुयायियों ने खो दिया था। क़ुरआन का सन्देश सभी युगों के लिए वैध है।

क़ुरआन

' अल्लाह का प्रभावशाली भाषण '

क़ुरआन सर्वशक्तिमान अल्लाह का शुद्ध और प्रभावशाली सन्देश है। इस किताब का प्रत्येक शब्द मानवता के लिए अल्लाह का सन्देश है। क़ुरआन के शब्द मानव इतिहास के सबसे अधिक प्रभावशाली और प्रकाश देने वाले शब्द हैं। क़ुरआन के यही शब्द हैं जो दुनिया के सबसे तेजी से फैलने वाले धर्म इस्लाम की ओर दुनिया को प्रेरित और गतिमान कर रहे हैं।

कोई व्यक्ति दुनिया में हर जगह उपलब्ध अनेक किताबों को पढ़ सकता है। लेकिन क़ुरआन एक आसमानी किताब है और लगभग 1.7 विलियन मुसलमान अपने दैनिक जीवन के लिए अल्ल्लाह द्वारा प्रदान किए हुए मार्गदर्शन के रूप में इसे पढ़ते और इसका सम्मान करते हैं। मुसलमानों का दृढ़ विश्वास है कि क़ुरआन पढ़ते समय वे सीधे सर्वशक्तिमान अल्लाह के साथ संवाद कर रहे होते हैं।

क़ुरआन मानवता के लिए अल्लाह का एक अद्‌भुत उपहार है। शब्द 'क़ुरआन' का शाब्दिक अर्थ पढ़ना या उच्चारण करना है। क़ुरआन आसमानी सन्देश है जो मानवता के लिए उतारा गया है- शुद्ध और स्पष्ट अरबी भाषा में- और यह मानवता के लिए स्मारिका, प्रकाश और एक चमत्कार सब कुछ एक साथ है। सर्वशक्तिमान अल्लाह ने इसे फ़रिश्ते जिब्रील के माध्यम से 23 वर्षों के दौरान पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल0) पर अवतरित किया। जैसे ही आपको वह्य का सन्देश मिलता, आप उसे अपने साथियों तक पहुँचा देते और उनसे जुबानी याद करने का आदेश देते ताकि उन्हें नमाज़ों में पढ़ा जा सके और आप उन आयतों को लिखने का भी आदेश देते।

क़ुरआन पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल0) पर लगभग 1400 वर्ष पहले सन् 610 और 632 ई0 के बीच अरब के हिजाज क्षेत्र में अवतरित हुआ। उसी क्षेत्र में मक्का और मदीना शहर मौजूद हैं। उस समय का अरब देश विश्व इतिहास से अलग-थलग था।

कुरआन क्या है ?

कुरआन की तुलना किसी भी धर्मग्रन्थ; तौरात या बाईबिल या महाभारत और रामायण, से नहीं की जा सकती क्योंकि यह प्राचीन लोगों का लिखित विवरण नहीं है। हालाँकि इसमें कुछ पैग़म्बरों और कुछ क़ौमों की कहानियाँ मौजूद हैं। यह कोई क्रमबद्ध घटनाक्रम का वर्णन करने वाली पंक्तिबद्ध किताब नहीं है और तार्किक ढंग से इसका आरम्भ मध्य और अन्त नहीं है। यह लयबद्ध गद्य है। यह महाकाव्य, कविता और गद्य को मिलाकर एक श्रेष्ठ शैली में लपेट दी गयी है। इस पूरी किताब में 114 अध्याय या सूरतें हैं जिसमें कुल 6666 आयतें हैं। इस प्रकार इसका ढाँचा जाली की तरह है या जाली के तारों की तरह है जो इसके हर शब्द को दूसरे शब्द से लय, तुकबद्धता और अर्थ से जोड़ते हैं। कुरआन का ढ़ाँचा इस बात को सुनिश्चित करता है कि इस किताब का एक नुक्ता (बिन्दु) भी बदला नहीं जा सकता है क्योंकि इसमें हल्का सा परिवर्तन भी इसके मूल पाठ या सन्देश को इस पूरे ढाँचे से अलग कर देता है।

कुरआन का अनोखापनः

कुरआन के विशेष ढाँचे, इसके प्रत्येक शब्द और प्रत्येक आयत का आपस में जुड़ा होना, इसकी भाषा और सटीकता की प्रखरता और सौन्दर्य, इसकी शैली के संक्षिप्त और सूक्ष्म होने के कारण कहा जाता है कि कुरआन की शैली को नक़ल नहीं किया जा सकता। कुरआन के शब्दों को बदलना और दूषित करना केवल असंभव ही नहीं है बल्कि इस जैसी एक आयत जिसका साहित्यिक स्तर कुरआन के स्तर पर हो, पैदा करना मनुष्य की योग्यता से परे है। कुरआन स्वयं अपने पाठकों को चुनौती देता है कि वह केवल एक सूरः बनाकर लाएँ जो इसके किसी हिस्से के समतुल्य हो सके।

> *"और अगर उसके विषय में जो हमने अपने बन्दे पर उतारा है, तुम किसी सन्देह में हो तो उस जैसी कोई सूरा ले आओ और अल्लाह से हटकर अपने सहायकों को बुला लो जिनके आ मौजूद होने पर तुम्हें विश्वास है, यदि तुम सच्चे हो। फिर अगर तुम ऐसा न कर सको और तुम कदापि नहीं कर सकते, तो डरो उस आग से जिसका ईंधन इन्सान और पत्थर हैं, जो इन्कार करने वालों के लिए तैयार की गई हैं।"* (कुरआन, 2:23:24)

क़ुरआन की विशेष भाषा और इसका विशेष ढाँचा दूसरी किताबों की तुलना में इसे याद करना आसान बना देता है। इसकी भाषा उच्चारण करने वाले को एक शब्द से दूसरे शब्द तक ले जाती है। इसका ढाँचा इसे एक आयत से दूसरी आयत तक ले जाता है। इस तरह इसकी शैली मन में भावों का चित्र उभारने वाली है। क़ुरआन का उच्चारण (क़िरअत) बहुत ही विकसित कला का रूप ले चुका है। इसके उच्चारण की दो स्वीकार्य तकनीकें हैं: एक संगीत जैसा सुन्दर उच्चारण, जिसे तज्वीद कहा जाता है और दूसरा धीमा और जानबूझ कर साधारण उच्चारण साधारण, उपयुक्त क्रम में उच्चारण जिसे तरतील कहा जाता है। कम उम्र के मुसलमानों को क़ुरआन का उच्चारण बचपन से ही सिखाया जाता है और उसी आयु में वह पूरा क़ुरआन याद भी कर लेते हैं। इस प्रकार क़ुरआन मानव इतिहास की एक मात्र ऐसी पुस्तक है जिसे आदि से अन्त तक याद कर लिया जाता है।

इतिहास के किसी भी युग में ऐसे लाखों लोग मौजूद रहते हैं जिन्हें क़ुरआन ज़ुबानी याद होता है। इन्हें हाफ़िज़ कहा जाता है। पाँच बार की दैनिक नमाज़ों में भोर, दोपहर, दिन ढलने के बाद और रात में अल्लाह के शब्दों का उच्चारण 1400 वर्षों की यात्रा करते हुए अरब के रेगिस्तान से निकलकर दुनिया के सभी देशों में फैल चुका है। आने वाली सदियों में अल्लाह के ये शब्द पूरी दुनिया में अपने शुद्ध और मूल रूप में लगातार गूजते रहेंगे।

ऐसा प्रतीत होता है कि लोगों में यह ग़लतफ़हमी है कि क़ुरआन को पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल0) ने लिखा है। यह वास्तविकता है कि पैग़म्बर (सल्ल0) अनपढ़ थे, न लिख सकते थे, न पढ़ सकते थे। इस वास्तविकता से वह ग़लतफ़हमी दूर हो जानी चाहिए। क़ुरआन के शब्द आसमानी आदेश हैं। क़ुरआन की ऐतिहासिक, वैज्ञानिक और साहित्यिक सुन्दरता और सटीकता का श्रेय केवल अल्लाह को दिया जा सकता है। क्योंकि केवल वही एक हस्ती है जो इस शानदार किताब के शब्दों का सजृन कर सकती है। क़ुरआन के शब्द उन लोगों पर भी जादुई प्रभाव डालते हैं जो लोग अरबी भाषा नहीं जानते।

क़ुरआन का उद्देश्य और इसकी विषय सामग्री

क़ुरआन पूरी मानवता को सम्बोधित करता है, क़ौमों से, समुदायों से, परिवारों से और व्यक्तियों से, नस्लों से, क्षेत्रों और युगों से। चूँकि क़ुरआन वाह्य शिक्षाओं और आन्तरिक शिक्षाओं से परिपूर्ण है। इसलिए यह किताब व्यक्तियों और आत्माओं को सम्बोधित करती है। फिर यह किताब जीवन के सभी क्षेत्रों के इंसानों, आध्यात्मिक, भौतिक, व्यक्तिगत और सामाजिक क्षेत्रों का मार्गदर्शन करती है।

क़ुरआन नस्ल, क्षेत्र और युग का भेद किए बिना पूरी मानवता को सम्बोधित करता है। क़ुरआन के मुख्य विषय अल्लाह, मनुष्य, समाज, प्रकृति, विवेक, पैग़म्बरी और वह्य हैं। क़ुरआन अल्लाह के सर्वव्यापी होने की बात करता है। सच्चाई यह है कि यह मनुष्य की समझ से परे है और वह लिंग की सीमाओं से बाहर है। क़ुरआन अल्लाह की विशेषताओं का वर्णन करता है, और इसमें उस अल्लाह की प्रशंसा करने के लिए उपयुक्त ढंग बताए गए हैं। इसमें एक व्यक्ति के रूप में लोगों के कर्त्तव्य गिनाए गए हैं और बताया गया है कि समाज में मनुष्य धरती पर अल्लाह का प्रतिनिधि है। क़ुरआन प्रकृति के बारे में बार-बार वर्णन करता है। जिसमें इसकी व्यापकता, स्थायित्व और प्राकृतिक घटनाक्रम की निरन्तरता स्पष्ट की गयी है। क़ुरआन की आयतों में से लगभग 1/8 भाग अर्थात 750 आयतें बुद्धि की विशेषताओं के वर्णन के लिए समर्पित हैं। 250 आयतें क़ानून देने वाली हैं जो सामाजिक और आर्थिक जीवन और दण्ड विधान और अन्तर्राष्ट्रीय क़ानून का नियम बताती हैं।

क़ुरआन मौलिक रूप से व्यक्ति के व्यक्तित्व का विकास करना चाहता है। क्योंकि प्रत्येक व्यक्तिगत रूप से अपने रचयिता के सामने उत्तरदायी है। इस उद्देश्य के लिए क़ुरआन केवल आदेश ही नहीं देता बल्कि इंसान को समझाने का भी प्रयास करता है। क़ुरआन मनुष्य को सही और ग़लत, सच और झूठ के बीच फ़ैसला करने में सहायता करने के लिए मार्गदर्शन देता है जिसके बिना मनुष्य निश्चित रूप से घाटे में रहेगा।

क़ुरआन अल्लाह के एकत्व के बारे में शाश्वत सत्य को बार-बार दुहराता है और अल्लाह के बन्दों को उस पर अटूट विश्वास करने, भले कर्म करने और पवित्र और नेक जीवन अपनाने का आह्वान करता है। ये मौलिक सिद्धान्त हैं जिन्हें यह लोगों की मुक्ति के लिए प्रदान करता है और यह इस्लाम का मूल आधार है।

क़ुरआन की सबसे छोटी सूरतों में से एक सूरः इख़्लास (112) विशेष रूप से अल्लाह के एकत्व, तौहीद का संक्षिप्त और पूर्ण विवरण देती है और पैग़म्बर (सल्ल0) ने इसीलिए इसे क़ुरआन का एक तिहाई भाग कहा है।

- सर्वशक्तिमान अल्लाह हमें बताता है कि उसका न कोई साझीदार है, न कोई बेटा न उसके कोई बराबर है और उस एक के सिवा कोई उपासना किए जाने का अधिकार नहीं रखता। किसी भी चीज़ की तुलना अल्लाह से नहीं की जा सकती और न कोई रचना उस जैसी है। क़ुरआन अल्लाह को मानवीय विशेषताएँ और सीमाएँ प्रदान करने से मना करता है।

"तुम्हारा पूज्य-प्रभु अकेला पूज्य-प्रभु है, उस कृपाशील और दयावान के अतिरिक्त कोई पूज्य-प्रभु नहीं।" (क़ुरआन, 2:163)

- चूँकि केवल अल्लाह ही अकेले उपासना का हक़दार है इसलिए झूठे देवताओं और खुदाओं का इंकार कर देना चाहिए। क़ुरआन अल्लाह के अतिरिक्त किसी को भी दिव्य विशेषताएँ प्रदान करने से इंकार करता है।

"अल्लाह की बन्दगी करो और उसके साथ किसी को साझी न बनाओ।" (क़ुरआन, 4:36)

जिस विश्वास की ओर क़ुरआन साधारण और स्पष्ट शब्दों में पुकारता है वह यह हैः

"ला इलाह इल्लल्लाह मुहम्मदु र्रसूलुल्लाह"

इसका अर्थ हैः "अल्लाह के सिवा कोई उपासना योग्य नहीं, मुहम्मद (सल्ल0) अल्लाह के पैग़म्बर हैं।"

इस्लाम में इबादत एक व्यापक शब्दावली है जिसमें वह सभी कर्म और कथन सम्मिलित हैं जिनका आदेश अल्लाह देता है, जिनको पसन्द करता है और जिन चीज़ों से खुश होता है।

- क़ुरआन विश्व-बन्धुत्व की शिक्षा देता है। यह इस विचार का इंकार करता है कि मनुष्य विभिन्न जातियों और वर्गों में पैदा किया गया है। अल्लाह विश्व-बन्धुत्व की एक इस्लामी धारणा प्रस्तुत करता है।

"ऐ लोगो! हमने तुम्हें एक पुरुष और एक स्त्री से पैदा किया और तुम्हें बिरादरियों और कबीलों का रूप दिया, ताकि तुम एक-दूसरे को पहचानो (न कि एक-दूसरे से घृणा करो)।" (क़ुरआन, 49:13)

- समता और न्याय एक ही सिक्के के दो पहलू हैं और क़ुरआन इन दोनों का चैम्पीयन है। अल्लाह की नज़र में सभी इन्सान बराबर हैं। चाहे वह मर्द हो या औरत, काला हो या गोरा, ग़रीब हो या अमीर, राजा हो या प्रजा, कुलीन हो या सामान्य। किसी व्यक्ति को दूसरों पर वरीयता देने वाली चीज़ें अल्लाह का डर, नेकी और अच्छे कर्म हैं। जहाँ तक नस्ल, रंग, भाषा और राष्ट्रीयता के भेद का सम्बन्ध है, क़ुरआन स्पष्ट करता है कि ये भेद केवल पहिचान के लिए हैं। इनका उद्देश्य वर्गीकरण, भेद-भाव और ऊँच-नीच नहीं है। मानव बन्धुत्व की आदर्श वैश्विक धारणा और न्याय की कामना को क़ुरआन में बहुत मुखर शब्दों में बयान किया गया हैः (देखिए क़ुरआन, 49:13, 4:135)
- क़ुरआन उन्हें याद दिलाता है कि सबको मौत का मज़ा चखना है और अपने कर्मों के लिए जबाबदेह होना है। क़ुरआन हमें पुरस्कार और दण्ड के सिद्धान्त, मृत्यु के बाद जीवन का निश्चित होना, फैसले के दिन अल्लाह के सामने हिसाब देने के लिए विवश होना, जन्नत और जहन्नम के अस्तित्व और अल्लाह के सन्देश वह्य की सच्चाई और इन्सान के लिए इसकी आवश्यकता आदि को याद दिलाता है।

क़ुरआन जन्नत के बाग़ों का मनोरम विवरण प्रस्तुत करता है जिसे अल्लाह के सच्चे आज्ञाकारी बन्दों को पुरस्कार में दिया जाएगा, क़ुरआन में बुरे कर्म करने वालों को जो कठोर दण्ड दिया जाएगा। उसका भी विवरण दिया गया है।

"सांसारिक जीवन तो एक खेल और तमाशे (ग़फ़लत) के अतिरिक्त कुछ भी नहीं है, जबकि आख़िरत का घर उन लोगों के लिए अच्छा है, जो डर रखते हैं।"

(क़ुरआन, 6:32)

- क़ुरआन लोगों से भावुक, स्पष्ट और ज़ोरदार शब्दों में अपील करता है कि वह मानवता को भलाई की ओर बुलाने के लिए अपने आप को संगठित करें ताकि वह भलाई का आदेश दें और बुराईयों से रोकें।

"और तुम्हें एक ऐसे समुदाय का रूप धारण कर लेना चाहिये जो अल्लाह की ओर बुलाये और भलाई का आदेश दे और बुराई से रोके। यही सफलता प्राप्त करने वाले लोग हैं।" (क़ुरआन, 3:104)

- क़ुरआन में ऐसी बहुत सी आयतें हैं जो प्राकृतिक घटनाओं को सटीक शब्दों में बयान करती हैं। जैसे भ्रूण विज्ञान, मौसम विज्ञान, नक्षत्र विज्ञान, भूगर्भ विज्ञान और समुद्र विज्ञान। वैज्ञानिकों ने क़ुरआन के इन विवरणों को अतुल्य रूप से सटीक और

आश्चर्यजनक सीमा तक सही पाया है। यह विवरण इसलिए आश्चर्यजनक है कि यह ऐसी किताब है जो बहुत पहले सातवीं सदी में अस्तित्व में आयी थी।

"शीघ्र ही हम उन्हें अपनी निशानियाँ बाहरी क्षेत्रों में दिखाएँगे और स्वयं उनके अपने भीतर भी, यहाँ तक कि उन पर स्पष्ट हो जाएगा।" (क़ुरआन, 41:53)

वास्तव में, क़ुरआन में जिन वैज्ञानिक चमत्कारों का उल्लेख किया गया है उनकी खोज अभी पिछली सदियों में तकनीकी उपकरणों के विकास के माध्यम से ही हो सकी है।

इसमें किसी देश के मुखिया के आचरण के लिए भी मार्गदर्शन किया गया है और सामान्य ग़रीब और अमीर लोगों के लिए भी।

- क़ुरआन एक व्यापक जीवन व्यवस्था है जो मानव जीवन के हर पहलू और हर चरण के बारे में मार्गदर्शन करता है। क़ुरआन अन्तर्राष्ट्रीय मामलों, वाणिज्य, अर्थशास्त्र, राजनीति, न्याय और सामाजिक जीवन, विवाह और सम्पत्ति की विरासत के सम्बन्ध में सबसे अच्छे नियम प्रस्तुत करता है। यह दण्ड विधान, पारिवारिक दायित्व के नियम, तलाक़ के नियम, नागरिक क़ानून आदि प्रदान करता है।
- क़ुरआन मानवीय विपदाओं के समाधान के लिए व्यापक दिशा-निर्देश देता है जो भूख, ग़रीबी, असमानता, अन्याय, विवाद, प्रकृति का बहुत अधिक शोषण या अल्लाह की रचना के साथ खिलवाड़ और लालच आदि से पैदा होते हैं।
- क़ुरआन की अनेक आयतें हमें बताती हैं कि अल्लाह ने क़ायनात की हर चीज़ को मनुष्य की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए बनाया है। आधुनिक विज्ञान भी यह सिद्ध करता है कि दुनिया की प्रत्येक वस्तु का अन्तिम उद्देश्य मानवता की सेवा है। यह ऐसा संसार है जहाँ एक सबके लिए है और सबको एक की सेवा के लिए बनाया गया है। यही प्रकृति का नियम है। इसी तरह मनुष्य के अस्तित्व का उद्देश्य अपने रचयिता के उद्देश्य को पूरा करने के अतिरिक्त और कुछ नहीं हो सकता। इस कर्त्तव्य का निर्वाह करने का एक तरीक़ा यह है कि अल्लाह की अन्य रचनाओं की आवश्यकताओं की पूर्ति की जाए और इसी तरह आपस में एक-दूसरे की आवश्यकताओं की भी। यही इबादत है जिसका सर्वोच्च रूप प्रकृत्ति में शान्ति और सामजस्य स्थापित करना और क़ायम रखना है इसके सम्बन्ध में हमारे रचयिता का आदेश है:

"और धरती में उसके सुधार के पश्चात बिगाड़ न पैदा करो। भय और आशा के साथ उसे पुकारो। निश्चय ही, अल्लाह की दयालुता सत्कर्मी लोगों के निकट है।" (क़ुरआन, 7:56)

- क़ुरआन लोगों से अपने मार्गदर्शन और शिक्षाओं का पालन करने का आह्वान करता है। मनुष्य की इस धरती पर और मृत्यु के बाद सफलता क़ुरआन की शिक्षाओं का पालन करने में निहित है। क़ुरआन लोगों को अपनी ऊर्जा और सम्पत्ति अल्लाह के क़ानून की सर्वोच्चता स्थापित करने के लिए ख़र्च करने और जिस समाज में वह रहते हैं उससे बुराईयों को मिटाने का आह्वान करता है।

- क़ुरआन की एक महत्वपूर्ण विशेषता इसकी व्यावहारिकता है। यह अव्यावहारिक आदर्शवाद को बढ़ावा नहीं देता। न ही इसकी शिक्षाएँ असंभव को संभव बनाने की माँग करती हैं और न नहीं प्राप्त किये जा सकने वाले आदर्शों की फूलों भरी धारा पर तैरने की माँग करती हैं। क़ुरआन मनुष्य से वही आशा करता है जिसके योग्य वह है और उसे वही बनने के लिए कहता है जो वह बन सकता है। क़ुरआन मनुष्य को असहाय या निराश प्राणी नहीं बताता जो जन्म से मृत्यु तक दोषी है और माँ के पेट से लेकर अपनी कब्र तक पाप में डूबा हुआ है, बल्कि क़ुरआन उसका चित्रण एक सभ्य आदरणीय और सम्मानित अस्तित्व के रूप में करता है।

क़ुरआन की शिक्षाओं की व्यावहारिकता पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल0) के आदर्शों से सिद्ध हो चुकी है। क़ुरआन का विशेष दृष्टिकोण यह है कि इसके निर्देशों का उद्देश्य मनुष्य की सामान्य भलाई है और ऐसी संभावनाओं पर आधारित है जो उसकी अपनी पहुँच में हैं।

इन सभी पहलूओं से क़ुरआन का विवेक अन्तिम है। यह शरीर की न तो निन्दा करता है, न इसे दुख पहुँचाता है और न ही आत्मा की अनदेखी करता है। यह न तो ईश्वर को मानव रूप देने का प्रयास करता है और न मनुष्य को देवता बताता है। क़ायनात की सम्पूर्ण योजना में हर चीज़ को सावधानीपूर्वक उसी स्थान पर रखा गया है, जहाँ उसे होना चाहिए।

- क़ुरआन एक मात्र धर्मग्रन्थ है जो सुरक्षित है। 1400 वर्ष पहले इसके अवतरित होने के बाद से लेकर अब तक इसमें न कुछ जोड़ा गया है और न इसमें से

कुछ निकाला गया है और न इसमें संसोधन किया गया है।

सर्वशक्तिमान अल्लाह क़ुरआन में फ़रमाता हैः

"यह अनुस्मरण निश्चय ही हमने अवतरित किया है और हम स्वयं इसके रक्षक हैं।" (क़ुरआन, 15:9)

क़ुरआन केवल लिखित रूप में ही सुरक्षित नहीं है बल्कि यह स्त्रियों, पुरुषों और बच्चों के दिलों में भी सुरक्षित है। आज लाखों लोगों ने क़ुरआन को आरम्भ से अन्त तक याद कर लिया है और इस तरह इसमें किसी परिवर्तन की आशंकाओं को समाप्त कर दिया है।

यह आयत क़ुरआन के आध्यात्मिक स्थान को स्पष्ट करने के लिए एक ज़ोरदार मिसाल प्रस्तुत करती हैः

"यदि हमने इस क़ुरआन को किसी पर्वत पर भी उतार दिया होता तो तुम अवश्य देखते कि अल्लाह के भय से वह दबा और फटा जाता है। ये मिसालें लोगों के लिए हम इसलिए पेश करते हैं कि वे सोच-विचार करें।"

(क़ुरआन, 59:21)

पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल0) ने फ़रमायाः

"सभी पैग़म्बरों को जनता में विश्वास जगाने के लिए चमत्कार दिए गए थे और जो चमत्कार मुझे दिया गया है वह क़ुरआन है।"

क़ुरआन का प्रभाव

क़ुरआन ने मानव इतिहास पर अतुल्य प्रभाव डाला है। इसमें सन्देह नहीं कि यह इतिहास की सबसे अधिक पढ़ी जाने वाली, उच्चारण की जाने वाली, याद की जाने वाली, बहस की जाने वाली, विश्लेषण की जाने वाली और श्रद्धा रखी जाने वाली किताब है। बाइबिल भी क़ुरआन के बराबर नहीं पढ़ी जाती। इस सम्बन्ध में बीसवीं सदी के क़ुरआन के सबसे अधिक सम्मानित अंग्रेजी अनुवादक और टीकाकार मुहम्मद असद की टिप्पणी सुनिए:

''हमारी जानकारी में जितनी घटनाएँ हैं, उनमें से एक अकेली घटना क़ुरआन का अवतरण है जिसने दुनिया के धार्मिक, सामाजिक और राजनैतिक इतिहास को मौलिक रूप से प्रभावित किया है। किसी और धर्मग्रन्थ ने कभी उन लोगों के जीवन पर ऐसा प्रभाव नहीं डाला जो क़ुरआन के संदेश के पहले सुनने वालों पर क़ुरआन ने डाला और उनके द्वारा आने वाली पीढ़ियों पर भी और उसके बाद आने वाली पूरी संस्कृति पर भी। इसने अरब को हिला मारा और हमेशा से लड़ने वाले क़बीलों को विकसित करके कुछ ही दशकों में एक देश बना दिया। इसने उनके वैश्विक दृष्टिकोण को अरब की सीमाओं से बहुत दूर तक फैलाया और पहला ऐसा वैचारिक समाज पैदा किया जिससे मानवता अवगत है। चेतना और ज्ञान पर ज़ोर देकर उसने अपने मानने वालों के अन्दर बौद्धिक उत्सुकता और स्वतन्त्र जाँच-पड़ताल की भावना पैदा की, और अन्ततः इसे विद्या और वैज्ञानिक शोध के ऐसे शानदार युग में पहुँचाया, जिसने इस्लामी दुनिया को अपने सांस्कृतिक ऊर्जा के शिखर पर पहुँचा दिया। और इस प्रकार क़ुरआन ने जो सभ्यता विकसित की, वह अनगिनत रास्तों और पगडण्डियों से मध्य-युगीय यूरोप में पहुँच गया और उस पश्चिमी सभ्यता को उभारा जिसे हम पुनर्जागरण कहते हैं और समय के साथ-साथ यह उस चीज़ के जन्म का कारण बना जिसे आज हम विज्ञान का युग कहते हैं। यह वही युग है जिसमें अब हम रह रहे हैं।''

वह्य अवतरण

एक आसमानी सम्प्रेषण

फ़रिश्ता जिब्रील (अलै0) कई बार मुहम्मद (सल्ल0) के सामने साक्षात् प्रकट हुए। पैग़म्बर (सल्ल0) ने बाद में बताया कि उनके समक्ष जिब्रील कभी-कभी फ़रिश्ते के रूप में आते और कभी-कभी मनुष्य के रूप में। कभी-कभी मुहम्मद (सल्ल0) घण्टी जैसी आवाज़ सुनते और अचानक वह्य अवतरित होने लगती और इसके लिए उन्हें इतना अधिक ध्यान केन्द्रित करना पड़ता कि दम घुटने लगता। यह अन्तिम विधि विशेष रूप से कष्टकर थी। इसके बावजूद इस प्रक्रिया के बाद वह जो वह्य प्राप्त करते उसको शब्दशः दुहरा सकते थे। 23 वर्ष तक फ़रिश्ता जिब्रील उनके साथ रहे और जब परिस्थितिजन्य आवश्यकता होती तो वह आयतें और वह सूरतें अवतरित कर देते जो अब अन्ततः क़ुरआन में सम्मिलित हैं।

क़ुरआन का यह अवतरण क़ुरआन में उस क्रम में नहीं है जिस क्रम में घटनाएँ घटित हुईं। क़ुरआन में वही क्रम है जिसे फ़रिश्ता जिब्रील ने मुहम्मद (सल्ल0) को संकेत में बता दिया था। रमज़ान के महीने में प्रतिवर्ष पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल0) फ़रिश्ता जिब्रील को जितना क़ुरआन अवतरित हो चुका होता उसे सुना देते और उसी क्रम में सुनाते जिस क्रम में जिब्रील ने उन्हें संकेत में बता दिया था। यह पुस्तक की सामग्री और स्वरूप को लगातार पुष्टि करने जैसा था, जो शनैः शनैः 23 वर्षों तक पैग़म्बर (सल्ल0) को मिलती रही।

क़ुरआन का संकलन

क़ुरआन का प्रत्येक शब्द जैसे ही फ़रिश्ता जिब्रील के माध्यम से पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल0) पर अवतरित किया जाता, उसे लिख लिया जाता था। फ़रिश्ता जिब्रील पैग़म्बर (सल्ल0) को सावधानीपूर्वक यह बता देते कि क़ुरआन की आयतों को किस क्रम में रखना है। क़ुरआन की आयतें जिस क्रम में अवतरित हुईं, उस क्रम में क़ुरआन में नहीं लिखी गयी हैं और यह विषय के अनुसार भी नहीं लिखी गयी हैं। इनका क्रम अल्लाह की योजना के अनुसार है और यह क़ुरआन की एक और अद्वितीय विशेषता है।

पैग़म्बर (सल्ल0) के सचिव और सेवक ज़ैद बिन साबित (रज़ि0) उन आयतों को उसी तरह लिखा करते थे जिस तरह पैग़म्बर (सल्ल0) उनको बताते थे। वह जो कुछ लिखते थे, उसे पढ़कर एक बार पैग़म्बर (सल्ल0) को सुनाते थे।

क़ुरआन में 114 अध्याय या सूरतें हैं। सबसे पहली प्रारम्भिक सूरः सूरः फ़ातिहा एक छोटी सूरः हैं इसके बाद क़ुरआन की सबसे बड़ी सूरः, सूरः बक़रः (गाय) आती है जिसमें 286 आयतें है। क़ुरआन की सूरतें आगे बढ़ते हुए क्रमशः छोटी होती जाती हैं। क़ुरआन की सबसे छोटी सूरः या अध्याय 108वां अध्याय सूरः क़ौसर (प्रचुर मात्रा) है। जिसमें केवल तीन आयतें हैं। क़ुरआन में कुल 6666 आयतें हैं। क़ुरआन की जो सूरतें पैग़म्बर के मक्का में रहते हुए अवतरित हुईं, उन्हें मक्की और जो सूरतें मदीना में रहते हुए अवतरित हुईं, उन्हें मदनी सूरतें कहा जाता है।

क़ुरआन को तीस भागों में भी बाँटा गया है। ये भाग आकार में लगभग समान हैं, जो उच्चारण (तिलावत) के उद्देश्य से सुविधाजनक हैं।

बहुत से प्रारम्भिक मुसलमान क़ुरआन को अवतरित होते ही याद कर लिया करते थे। कुछ प्रसिद्ध हाफिज मुआज़ बिन जबल, उबादा, अबू दरदा, अबू अय्यूब अंसारी और उबई बिन कअब थे।

पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल0) की मृत्यु के तुरन्त बाद 632 ई0 में हज़रत उमर (रज़ि0) ने उस समय के ख़लीफा हज़रत अबू बक्र (रज़ि0) को परामर्श दिया कि क़ुरआन को एक जिल्द में एकत्र कर दिया जाना चाहिए। उस समय तक क़ुरआन अलग-अलग जगहों पर लिख लिया गया था। क़ुरआन की सामग्री को एक जिल्द में एकत्र करने के लिए हज़रत ज़ैद बिन साबित की अध्यक्षता में एक समिति गठित की गयी।

क़ुरआन का उसी तरह संग्रह करने के लिए बहुत सावधानी बरती गयी जिसमें पैग़म्बर के समय में क़ुरआन लिखा गया था। सावधानी के साथ बार-बार जाँच-पड़ताल करके यह काम पूरा किया गया। ख़लीफा हज़रत उमर के ज़माने में क़ुरआन की यह प्रति पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल0) की एक विधवा हज़रत हफ्सा के पास रखी गयी थी।

बाद में क़ुरआन पढ़ाने के लिए मुस्लिम क्षेत्रों में बहुत से मदरसे खोले गए। ख़लीफा हजरत उमर (रज़ि0) के जमाने में इस तरह का एक मदरसा दमिश्क में था जिसमें 1600 छात्र थे और इस मदरसे के मुखिया प्रसिद्ध हाफिज़ अबू दरदा थे।

ख़लीफा हज़रत उस्मान (रज़ि0) की दूरदृष्टि से उठाए गए कदम ने क़ुरआन के एक समान उच्चारण को संभव बनाया। ख़लीफा उस्मान (रज़ि0) के ज़माने की दो मूल प्रतियाँ आज भी मौजूद हैं। इनमें से एक प्रति इस्ताम्बूल (तुर्की) के तोपकापी म्यूज़ियम में है और दूसरी प्रति ताशकन्द उज्बेकिस्तान में है। ताशकन्द की मूल प्रति की फोटोकॉपी कराची की नेशनल लाईब्रेरी में मौजूद है।

पैग़म्बर की जीवनी

पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल0) की जीवनी को अरबी में सीरत कहा जाता है और आपके जीवन का पूरा विवरण इतिहास में हर पहलू से मौजूद है। जो कुछ भी आपने किया और कहा, सब लिखा हुआ है। चूँकि पैग़म्बर (सल्ल0) लिख-पढ़ नहीं सकते थे इसलिए आपके साथ ऐसे 45 लोगों का समूह था जो आपके कथनों, कर्मों और निर्देशों को लिख लिया करते थे। पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल0) ने अपने महत्वपूर्ण फ़ैसलों को दस्तावेज़ के रूप में सुरक्षित करने पर स्वयं बल दिया था। लगभग आपके 300 दस्तावेज हम तक पहुँचे हैं जिनमें राजनीतिक समझौते, सैनिक भर्ती, अधिकारियों की नियुक्ति और राज्य के पत्र व्यवहार को रंगे हुए चमड़े पर लिखा जाता था। इस तरह हम आप (सल्ल0) के जीवन के छोटे-छोटे विवरण भी मौजूद पाते हैंः वह कैसे बोलते थे, कैसे बैठते थे, कैसे सोते थे, कैसा कपड़ा पहनते थे, कैसे चलते थे; पति के रूप में आपका व्यवहार, पिता और भतीजा की हैसियत से आपका व्यवहार, महिलाओं, बच्चों और जानवरों के प्रति आपका व्यवहार, आपके व्यापारिक लेन-देन और ग़रीबों और अनाथों से आपका व्यवहार, शिविरों और छावनियों में आपकी दिनचर्या, युद्ध में आपका व्यवहार, राजनैतिक सत्ता और सम्प्रभुता के सम्बन्ध में आपके कथन, आपकी व्यक्तिगत आदतें, पसंद और नापसंद, यहाँ तक कि अपनी पत्नियों के साथ व्यक्तिगत मामले भी लिखे हुए हैं। आपकी मृत्यु के कुछ ही दशकों के अन्दर पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल0) के जीवन के विवरण मुस्लिम समाज के लिए लिखित रूप में मौजूद थे। पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल0) की सबसे प्रारम्भिक और प्रसिद्ध जीवनियों में से एक आपकी मृत्यु के बाद 100 वर्ष के अन्दर लिखी गयी जिसका नाम सीरत रसूलुल्लाह है, और इसके लेखक इब्ने इस्हाक हैं।

हदीस

पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल0) ने जब पहली वह्य प्राप्त की। उस समय से लेकर अन्त तक के आपके दैनिक कथनों और वार्त्ताओं को हदीस कहा जाता है। हदीस का शाब्दिक अर्थ कथन है। इस प्रकार हदीस पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल0) के कथनों या रिवायतों को कहा जाता है।

आपके जीवनकाल में पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल0) के सेवकों और साथियों द्वारा हदीसों को विभिन्न वस्तुओं जैसे पपीरस, ताड़ के पत्तों, हड्डियों, चमड़ों, सफेद पत्थरों पर लिखे जाते थे और उनको याद भी कर लिया जाता था। आपकी मृत्यु के बाद मुसलमानों ने आपकी हदीसों को रिवायत करने, उनकी जाँच करने और उनकी पुष्टि करने का अलग विज्ञान विकसित किया। हदीस की जाँच की यह विधि मुस्लिम सभ्यता की पहिचान बन गयी और उसके माध्यम से साहित्य का एक बड़ा भण्डार अस्तित्व में आया।

10 वर्ष की उम्र में हज़रत अनस (रज़ि0) ने लिखना और पढ़ना सीख लिया था। उनके माता-पिता ने पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल0) से अनुरोध किया था कि उन्हें अपना व्यक्तिगत सचिव और सेवक नियुक्त कर लें। पैग़म्बर (सल्ल0) ने उस प्रस्ताव को स्वीकार कर लिया और किशोर अनस आपके सचिवों में सम्मिलित हो गए और आपके साथ दिन रात रहा करते थे। पैग़म्बर (सल्ल0) की मृत्यु के बाद हज़रत अनस हदीस के प्रसिद्ध रावी बन गए। वह अपने दस्तावेजों के पन्नों को खोला करते और कहतेः "ये पैग़म्बर (सल्ल0) के वह कथन हैं जिन्हें मैंने नोट किया है। और लिखने के बाद उसकी जाँच के लिए पैग़म्बर (सल्ल0) को पढ़कर सुनाया भी है।

प्रारम्भिक मुस्लिम विद्वान ईमाम बुख़ारी हदीस के प्रसिद्ध संग्रहकर्त्ता थे, आपने कुल 7275 रिवायतों को एकत्र किया। इनको आपकी प्रसिद्ध किताब सहीह बुख़ारी में संकलित किया गया है। इमाम मुस्लिम ने 9200 हदीसें एकत्र की। जिन्हें हम उनकी किताब सहीह मुस्लिम में पाते हैं। आज हदीस के 6 प्रामाणिक संग्रह प्रसिद्ध हैं जिनको उनके संग्रहकर्त्ता के नाम से जाना जाता है। *मुस्लिम* और *बुखारी* के अतिरिक्त चार किताबें तिर्मिज़ी, इब्ने माज़ः अबू दाऊद और अन-निसाई हैं।

सुन्नत

सीरत (पैग़म्बर (सल्ल0) की जीवनी) और हदीस को एक साथ सुन्नत कहा जाता है। सुन्नत शब्द का अर्थ विधि, आदर्श या मार्ग है। सुन्नत पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल0) के सन्देश का अविभाज्य अंग है जिसमें आपके कथन और कर्म, आपके आसमानी मिशन का इस दुनिया में व्यवहार में लाया जाना सम्मिलित हैं। इस तरह इसे प्रत्येक मुसलमान के आदर्श व्यवहार का मॉडल समझा जाता है। सुन्नत के द्वारा ही मुसलमान अपने ईमान के कर्मकाण्डों/ अमल और आध्यात्मिक पहलूओं को जानते हैं। जैसे नमाज़ कैसे पढ़ी जाए, रोज़ा कैसे रखा जाए और हज कैसे किया जाये। लेकिन सुन्नत नैतिक और सामाजिक मामलों में मार्गदर्शन भी है। इस प्रकार जो मुसलमान पवित्र जीवन व्यतीत करना चाहता है वह जीवन के उन सिद्धान्तों और दिनचर्या का पालन करता है जो पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल0) ने किया है। इस प्रकार सुन्नत इस्लामी जीवन व्यवस्था है।

"सुन्नत इस्लामी क़ानून का मौलिक स्रोत है। क़ुरआन और सुन्नत दोनों इस्लाम के सैद्धान्तिक और व्यावहारिक पहलू हैं।"

7

ईमान (आस्था) की प्रासंगिकता

इस अध्याय में हम इस्लाम द्वारा प्रदान किए गए ईमान के प्रमुख अभ्यासों पर वार्त्ता करना चाहते हैं। ये अभ्यास नमाज़ें, रोज़े, ज़कात और हज हैं। जिस तरह अल्लाह ने इन अभ्यासों को करने का आदेश दिया है। वह सभी आध्यात्मिक उद्देश्यों और मानवीय आवश्यकताओं की पूर्ति करती हैं। इसमें से कुछ अभ्यास दैनिक हैं, कुछ साप्ताहिक हैं, कुछ मासिक हैं। कुछ वर्ष में दो बार और कुछ वार्षिक हैं और कुछ को जीवन में कम से कम एक बार करने की आवश्यकता होती है। इस तरह इनमें सप्ताह के सभी दिन, महीने के सभी सप्ताह, वर्ष के सभी महीने और जीवन के सभी वर्ष और सबसे बढ़कर आसमानी धारणा के साथ पूरा जीवन सम्मिलित है।

ईमान मनुष्य को अपनी श्रद्धा और इसके अनुसार लगातार अमल करने के लिए प्रेरित करता है।

ईमान की प्रासंगिकता

इस्लाम धर्म में ईमान और उसके अभ्यास के बीच आपसी सम्बन्ध धर्म के पूरे ढाँचे पर स्पष्ट प्रभाव डालते हैं और इससे इसकी शिक्षाओं का गहरा दर्शन प्रदर्शित होता है। इस्लाम आत्मा और शरीर, भाव और पदार्थ, धर्म और जीवन में किसी भेद को नहीं मानता। यह अपनी आध्यात्मिक प्रकृत्ति की अनदेखी नहीं करता क्योंकि इसके बिना

वह जानवर जैसा हो जाएगा। वह अपनी भौतिक आवश्यकताओं को हेय नहीं समझता क्योंकि ऐसा करके वह फ़रिश्ता हो जाएगा। हालाँकि वह फ़रिश्ता नहीं है क्योंकि वह फ़रिश्ता कभी नहीं बन सकता।

इस्लाम पूरी तरह मानव प्रकृत्ति को उसी तरह स्वीकार करता है जैसी वह है और मनुष्य के आध्यात्मिक और भौतिक सम्पन्न्नता में गहरी रुचि लेता है, इस्लाम धर्म को केवल व्यक्तिगत मामला या जीवन के सामान्य मामलों से अलग नहीं समझता। दूसरे शब्दों में धर्म का उस समय तक कोई महत्व नहीं है, जब तक उसकी शिक्षाएँ जीवन के व्यक्तिगत और सामाजिक पक्ष पर अपना प्रभाव न छोड़ें। दूसरी तरफ यदि जीवन आसमानी क़ानून के अनुसार संगठित न हो और व्यवहार में न लाया जाए तो यह निरर्थक हो जाता है।

इससे स्पष्ट होता है कि इस्लाम अपने आप को जीवन के सभी पहलूओं; व्यक्तिगत और सामाजिक व्यवहार, मजदूर और उद्योग, अर्थव्यवस्था और राजनीति, राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्ध आदि को संगठन की भावना तक क्यों फैलाए हुए है। इससे यह भी स्पष्ट होता है कि इस्लाम क्यों व्यक्ति के दैनिक मामलों को धर्म से अलग नहीं करता। सच्चे धर्म और अर्थपूर्ण जीवन के बीच तालमेल महत्वपूर्ण है। इसीलिए इस्लाम जीवन के सभी क्षेत्रों में अपने आप को फैलाता है ताकि मनुष्य की गतिविधियों को गंभीर और परिपूर्ण ढंग से चलाए, जो अल्लाह के लिए स्वीकार्य हो और मनुष्य के लिए उपकारी हो। सच्चे धर्म और दैनिक जीवन के बीच इस अनिवार्य सामन्जस्य के कारण ही इस्लाम इस सिद्धान्त को नहीं मानता कि छः दिन मेरे लिए हों और एक दिन मेरे खुदा के लिए हो।

इसी तरह यदि मनुष्य छः दिन विशेष ध्यान-ज्ञान के लिए निर्धारित कर ले और एक दिन अपने लिए तो भी किसी तरह यह उसके लिए अच्छा नहीं होगा। सन्तुलन अब भी बिगड़ा रहेगा।

इस्लाम के पाँच स्तम्भ

क़ुरआन का सन्देश और पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल0) की हदीसें दोनों इस्लामी जीवन व्यवस्था की व्यापकता, इसकी व्यक्तिगत और सामूहिक पहलूओं का वर्णन करते हैं। ईमान के लिए पाँच स्तम्भ या मौलिक कर्त्तव्य महत्वपूर्ण हैं जो सभी ईमानवाले मुसलमानों के लिए अनिवार्य हैं।

इन पाँच स्तम्भों का उल्लेख पैग़म्बर (सल्ल0) की एक हदीस में आया है।

शहादत	ईमान की घोषणा
सलात	दिन में पाँच बार फर्ज़ नमाज़ें और जुमें की नमाज़
सियाम	रमज़ान के महीने के रोजे
जक़ात	ग़रीबों की भलाई के लिए आर्थिक सहयोग या दान
हज	मक्का की तीर्थयात्रा

शहादत या ईमान की घोषणा

शहादत या ईमान की घोषणा करने का अर्थ इस्लामी समुदाय की सदस्यता ग्रहण करना है: अरबी में यह घोषणा इन शब्दों में की जाती है:

'ला इलाह इल्लल्लाह मुहम्मदु र्रसूलुल्लाह'

इसका अर्थ है: *''अल्लाह के सिवा कोई उपासना योग्य नहीं और मुहम्मद अल्लाह के पैग़म्बर हैं।''*

जो लोग क़ुरआन को अल्लाह की वाणी और मुहम्मद को अल्लाह का पैग़म्बर स्वीकार करते हैं। उन्हें मुसलमान कहा जाता है। एक मुसलमान शहादत का क़लिमा

पढ़कर अपने मुसलमान होने की घोषणा करता है।

इस साधारण घोषणा का व्यापाक अर्थ है और इसके परिणामस्वरूप मुसलमान के जीवन पर व्यापक प्रभाव पड़ते हैं।

1. इसका अर्थ यह है कि वास्तविक अस्तित्व केवल अल्लाह का ही अस्तित्व है। यह पूरा अस्तित्व केवल इसलिए है क्योंकि अल्लाह इनका अस्तित्व जारी रखना चाहता है।

2. चूँकि हमारा अस्तित्व अल्लाह की मर्जी और कृपा से है इसलिए हम पूरी तरह उसपर निर्भर हैं। अल्लाह से हमारा सम्बन्ध सेवक और स्वामी जैसा है।

3. हम अल्लाह के सामने अपने विचारों और कर्मों के लिए उत्तरदायी होंगे जिसके सामने हमें क़यामत के दिन अपने सांसारिक कर्मों का हिसाब देना होगा और उस दिन वह फ़ैसला करेगा कि आख़िरत या परलोक में हमारी अन्तिम मंजिल कहाँ होगी।

4. अन्तिम फ़ैसले के लिए अपने आप को तैयार करने के लिए हमें अल्लाह की मर्जी के अनुसार नेक और ज़िम्मेदारा जीवन व्यतीत करना चाहिए।

5. अल्लाह की मर्ज़ी का ज्ञान केवल उसके पैग़म्बरों के माध्यम से ही हो सकता है। इसलिए अल्लाह पर ईमान के लिए उसकी वह्य अर्थात उसकी किताब और उसके पैग़म्बरों पर ईमान लाना आवश्यक है।

6. सभी क़बीलों और देशों में भेजे गए पैग़म्बरों में से मुहम्मद (सल्ल0) अन्तिम पैग़म्बर हैं जो पैग़म्बरी पर मुहर लगाने वाले हैं और वह्य की प्रक्रिया को पूरी करने वाले हैं।

7. चूँकि अल्लाह अदृश्य है और मानव समझ से परे है। इसलिए वह अपना संदेश अपने पैग़म्बरों के पास, अपने कार्यकर्त्ताओं अर्थात् फ़रिश्तों द्वारा भेजता है।

धार्मिक कर्मकाण्ड और इस्लाम में समर्पित जीवन

अल्लाह ने मानव-जाति की रचना अपनी उपासना के लिए की है। वह क़ुरआन में कहता है:

"मैंने तो जिन्नों और मनुष्यों को केवल इसलिए पैदा किया है कि वे मेरी बन्दगी करें।" (क़ुरआन, 51:56)

इबादत

बन्दगी और उपासना के लिए इस्लामी शब्द इबादत है जिसकी धातु वही है जो अब्द अर्थात् गुलाम की है। दूसरे शब्दों में उपासना वही है जो एक दास या गुलाम करता है और बन्दगी वही है जो उसका स्वामी कराना चाहता है।

उपासना या बन्दगी

पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल0) ने घोषणा की *"उपासना धर्म का स्तम्भ है और आपने कहा अल्लाह के लिए समर्पण ही इस्लाम है और व्यक्ति को उपासना और बन्दगी को नियमित रूप से करना चाहिए, साल में एक बार रोज़ा रखना चाहिए, हज करना चाहिए और ज़कात देना चाहिए।"*

प्रतिदिन पाँच बार निर्धारित समय पर नमाज़ पढ़नी चाहिए और जहाँ पर जुमे की नमाज़ होती है वहाँ जुमे की नमाज़ में सम्मिलित होना चाहिए।

"निःसन्देह मैं ही अल्लाह हूँ। मेरे सिवा कोई पूज्य-प्रभु नहीं। अतः तू मेरी बन्दगी कर और मेरी याद के लिए नमाज़ क़ायम कर।" (क़ुरआन, 20:14)

मस्जिद

पूरी दुनिया में नमाज़ प्रतिदिन पाँच बार हर मस्जिद में पढ़ी जाती है। एक मुसलमान से आशा की जाती है कि वह पाँच वक्त की नमाज़ मस्जिद में पढ़ना पसन्द करेगा। इसका आदेश इसलिए दिया गया है कि लोगों के बीच सामाजिक बन्धन मजबूत किए जाएँ और ऐसा समाज विकसित किया जाए जिसमें लोग एक-दूसरे को जानते हों और एक-दूसरे के सुख-दुख और चिन्ताओं में साझा करते हों।

1. मस्जिद इस्लाम के अनुयायियों के लिए एक उपासना-स्थल है और यह वह स्थान है जहाँ कोई अपना माथा अल्लाह के सामने टेकता है।

2. बहुत सी अनेक मस्जिदों में भव्य गुम्बदें, मीनारें और नमाज़ के लिए हॉल होते हैं।

3. मस्जिद में नमाज़ पढ़ते हुए सामने कोई मूर्ति, आकृति, ऐतिहासिक अवशेष (पैग़म्बर का) या कोई पवित्र पुस्तक नहीं रखी जाती।

4. न तो मस्जिद में कोई प्रवेश शुल्क लगता है और न ही मस्जिद में नमाज़ के लिए प्रवेश होने पर नारियल, मिठाईयाँ, अगरबत्तियाँ या चादर आदि चढ़ाने की आवश्यकता होती हैं।

5. मस्जिद एक ऐसे स्थान के रूप में काम करती है जहाँ मुसलमान नमाज़ के लिए एकत्र हो सकते हैं। इसके अतिरिक्त यह सूचना, शिक्षा और विवादों का समाधान करने के लिए एक केन्द्र होती है।

6. सभी मुसलमान एक पंक्ति में खड़े होकर नमाज़ पढ़ते हैं। मस्जिद में नमाज़ पढ़ते हुए किसी भी व्यक्ति के साथ विशेष वरीयतापूर्ण व्यवहार नहीं किया जाता और किसी को सामाजिक, आर्थिक या राजनीतिक पद के कारण विशेष स्थान नहीं आवंटित किया जाता है।

7. नमाज़ का समय आसमान में सूरज की स्थिति के अनुसार निर्धारित किया जाता है। नमाज़ों के समय का कठोरता से पालन किया जाता है। किसी महत्वपूर्ण व्यक्ति के लिए नमाज़ के समय को निर्धारित या बदला नहीं जा सकता।

8. इमाम नमाज़ पढ़ाते हैं; मस्जिदों में पुरोहितवाद का पालन नहीं किया जाता। कोई भी आलिम या विद्वान व्यक्ति जिसके आचरण पर समाज के लोगों को भरोसा हो वह नमाज़ पढ़ा सकता है।

9. ग़ैर मुस्लिमों को भी मस्जिद में आने की अनुमति दी जाती है।

10. जानवरों की क़ुर्बानी मस्जिद में नमाज़ का अंग नहीं है।

11. नशीले पेय पीने के बाद मस्जिद में प्रवेश वर्जित है यहाँ तक कि वह लोग जिन्होंने कच्चा लहसन या प्याज चबाया होता हो, उन्हें भी मस्जिद में प्रवेश से पहले अपना मुँह साफ करने का परामर्श दिया गया है।

" पूरी धरती मस्जिद है "

पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल0) ने फ़रमाया, पूरी धरती मस्जिद है। पैग़म्बर की इस हदीस का साधारण अर्थ यह है कि अल्लाह ने पैग़म्बर को धरती पर कहीं भी नमाज़ पढ़ने की अनुमति दी है। पृथ्वी का कोई भाग मौलिक रूप से अशुद्ध नहीं है। इसी प्रकार मुसलमान पैग़म्बर का अनुकरण करते हुए कहीं भी नमाज़ पढ़ सकते हैं। अतः कोई व्यक्ति सदैव यह देख सकता है कि मुसलमान सार्वजनिक स्थलों जैसे पार्कों, सड़क के किनारे, रेलवे प्लेटफार्म और एयरपोर्ट के टर्मिनलों पर नमाज़ पढ़ते हैं। मुसलमानों के लिए पूरी धरती पूजा स्थल है। वह निर्धारित समय पर अल्लाह को याद करते हैं और नमाज़ पढ़ते हैं, चाहे वह कहीं भी हों।

इस साधारण अर्थ के अतिरिक्त पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल0) की हदीस का एक अधिक महत्वपूर्ण अर्थ है। एक मुसलमान इस वास्तविकता को महसूस करता है कि मस्जिद एक शान्तिपूर्ण स्थान है; इसमें लोग शुद्ध स्थिति में प्रवेश करते हैं। उनके शरीर और उनके कपड़े स्वच्छ होते हैं। उनके मन और हृदय भी शुद्ध होते हैं; वह मस्जिद में अल्लाह के विनम्र उपासक के रूप में आते हैं। जब वह मस्जिद में प्रवेश करते हैं, तो मस्जिद में पहले से मौजूद लोगों को अस्सलामु अलैकुम कहते हैं। यह नये आने वालों की ओर से सलामती की घोषणा होती है। मस्जिद शान्ति और सौहार्द को प्रतिबिम्बित करती है और यह एकत्ववाद (उपास्य की एकता) और मानव-बन्धुत्व का सन्देश देती है।

अतः जब पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल0) ने धरती की तुलना मस्जिद से की तो आप इस बात पर भी बल दे रहे थे कि धरती को शान्तिपूर्ण स्थान बनाया जाए। पैग़म्बर के दृष्टिकोण के अनुसार सभी लोग शान्ति का आनन्द धरती पर हर जगह ले सकें। शान्ति का आदर्श उसी समय प्राप्त किया जा सकेगा जब धरती वास्तव में मस्जिद तुल्य हो जाएगी और मस्जिद ही की तरह सौहार्द और मानव-बन्धुत्व का सन्देश फैलाएगी।

' अज़ान '

नमाज़ के लिए पुकार

लोगों को नमाज़ के लिए पुकारने हेतु मीनारों से अज़ान दी जाती है।

माइक्रोफोन से अज़ान देने में मात्र दो से तीन मिनट लगते हैं।

इस्लाम के पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल0) ने अज़ान के शब्दों को निर्धारित किया। अज़ान के इन शब्दों को कोई भी व्यक्ति जकार्ता से कासाब्लान्का तक मीनारों से आसमान में गूँजते हुए सुन सकता है। उस समय चर्चों में बजने वाले घण्टों और अन्य मन्दिरों में शंख की आवाजों से भिन्न अज़ान को पुकारने के लिए एक विधि के रूप में अपनाया गया। यदि लोगों के सामने अज़ान के शब्दों के अर्थों को भी प्रस्तुत कर दिया जाए तो यह लाभदायक होगाः

1. अल्लाहु अकबर	अल्लाह सबसे बड़ा है। (चार बार)
2. अशहदु अन् ला इलाह इल्लल्लाह	'मैं गवाही देता हूँ कि अल्लाह के अतिरिक्तकोई उपास्य नहीं है'। (दो बार)
3. अशहदु अन्न मुहम्मद र्रसूलुल्लाह	मैं गवाही देता हूँ कि मुहम्मद अल्लाह के पैग़म्बर हैं। (दो बार)
4. हय्य अलस्सलाह	आओ नमाज़ की ओर। (दो बार)
5. हय्य अललफलाह	आओ भलाई की ओर। (दो बार)
6. अल्लाहु अकबर	अल्लाह सबसे बड़ा है। (एक बार)
7. ला इलाह इल्लल्लाह	अल्लाह के अतिरिक्त कोई पूज्य नहीं।

- फज्र की अज़ान में हय्य अलल फलाह के बाद दो अतिरिक्त शब्द जोड़ दिए जाते हैं। वह शब्द हैं:

'अस्सलातु खैरुम् मिनन नौम' ''नमाज़ नींद से बेहतर है।'' (दो बार)

सदैव से यही पुकार जो अल्लाह की बड़ाई की स्वीकारोक्ति (अल्लाहु अकबर), आस्था की घोषणा (मैं गवाही देता हूँ कि अल्लाह के अतिरिक्त कोई उपास्य नहीं और मुहम्मद (सल्ल0) अल्लाह के पैग़म्बर हैं) और लोगों को नमाज़ की ओर एक आमंत्रण और संसार और परलोक में सफलता की पुकार लगभग पन्द्रह सदियों से मुस्लिम कस्बों और शहरों में गूँज रही है। विभिन्न बोलियों, स्वरों और ध्वनियों में उठने वाली यह पुकार अपने संगीत में अल्लाह की प्रशंसा कर रही है और जनता को आध्यात्मिकता की ओर पुकार रही है।

यदि यह सुबह जगाती है तो शाम में दिन के समापन की घोषणा करती है औ जब अन्धकार हो जाता है तो यही अज़ान दिन के पूर्णतः अन्त की घोषणा कर देती है।

यह एक मात्र स्वामी अल्लाह की याद दिलाती है जो अपने बन्दों को उनकी ब्यस्त दिनचर्या से खींचकर आध्यात्मिक शक्ति से लैस करने के लिए लाता है ताकि वह अपने स्वामी से वादों का नवीनीकरण करके और अपने अन्दर नेकियाँ भर कर अपने सांसारिक कर्तव्य की ओर लौटें।

वज़ू या अर्द्ध स्नान
' सफाई आधा ईमान है '

नमाज़ के लिए वज़ू अनिवार्य है। हमें वज़ू किए बिना नमाज़ नहीं पढ़नी चाहिए, अल्लाह तआला क़ुरआन में फ़रमाता है:

"ऐ ईमान लानेवालो! जब तुम नमाज़ के लिए उठो तो अपने चेहरों को और अपने हाथों को कुहनियों तक धो लिया करो और अपने सिरों पर हाथ फेर लो और अपने पैरों को भी टखनों तक धो लो।" (क़ुरआन, 5:6)

पैग़म्बर ने फ़रमाया है: "सफाई आधा ईमान है"। इसलिए, जब कोई नमाज़ पढ़ने की नीयत करे तो उसे सबसे पहले अपने शरीर की सफाई करनी चाहिए। सामान्य रूप से दैनिक नमाज़ों के लिए साधारण वज़ू हैं।

वज़ू इस तरह किया जाता है: सबसे पहले अपनी सफाई के लिए नीयत करने की दुआ पढ़ी जाती है। यह दुआ 'बिस्मिल्लाह' अर्थात अल्लाह के नाम से है। इसके बाद कहा जाता है "प्रशंसा अल्लाह के लिए है जिसने पानी को शुद्ध और शुद्ध करने वाला बनाया है।" फिर दोनों हाथ कलाईयों तक धोया जाता है। पानी से मुँह में कुल्ली की जाती है। नाक में पानी डालकर साफ किया जाता है, चेहरे को पेशानी से ठुड्डी तक और एक कान से दूसरे कान तक धोया जाता है। फिर अल्लाह से दुआ की जाती है *क़यामत के दिन मेरे चेहरे को चमका दीजिए और इसे काला मत कीजिए।* फिर पहले दाहिना हाथ कोहनी तक धोना चाहिए और फिर बायाँ हाथ (कोहनी को भी धोना चाहिए) फिर ऊँगलियाँ भिगाकर सिर पर फैरना चाहिए और भीगी हुई ऊँगलियाँ कानों के अन्दर फेरते हुए यह दुआ पढ़नी चाहिए: "मुझे लाभदायक ज्ञान सिखाईए। इसके बाद पहले दाहिना पैर और फिर बायाँ पैर टखनों तक धोना चाहिए। हर चरण तीन बार दोहराना चाहिए (यदि पानी की कमी हो तो इस स्थिति में एक बार ही काफी है) फिर यह दुआ पढ़नी चाहिए: मेरे पैरों को जहन्नम के ऊपर के रास्ते से गुजरते हुए विचलित न होने दीजिए और उस दिन मेरे पैरों को लड़खड़ाने मत दीजिए जिस दिन आपके प्यारे बन्दों के पैर जमे रहेंगे और आपके दुश्मनों के पैर लड़खड़ाएँगे।

यह कहते हुए नीयत कीजिए

"बिस्मिल्लाहि रहमानि रहीम"

अल्लाह के नाम से जो अत्यन्त दयावान और बहुत कृपाशील है।

फिर दोनों हाथ कलाईयों तक धोईए और यह सुनिश्चित कीजिए कि पानी ऊँगलियों के बीच पहुँच जाए।

हाथ में पानी भरकर उठाइए और मुँह में लेकर अच्छी तरह तीन बार कुल्ली कीजिए।

तीन बार नाक में पानी खीचकर इसे धोइए

और इसके बाद नाक की नोक को धोइए

तीन बार अपने चेहरे को दाहिने कान से लेकर बाँये कान तक और पेशानी से लेकर गले तक धोइए।

फिर दाहिने हाथ को कुहनियों तक तीन बार धोईए और फिर बायें हाथ को तीन बार कुहनियों तक धोइए।

अपनी दोनो हाथ की भीगी हुई हथेलियों से सिर के ऊपर पेशानी से लेकर गर्दन तक फेरिए।

अपनी भीगी हुई ऊगलियों को दोनों कानों के पीछे और कानों के अन्दर घुमाइए और भीगे हुए अगूठे को कान के पीछे फेरिए। अपने भीगे हुए हाथों को गर्दन के पीछे फेरिए।

दोनों पैर टखनों तक धोईए। पहले दाहिना पैर धोईए फिर बायाँ पैर। फिर सुनिश्चित कीजिए कि पानी पैर की ऊगलियों के बीच और पैर के सभी हिस्सों तक पहुँच जाए।

अन्त में यह दुआ पढ़िए:

अश्हदु अल्ला इलाह इल्लल्लाहु वहदहू ला शरीक लहू व अश्हदु अन्न मुहम्मदन अबदुहू व रसूलुहू

मैं गवाही देता हूँ कि अल्लाह के सिवा कोई उपासना योग्य नहीं और वह अकेला है और उसका कोई साझीदार नहीं और मैं गवाही देता हूँ कि मुहम्मद (सल्ल0) उसके बन्दे और पैग़म्बर हैं।

सलात
नमाज़

अल्लाह ने मनुष्य को अपनी इबादत करने के लिए पैदा किया है। वह कुरआन में फ़रमाता हैः

"मैंने तो जिन्नों और मनुष्यों को केवल इसलिए पैदा किया है कि वे मेरी बन्दगी करें।" (कुरआन, 51:56)

"निःसन्देह मैं ही अल्लाह हूँ। मेरे सिवा कोई पूज्य-प्रभु नहीं। अतः तू मेरी बन्दगी कर और मेरी याद के लिए नमाज़ क़ायम कर।" (कुरआन, 20:14)

नमाज़ मुसलमानों के एक अल्लाह और मानवता के लिए अन्तिम संदेश, इस्लाम पर ईमान का व्यावहारिक प्रमाण है। इसे कुछ निर्धारित समयों में पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल0) द्वारा अनिवार्य कर दिया गया है। ये नमाज़ें फर्ज़ हैं और ये इबादत करने वाले और उसके मालिक के बीच सीधा सम्बन्ध स्थापित करती हैं।

इस्लाम मुसलमानों से केवल इस इबादत को करने का ही आदेश नहीं देता बल्कि यह उनसे चाहता है कि वह अपने दिलों को शुद्ध करें अल्लाह तआला नमाज़ों के बारे में कहता है किः

"निःसन्देह नमाज़ अश्लीलता और बुराई से रोकती है।" (कुरआन, 29:45)

हर मुसलमान चाहे वह मर्द हो या औरत, उसे प्रतिदिन पाँच नमाज़ें समय पर पढ़नी चाहिए, यदि उसके पास छोड़ने का कोई वैध कारण न हो। यह पाँच नमाज़ें हैंः

1. **फज्र** : फज्र की नमाज़ सूरज निकलने से ठीक पहले होती है।
2. **जुहर** : जुहर की नमाज़ दोपहर बाद उस समय होती है जब सूरज सिर से ढलने लगता है।

3. अस्र : तीसरी नमाज अस्र उस समय होती है जब चीज़ों की छाया अपनी लम्बाई की दो गुनी हो जाती है।

4. मग़रिब : मग़रिब की नमाज़ सूर्यास्त के तुरन्त बाद पढ़ी जाती है।

5. इशा : पाँचवी या दिन की आखिरी नमाज़ उस समय पढ़ी जाती है जब रात का अधेरा पूरी तरह छा जाता है। यह समय लगभग सूर्यास्त के 90 मिनट बाद आरम्भ होता है।

उपरोक्त फर्ज नमाज़ों की प्रकृत्ति, शारीरिक स्थिति और इनमें पढ़ी जाने वाली दुआएँ एक समान होती हैं। लेकिन उनकी लम्बाई अर्थात रकअतों की संख्या भिन्न होती है। जब ईमान वाला नमाज़ पढ़ता है, उस समय वह अपने स्वामी से बहुत निकट और गुप्त सम्बन्ध में होता है और उस अवसर पर उसे यह जानना चाहिए कि वह अपने मालिक से क्या कह रहा है?

जब हम इस्लामी इबादत का विश्लेषण करते हैं और इसकी अनोखी प्रकृति का अध्ययन करते हैं तो हमें यह पता चलता है कि यह केवल शारीरिक गतिविधि या क़ुरआन का मात्र उच्चारण नहीं होता। इस अद्वितीय दुआ में नैतिक उत्थान, शारीरिक अभ्यास, बौद्धिक ध्यान और आध्यात्मिक श्रद्धा सब कुछ सम्मिलित है। यह विशेष रूप से इस्लामी अनुभव है जिसमें शरीर की प्रत्येक माँसपेशी अल्ल्लाह की बड़ाई का गुणगान करने में आत्मा और मन के साथ होती है।

चूँकि नमाज़ एक औपचारिक इबादत है इसलिए यह सभी मुसलमानों के लिए अनिवार्य अनुशासन है। बन्दे के लिए इसे अनिवार्य करके इस्लाम ने अपने अनुयायियों को अनुशासित करना और अल्लाह के अस्तित्व से उन्हें सचेत रखना चाहा है। नमाज़ एक मुसलमान को समय का पाबन्द करती है और उसे जीवन के स्वस्थ संचालन का अभ्यस्त बनाती है। ताज़ा पानी से वज़ू के माध्यम से नमाज़ ताजगी पैदा करने और स्वच्छता देने वाला अभ्यास है और बार-बार खड़े होने, झुकने, सजदा करने और बैठने के द्वारा यह शरीर के लिए एक अभ्यास होती है। नमाज़ आध्यात्मिक सन्तोष और भावनात्मक आवश्यकताओं की पूर्ति है। प्रतिदिन की शारीरिक आवश्यकताओं से अपने आप को मुक्त करना, अल्लाह पर और उसके अस्तित्व और उसकी मर्ज़ी पर ध्यान लगाना

अपने आप को परम सत्य और क़ायनाती हस्ती तक ऊपर उठाना है। इस तरह का अभ्यास करके इबादत करने वाला जीवन की समस्याओं का सामना करने के लिए पहले की तुलना में अधिक तैयार हो जाता है। नमाज़ में जो बातें कही जाती हैं और क़ुरआन के उच्चारण द्वारा मन के लिए जो बातें प्रस्तुत की जाती हैं वह भलाई के कार्य करने की प्रतिबद्धता, बुराई से बचने और व्यक्तित्व के अन्दर संसार को मूल्यों से भर देने की क्षमता प्रदान करती है। नमाज़ जब समूह के साथ (जमाअत के साथ) पढ़ी जाती है तो मिल-मिलकर पंक्तियों में खड़े होना अन्ततः मुसलमानों को दूसरों की आवश्यकताओं पर ध्यान देने, विश्व-बन्धुत्व पैदा करने और दूसरों की चिन्ता करने पर उभारती है।

नमाज़ कैसे अदा करें

इस चरण में आपको नमाज़ अदा करने के लिए तैयार हो जाना चाहिए। इसके लिए यह सुनिश्चित कर लीजिए कि आपने वज़ू कर लिया है। आपका शरीर, कपड़े और नमाज़ पढ़ने का स्थान साफ है। आपको नमाज़ इस तरह पढ़नी चाहिए।

अ. क़ाबा की दिशा में मुँह करके एक साफ-सुथरे स्थान (जैसे एक मुसल्ले पर) पर सीधे खड़े हो जाइए। अरबी में इस तरह खड़े होने को क़ियाम और जिस दिशा में मुँह करते हैं उसे किब्ला कहा जाता है। भारत में किब्ला पश्चिम की ओर है। अन्य देशों में किब्ला की दिशा भिन्न होगी। नमाज़ पढ़ने से पहले आपके लिए किब्ले की दिशा का पता लगा लेना अनिवार्य है।

ब. पहले नीयत कीजिए। यह नीयत आप नीयत के शब्द कहकर भी कर सकते हैं और अपने मन में भी कर सकते हैं। नीयत करने के लिए यह शब्द हैं: मैंने अपना चेहरा एक मात्र अल्लाह की ओर मोड़ लिया है जो आसमान और धरती का पैदा करने वाला है। मेरा दिल शुद्ध है और मैं समर्पित हूँ और मैं उन लोगों में से नहीं हूँ जो अल्लाह का साझी ठहराते हैं। निस्सन्देह मेरी नमाज़, मेरी परम्परा, वास्तव में मेरा जीना और मेरा मरना अल्लाह के लिए है, जो पूरे संसार का मालिक है जिसका कोई साझीदार नहीं। मुझे इसी बात का आदेश दिया गया है और मैं सबसे पहले मुस्लिम (आज्ञाकारी) हूँ।

1. अपने दोनों हाथ अपने कानों तक उठाइए (औरतें और लड़कियाँ अपने कंधों तक) और कहिए;

अल्लाहु अकबर — अल्लाह सबसे बड़ा है।

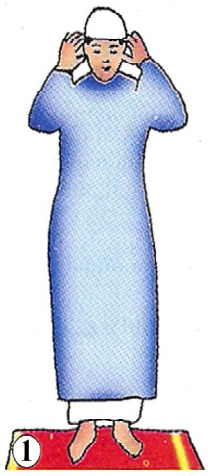

2. अपनी दाहिनी हथेली अपनी बायीं हथेली पर रखकर अपने नाभि से ठीक नीचे अथवा अपने सीने पर (महिलाएँ और लड़कियाँ अपने हाथ सीने पर रखें) और सना पढ़िएः

ऐ अल्लाह प्रतिष्ठा और प्रशंसा आप ही के लिए है और आपका नाम बरकत वाला है और आपकी शान सबसे ऊपर है। आपके अतिरिक्त कोई उपास्य नहीं है।

अऊजु बिल्लाही मिनश शैतानि-र्रजीम

मैं फटकारे हुए शैतान से अल्लाह की शरण चाहता हूँ।

बिस्मिल्लाहि-र्रहमानि-र्रहीम

अल्लाह के नाम से जो बड़ा ही मेहरबान और दया करने वाला है।

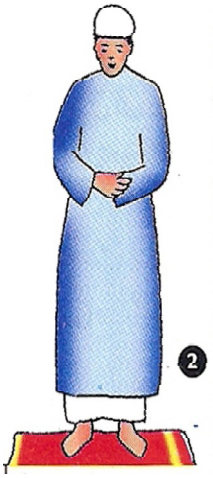

- कुरआन की पहली सूरः अल-फ़ातिहा पूरी पढ़िएः

  प्रशंसा अल्लाह ही के लिए है जो सारे संसार का रब (प्रभु पालनकर्त्ता) है। बड़ा कृपाशील, अत्यन्त दयावान है। बदला दिये जाने के दिन का मालिक है। हम तेरी ही बन्दगी करते हैं और तुझ ही से मदद माँगते हैं।

  हमें सीधे मार्ग पर चला। उन लोगों के मार्ग पर जो तेरे कृपापात्र हुए जो न प्रकोप के भागी हुए और न पथभ्रष्ट। (कुरआन, 1:1-7)

सूरः फातिहा का उच्चारण प्रत्येक नमाज़ में अनिवार्य है।

- इसके बाद कुरआन से कुछ आयतें पढ़िए। उदाहरण के लिएः

बिस्मिल्लाहि-र्रहमानि-र्रहीम

अल्लाह के नाम से जो बड़ा ही मेहरबान और दया करने वाला है।

कहोः "वह अल्लाह यकता है, अल्लाह निरपेक्ष (और सर्वाधार) है, न वह जनिता है, और न जन्य, और न कोई उसका समकक्ष है," (कुरआन, 112)

3. अल्लाहु-अकबर कहते हुए झुक जाइए।
फिर अपने दोनों हाथ घुटनों पर रखिए
और तीन बार कहिए

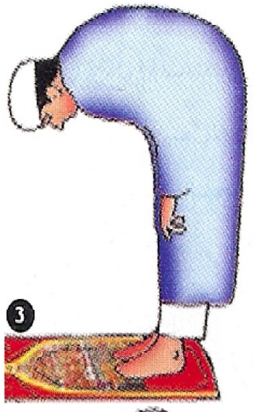

सुब्हान रब्बियल अज़ीम
(पवित्र है मेरा मालिक, जो सबसे बड़ा है)
इस स्थिति को रुकूअ कहते हैं।

4. यह कहते हुए रुकूअ से खड़े हो जाइएः
समिअ अल्लाहु लिमन हमीदः
अल्लाह ने सुन लिया जिसने उसकी प्रशंसा की।
इसके बाद रब्बना लकल हम्द,
मेरे पालनहार, आप ही के लिए प्रशंसा है।
जब आप क़ियाम (खड़े होने) की हालत में वापस
लौटते हैं तो इसे इतीदाल (सन्तुलन) कहा जाता है।

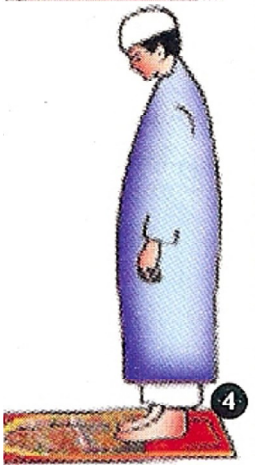

5. अल्लाहु अकबर कहते हुए सजदे में जाइए, सजदे में आपकी पेशानी, नाक, दोनों हथेलियाँ, दोनों घुटने और दोनों पैर के पंजे फर्श को छू रहे होने चाहिए। (संस्कृत में इसे षाष्टांग दण्डवत कहते हैं)
तीन बार पढ़िए
सुब्हान रब्बियल आला
पवित्र है मेरा सबसे बड़ा पालनहार है।
इस हालत को सुजूद कहा जाता है।
आपकी बाहें फर्श को नहीं छूनी चाहिए।

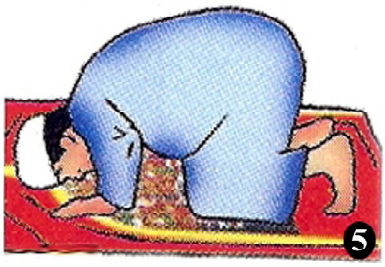

6 और 7. *अल्लाहु अकबर* कहते हुए दोनों टाँगों पर सीधे बैठ जाइए और अपनी दोनों हथेलियाँ घुटनों पर रख लीजिए (जिस तरह वज्र आसन में बैठते हैं)। एक क्षण बैठने के बाद *अल्लाहु अकबर* कहते हुए सज़दे में जाइए और तीन बार *सुब्हान रब्बियल आला* पढ़िए। फिर इस अवस्था से *अल्लाहु अकबर* कहते हुए खड़े हो जाइए।

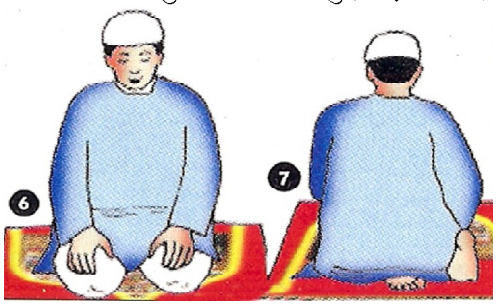

इस तरह एक रकअत नमाज़ पूरी हो गयी। दूसरी रकअत इसी तरह पढ़ी जाती है। केवल इसमें सना, तअव्वुज (अल्लाह की पनाह) और बिस्मिल्लाह नहीं पढ़ा जाता। इसके बाद दूसरे सजदे के बाद सीधे बैठ जाइए और धीरे-धीरे तशह्हुद पढ़िएः

सारी प्रशंसा अल्लाह के लिए है और उसी के लिए नमाज़ें और भलाइयाँ हैं। ऐ पैग़म्बर आप पर सलामती हो और अल्लाह की दया और कृपा हो। हमारे ऊपर सलामती हो और अल्लाह के नेक बन्दों पर भी। मैं गवाही देता हूँ कि अल्लाह के सिवा कोई उपासना योग्य नहीं और मैं गवाही देता हूँ कि मुहम्मद अल्लाह के बन्दे और उसके पैग़म्बर हैं।

इसके बाद दुरुद (पैग़म्बर के लिए दुआ) पढ़िएः ऐ अल्लाह अपने उपकार मुहम्मद पर और मुहम्मद के परिवार पर कर दीजिए जिस प्रकार आपने हज़रत इब्राहीम और उनके परिवार पर उपकार किया। वास्तव में आप प्रशंसा योग्य हैं और बड़ाई योग्य हैं। ऐ अल्लाह मुहम्मद पर बरकतें उतार दीजिए और मुहम्मद के परिवार (अनुयायियों) पर भी। जिस तरह आपने हज़रत इब्राहीम पर और उनके परिवार (संतति) पर बरकतें उतारा। वास्तव में आप प्रशंसनीय हैं और शान वाले हैं।

इसके बाद निम्नलिखित में से कोई दुआ पढ़िएः ऐ अल्लाह मैने अपने ऊपर बहुत अत्याचार किया है, और आपके सिवा कोई क्षमा नहीं कर सकता। इसलिए मुझे क्षमा कीजिए, अपनी क्षमाशीलता से। और मुझपर दया कीजिए। निश्चय ही आप क्षमा करने वाले और दया करने वाले हैंः

"मेरे रब!
मुझे और मेरी संतान को नमाज़
क़ायम करने वाला बना।
हमारे रब! और हमारी प्रार्थना स्वीकार कर।
हमारे रब! मुझे और मेरे माँ-बाप को
और मोमिनों को उस दिन क्षमा कर दीजिए,
जिस दिन हिसाब का मामला पेश आएगा।"
(क़ुरआन, 14, 40-41)

8. अब अपना चेहरा यह कहते हुए दाहिनी ओर मोड़िए:
अस्सलामु अलैकुम व रहमतुल्लाह
तुम्हारे ऊपर अल्लाह की दया और कृपा हो।

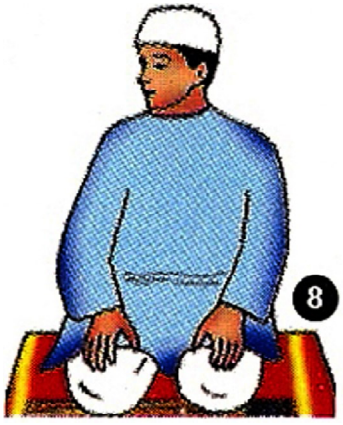

9. और फिर बायें तरफ चेहरा मोड़ते हुए कहिए
अस्सलामु अलैकुम व रहमतुल्लाह
तुम्हारे ऊपर अल्लाह की दया और कृपा हो।
इस तरह नमाज़ की दो रकअतें पूरी हो गयीं।

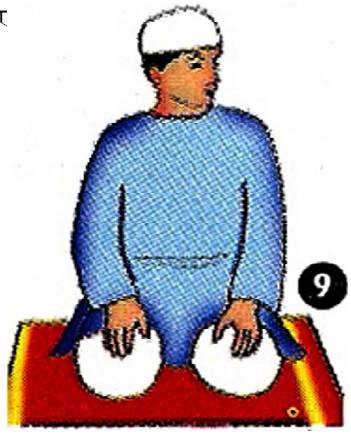

10. नमाज़ के बाद कुछ दुआएँः नमाज़ के अन्त में अल्लाह से दया और क्षमा माँगना अच्छी आदत है। आप अपने शब्दों में और अपनी भाषा में दुआ माँग सकते हैं। लेकिन आपके लिए बेहतर यह है कि कुछ दुआएँ अरबी में याद कर लें।

नमाज़ के बाद कुछ दुआएँ

"हमारे रब! हमें प्रदान कर दुनिया में भी अच्छी दशा और आख़िरत में भी अच्छी दशा, और हमें आग (जहन्नम) की यातना से बचा ले।"

(कुरआन, 2:201)

"हमारे रब! हमने अपने आप पर अत्याचार किया। अब यदि तूने हमें क्षमा न किया और हम पर दया न दर्शाई, फिर तो हम घाटा उठानेवालों में से होंगे।"

(कुरआन, 7:23)

"ऐ अल्लाह आप शान्ति के स्रोत हैं और शान्ति आप ही की ओर से आती है।, आप शान वालें हैं, ऐ कीर्ति और सम्मान वाले मालिक।" (हदीस)

"अल्लाह के सिवा कोई उपासना योग्य नहीं और वह एक है। उसका कोई साझी नहीं, प्रभुता उसी की है, सारी प्रशंसा उसी के लिए है और वह हर चीज़ की क्षमता रखता है। ऐ अल्लाह, आप जो कुछ देना चाहें, उसे कोई रोक नहीं सकता और जिसे आप न देना चाहे उसे कोई दे नहीं सकता और कोई भी किसी साधन द्वारा आपके विरुद्ध कुछ भी नहीं कर सकता।" (हदीस)

नमाज़ का महत्व

इन्सान नमाज़ के द्वारा जो फायदे हासिल कर सकता है, उसको नापा या तोला नहीं जा सकता। नमाज़ के उपकार इंसान की कल्पना से बाहर हैं। यह मात्र एक सिद्धान्त या अभ्यास नहीं है, यह एक आश्चर्यजनक वास्तविकता और आध्यात्मिक अनुभव है। इंसान के जीवन में नमाज़ के कुछ महत्व और विशेषताएँ निम्नलिखित हैं:

1. यह मर्दों और औरतों को अल्लाह के निकट लाती है।
2. यह मनुष्य के लिए अन्तिम सन्देश इस्लाम और एक अल्लाह में मुसलमानों के ईमान का व्यावहारिक प्रमाण है।
3. यह इन्सान को ग़ैर शालीन व्यवहार और अपमानजनक और मना की हुई हराम गतिविधियों से दूर रखती है। (देखिए, क़ुरआन, 29:45)
4. बुरी इच्छाओं और भावनाओं को नियन्त्रित करने के लिए एक सुनियोजित प्रशिक्षण कार्यक्रम है।
5. यह दिल को शुद्ध करती है, मन को विकसित करती है और आत्मा को शान्ति पहुँचाती है।
6. यह अल्लाह और उसकी बड़ाई को लगातार याद दिलाती रहती है।
7. यह अनुशासन और इच्छा-शक्ति विकसित करती है।
8. यह सबसे अधिक नेक और भला जीवन बिताने के लिए मार्गदर्शन करती है।
9. यह सच्ची समानता, ठोस एकता और विश्व बन्धुत्व का उदाहरण है।
10. यह धैर्य, साहस, आशा और आत्मविश्वास का स्रोत है।

11. यह सफाई, शुद्धि और समय के पालन का माध्यम हैं।

12. यह आज्ञाकारिता, विनम्रता और सुधार को विकसित करती है।

13. यह अपने रचयिता के आज्ञापालन का प्रदर्शन है।

14. यह हमारे कथनों और कर्मों में समानता लाने के लिए तैयार करने का एक प्रोग्राम है।

15. यह बौद्धिक ध्यान और आध्यात्मिक समर्पण की अद्वितीय और अनोखी दुआ है। इसमें नैतिक उत्थान और शारीरिक अभ्यास सभी सम्मिलित होते हैं।

16. यह एक विशेष इस्लामी इबादत है जिसमें शरीर की प्रत्येक माँसपेशी अल्लाह की इबादत और उसकी बड़ाई करने में आत्मा और मन के साथ मिल जाती है।

इसका सबसे अच्छा प्रमाण यह है कि नमाज़ का अनुभव किया जाए और इसके आध्यात्मिक आनन्द का लाभ उठाया जाए। तभी इंसान समझ सकता है कि नमाज़ का वास्तविक अर्थ क्या है।

रमज़ान और रोज़ा

रमज़ानः रमज़ान उर्दू में इस्लामी कलैण्डर का नवाँ महीना है।, पूरी दुनिया के मुसलमान इसे रोज़े के महीने के रूप में मनाते हैं। इस वार्षिक अनुष्ठान को इस्लाम के पाँच स्तम्भों में से एक माना जाता है। हदीस में संग्रह किए हुए पैग़म्बर (सल्ल0) के जीवनी के अनेक विवरणों के आधार पर यह महीना, चाँद दिखायी देने के आधार पर 29 या 30 दिन का होता है।

अल्लाह ने मुसलमानों पर रोज़े अनिवार्य किए हैं। जिस प्रकार उसने इससे पहले की क़ौमों पर अनिवार्य किया था। अल्लाह तआला क़ुरआन में फ़रमाता है।

"ऐ ईमान लाने वालो! तुम पर रोज़े अनिवार्य किए गए, जिस प्रकार तुम से पहले के लोगों पर किए गये थे, ताकि तुम डर रखने वाले बन जाओ।"

(क़ुरआन, 2:183)

यदि इसकी शाब्दिक परिभाषा की जाए तो रोज़ें का अर्थ रमज़ान के पूरे महीनें पूरी तरह खाने, पीने, मैथुन, धूम्रपान और हर तरह की अभद्र गाली-गलौज वाला आक्रामक व्यवहार और सांसारिक उत्तेजनाओं और इच्छाओं से, भोर से लेकर सूर्यास्त तक, बचना है।

इस्लाम के अनुसार रोज़े के पुरस्कार, लाभ या पुण्य बहुत से हैं। लेकिन इस महीने में इन सबका पुण्य कई गुना बढ़ जाता है। रमज़ान के महीने में मुसलमानों के लिए रोज़ें में नमाज़ों की संख्या और क़ुरआन पढ़ने में लगनशीलता बढ़ जाती है।

रोज़ा सभी वयस्क मुसलमानों के लिए अनिवार्य है। सिवाय उन लोगों के जो बीमार हैं या यात्रा पर हैं या मासिक धर्म में हैं।

क़ुरआन रोज़ें को इबादत का एक रूप बताता है। चूँकि यह व्यक्तिगत और सामूहिक दोनों कर्म है इसलिए क़ुरआन रोज़े के नैतिक और आध्यात्मिक पहलुओं पर बल देता है और बताता है कि इसका उद्देश्य अपनी प्राकृतिक इच्छाओं पर नियन्त्रण करके आत्मनियन्त्रण सीखना है।

जब रोज़ा एक धार्मिक आदेश के रूप में स्थापित हो गया तो पैग़म्बर के मदीना शहर में बहुत से मुसलमानों ने सोचा कि रमज़ान के महीने में रात में भी अपनी पत्नियों के साथ मैथुन हराम है। इसमें एक अतिरिक्त कठोरता थी और यह आयत "अल्लाह चाहता है कि तुम्हारे लिए आसानी हो और तुम्हारे लिए कठिनाई नहीं चाहता, का इशारा उन आरम्भिक मुसलमानों की ओर है जो पूरे महीने इन सम्बन्धों से परहेज करते थे। क़ुरआन भूख और प्यास के साथ-साथ मैथुन को भी प्राकृतिक इच्छा घोषित करता है। प्रतिदिन के रोज़ों के बाद जो चीज़ खाने-पीने के मामले में लागू होती थी, वही मैथुन करके लागू हो रही थी। यहाँ सन्तुलन का विचार भी है कि आध्यात्मिक तलाश भौतिक इच्छा की कीमत पर नहीं होनी चाहिए। अल्लाह से निकटता प्राप्त करने के लिए शरीर और आत्मा के बीच सामंजस्य होना चाहिए।

आपसी सन्तुलन का विचार पति और पत्नी के बीच आपसी सम्बन्धों को लिबास की उपमा देने में प्रदर्शित होता है। (देखिए क़ुरआन 2:187) जिस प्रकार लिबास किसी के शरीर की रक्षा करता है। उसी तरह दम्पत्ति भी एक-दूसरे की रक्षा करते हैं, जिस प्रकार लिबास शरीर को आराम देता है, उसी प्रकार लिबास भी पत्नी-पत्नी के बीच एक-दूसरे के लिए आराम का साधन है। जिस प्रकार लिबास (परिधान) शरीर को सजाते और सौन्दर्य प्रदान करते हैं। उसी प्रकार विवाह दोनों को एक-दूसरे से पूर्णता प्रदान करता है, एक की कमज़ोरी दूसरे की ताक़त और आपसी सहयोग से दूर हो जाती है। सम्बन्धों में इससे अधिक सौन्दर्य क्या हो सकता है?

क़ुरआन रमज़ान के रोज़ों का आदेश विशेष कारण से देता हैः यह वह महीना है जब स्वयं क़ुरआन अवतरित हुआ था। क़ुरआन की पहली आयतें "पढ़ो अपने पालनहार के नाम से जिसने पैदा किया"। (देखिए क़ुरआन 96:105) 27 रमज़ान को 611 ई0 में अवतरित हुई थी। इस प्रकार मुस्लिम विचारधारा में रमज़ान का क़ुरआन से बहुत निकट सम्बन्ध है।

जब इस्लाम ने इस अद्वितीय संस्था का आरम्भ किया तो इसमें असंख्य नेकियों वाला और बहुमूल्य उत्पादों वाला एक सदैव बढ़ने वाला पेड़ लगा दिया। निम्न में इस्लामी रोज़ों के आध्यात्मिक अर्थ की एक व्याख्या प्रस्तुत की जा रही हैः

1. यह एक महीने का आध्यात्मिक प्रशिक्षण का कार्यक्रम है ताकि मुसलमान अपने पैदा करने वाले और जीविका देने वाले अल्लाह द्वारा एक मुसलमान पर डाले गए कर्त्तव्यों को पूरा करने के लिए ताज़ादम हो सकें।

2. यह इंसान को शुद्ध प्रेम के सिद्धान्तों की शिक्षा देता है क्योंकि जब वह रोज़ा रखता है तो वह इसे अपने अल्लाह से गहरे प्रेम के कारण रखता है और जो व्यक्ति अल्लाह से प्रेम करता है वह जानता है कि वास्तव में प्रेम है क्या?

3. यह इंसान के अंदर गहरी और जागती हुई चेतना का विकास करता है क्योंकि रोज़ा रखने वाला व्यक्ति अपना रोज़ा तन्हाई में भी रखता है और सार्वजनिक रूप से भी। विशेष रूप से रोज़ें में कोई सांसारिक ताक़त ऐसी नहीं होती जो इंसानी व्यवहार की जाँच कर सके या रोज़ा रखने के लिए उसे विवश कर सके। वह अपने अल्लाह को खुश करने के लिए रोज़ा रखता है और तन्हाई और सार्वजनिक रूप से वफादार रहकर अपनी चेतना को सन्तुष्ट करता है। इन्सान के अन्दर गहरी चेतना विकसित करने का इससे अच्छा तरीक़ा और कोई नहीं हो सकता।

4. रोज़ा आत्म-नियन्त्रण पैदा करता है और अपने स्वार्थ, लालच और आलस्य पर काबू पाने में हमारी सहायता करता है। रोज़ा इंसान को, भूख और प्यास की तकलीफों का अनुभव करने योग्य बनाता है। व्यक्ति यह महसूस करना आरम्भ कर देता है कि ग़रीबों और अभागे लोगों को इसी तरह भूख लगती होगी, वह लाखों ग़रीब लोग जो प्रतिदिन भूखे सोते हैं।

5. एक सामान्य इंसानी कमज़ोरी गुस्सा है- इसे भी रोज़े के माध्यम से नियन्त्रित किया जा सकता है।

6. यह व्यावहारिक सन्तुलन और इच्छा शक्ति विकसित करने की प्रभावशाली शिक्षा है। जो व्यक्ति अपने रोज़े अच्छे ढ़ंग से रखता है, वह निश्चित रूप से ऐसा इंसान है जो अपनी भावुक इच्छाओं को अनुशासित कर सकता है और वह अपने आप को भौतिक लालच से ऊपर रख सकता है। ऐसा व्यक्ति व्यक्तित्व और चरित्र वाला व्यक्ति होता है जिसके अन्दर इच्छा शक्ति और दृढ़ निश्चय की विशेषताएँ होती हैं।

7. यह इंसान को एक पारदर्शी आत्मा उपलब्ध कराता है ताकि भौतिकता से ऊपर उठ सके और शुद्ध मन उपलब्ध कराता है जो चिन्तन कर सके और हल्का शरीर उपलब्ध कराता है जो गतिशील और सक्रिय हो। इसी तरह जब वह अपने

पेट को आराम देता है और अपने पाचन-तन्त्र को सुकून देता है तो वास्तव में वह अपने शरीर को, पेट अधिक भरने के कारण जो हानि पहुँचती है उससे बचाव को सुनिश्चित करता है और इसी तरह आत्मा को भी। चिकित्सकीय निर्देश, जैविक नियम और बौद्धिक अनुभव इस तथ्य को प्रमाणित करते हैं।

8. यह इंसान के अन्दर एकता, भाईचारा और अल्लाह के सामने और क़ानून के सामने भी सामाजिक लगाव की वास्तविक भावना उभारता है। यह भावना इस वास्तविकता का प्राकृतिक परिणाम है। जब इंसान रोज़ा रखता है तो वह महसूस करता है कि वह एक ही दिन, एक ही ढंग से, एक ही समय में, एक ही उद्देश्य और एक ही मंजिल के लिए रोज़ा रखकर पूरे मुस्लिम समाज के साथ मिल गया है।

ज़कात
ग़रीबों का अधिकार

"सदक़े तो बस ग़रीबों, मुहताजों और उन लोगों के लिए हैं, ... यह अल्लाह की ओर से ठहराया हुया हुक्म है।" (क़ुरआन, 9:60)

ज़कात एक इबादत है। इबादत एक अरबी शब्द है जिसका अर्थ अल्लाह की उपासना और उसका आज्ञापालन है। मुसलमान अल्लाह को खुश करने और उसका पुरस्कार पाने के लिए ज़कात अदा करते हैं।

अपनी सम्पत्ति में से ज़कात अदा करना, ग़रीबों की भलाई के लिए अपनी सम्पत्ति में उनको भागीदार बनाना है। यह दान या टैक्स या अनुदान नहीं और यह कोई दयालुता प्रदर्शन करने का साधन भी नहीं है। ज़कात में यह सब अर्थ सम्मिलित हैं लेकिन इसका अर्थ इससे भी अधिक है। यह केवल अपनी आय या अपनी सम्पत्ति में से कुछ प्रतिशत निकालना ही नहीं है बल्कि यह अपार वृद्धि का साधन और आध्यात्मिक निवेश है। यह केवल किसी व्यक्ति के लिए या किसी उद्देश्य के लिए धर्मार्थ सहयोग भी नहीं है बल्कि यह एक कर्त्तव्य है जिसका आदेश अल्लाह ने दिया है और मुसलमान इसे पूरे समाज के हित में अदा करते हैं। यह धनवान लोगों की सम्पत्ति पर ग़रीबों का अधिकार है। ज़कात का शाब्दिक अर्थ 'शुद्धिकरण' करना है। इस शब्द का तकनीकी अर्थ यह है कि एक मुसलमान अपनी वार्षिक आय का एक निर्धारित हिस्सा जरूरतमंद लाभार्थियों में बाँटता है। लेकिन ज़कात का धार्मिक और आध्यात्मिक महत्व इससे अधिक गहरा और अधिक जीवन्त है। इस प्रकार इसका महत्व मानवीय, सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक भी है।

इस्लाम का एक महत्वपूर्ण सिद्धान्त यह है कि सभी वस्तुएँ अल्लाह की हैं। मुसलमानों को आदेश दिया गया है कि वह दौलत कमाएँ और इसे उस तरीक़े से ख़र्च करें जो अल्लह के लिए स्वीकार्य है। अल्लाह द्वारा आदेशित ज़कात की व्यवस्था उसके साम्राज्य के अन्दर सत्ता में अल्लाह का अधिकार है।

ज़कात के व्यापक प्रभाव

ज़कात का शाब्दिक और साहित्यिक अर्थ शुद्धिकरण और उन्नति है। इस शब्द का तकनीकी अर्थ वह धनराशि है जो करेन्सी (मुद्रा) या सामान के रूप में एक मुसलमान को जरूरतमंद लोगों के बीच बाँटना होता है। यह एक कर्त्तव्य है जिसका आदेश मुसलमानों को अल्लाह ने दिया है ताकि पूरे समाज का इससे हित हो। लेकिन ज़कात का धार्मिक और आध्यात्मिक महत्व अधिक गहरा और जीवन्त है। इसी तरह इसका मानवीय और सामाजिक राजनैतिक मूल्य है। निम्न में ज़कात के व्यापक प्रभावों को विस्तारपूर्वक प्रस्तुत किया जा रहा है।

1. ज़कात एक मुसलमान को लालच, स्वार्थ, निम्न इच्छाओं और इस भौतिक संसार के प्रेम से मुक्त कर देता है। अल्लाह तआला फ़रमाता हैः "और जो अपने मन के लोभ और कृपणता से बचा लिया जाए ऐसे ही लोग सफल हैं।"

(क़ुरआन, 59:9)

2. ज़कात लोगों की सम्पत्ति को शुद्ध कर देता है अर्थात यह उस हिस्से को उस से साफ कर देता है जो अब उसका नहीं है। वह हिस्सा जिसे उसको उन लोगों में बाँट देना चाहिए जो उसके अधिकारी हैं। जब ज़कात लागू हो जाए तो सम्पत्ति का एक निर्धारित प्रतिशत तुरन्त उसके सच्चे अधिकारियों में बाँट देना चाहिए। क्योंकि उसका स्वामी अब उस प्रतिशत पर नैतिक और वैधानिक अधिकार नहीं रखता। यदि वह ऐसा नहीं करता तो वह स्पष्ट रूप से एक ऐसी चीज़ अपने पास रोकता है जो उसकी नहीं है। यह नैतिक और आध्यात्मिक, वैधानिक और व्यावसायिक प्रत्येक दृष्टिकोण से एक स्पष्ट भ्रष्टाचार है। इसका अर्थ यह है कि यह ग़ैर क़ानूनी प्रतिशत जो रोक लिया गया है वह सम्पत्ति के पूरे भंडार को अशुद्ध कर देता है और उसे ख़तरे में डाल देता है। लेकिन

दूसरी तरफ यदि ग़रीबों के हिस्सों को उनके लाभार्थियों में बाँट दिया जाता है तो सम्पत्ति का बचा हुआ हिस्सा शुद्ध हो जाता है। शुद्ध सम्पत्ति और ईमानदारी से कमायी गई सम्पत्ति, सम्पन्नता और ईमानदाराना लेन-देन की पहली शर्त है।

3. ज़कात केवल देने वाले की सम्पत्ति को ही पाक नहीं करता, बल्कि देने वाले के दिल को स्वार्थ और सम्पत्ति के लालच से भी पाक करता है। इसके बदले में यह लेने वाले के दिल को ईर्ष्या और दुश्मनी, घृणा और असहजता से पाक करता है, और यह उसके दिल में ईष्या और घृणा के बदले सद्भाव और देने वाले के लिए गर्मजोशी पैदा करता है। इसके नतीजे में व्यापक रूप से समाज पाक हो जाएगा और अपने आप को संदेह, दुर्भावना और अविश्वास, भ्रष्टाचार और बिखराव और इस तरह की सभी बुराईयों से मुक्त कर लेगा।

4. ज़कात स्वार्थपूर्ण लालच और सामाजिक बिखराव और विरोधी विचारधाराओं के समाज में घुसने के विरुद्ध आन्तरिक सुरक्षा का एक स्वस्थ साधन है। यह देने वाले की ओर से सामाजिक दायित्व की भावना को परवान चढ़ाने का एक प्रभावपूर्ण माध्यम है और लेने वाले की ओर से सुरक्षा की भावना और अपनत्व का माध्यम है।

5. ज़कात मनुष्य और समाज के बीच दायित्वपूर्ण मेल-जोल की आध्यात्मिक और मानवीय भावना का स्पष्ट प्रदर्शन है। यह इस हक़ीकत का गंभीर चित्रण है कि यद्यपि इस्लाम निजी व्यापार को नहीं रोकता और निजी सम्पत्ति की निन्दा नहीं करता लेकिन इसके बावजूद स्वार्थी और लालची पूँजीवाद को सहन नहीं करता। यह इस्लाम के सामान्य दर्शन की अभिव्यक्ति है जो सन्तुलित और मध्य मार्ग, लेकिन सकारात्मक और प्रभावपूर्ण प्रक्रिया मनुष्य और समाज के बीच, नागरिक और राज्य के बीच, पूँजीवाद और समाजवाद के बीच, और भौतिकवाद और आध्यात्मवाद के बीच संतुलित मार्ग अपनाता है।

6. इस्लाम एक सम्पूर्ण जीवन व्यवस्था है। इसमें अन्य चीज़ों के साथ-साथ जीवन का आर्थिक पहलू भी सम्मिलित है। इस्लाम के अपने अलग आर्थिक सिद्धान्त हैं। ज़कात इस्लामी अर्थव्यवस्था के बुनियादी सिद्धान्तों में से एक है जो समाज कल्याण और पूँजी के उपयुक्त बँटवारे पर आधारित है। ज़कात की

अनिवार्य अदायगी के अतिरिक्त मुसलमानों को उभारा गया है कि वह ग़रीबों और जरूरतमंदों की भलाई के लिए और सामाजिक कल्याण के अन्य उद्देश्यों के लिए अपनी ओर से सहयोग करें। अपनी इच्छा से दिये जाने वाले इस सहयोग को सद्का (दान) कहा जाता है।

7. ज़कात की अदायगी के माध्यम से धनवान लोग अपनी दौलत में ग़रीबों को साझीदार बनाते हैं और इस प्रकार सम्पत्ति के एक जगह एकत्र होने की प्रक्रिया में अवरोध उत्पन्न होता है और सम्पत्ति का न्यायपूर्ण बँटवारा सुनिश्चित होता है। ज़कात का प्रयोग ज़रूरतमंदों के जिन संवर्गों के लिए होता है, उनका उल्लेख क़ुरआन में कर दिया गया है। (देखिए क़ुरआन, 9:60)

हज या तीर्थयात्रा

"हज और उमरा जो कि अल्लाह के लिए हैं, पूरे करो।" (क़ुरआन, 2:196)

हज इस्लाम का पाँचवा स्तम्भ है। यह उन लोगों के लिए अपने जीवन में एक बार अल्लाह के घर काबा की यात्रा है, जो यात्रा का ख़र्च वहन कर सकते हैं। यह इस्लामी कैलेण्डर के बारहवें महीने की 8-13 ज़िलहिज्जा के दौरान अदा किया जाता है। (देखिए क़ुरआन, 3:97, 22:27-30, 2:197)

काबा जो बैतुल्लाह (अल्लाह का घर) के नाम से भी जाना जाता है, घन के आकार की एक एक मंजिला इमारत है। यह इतिहास का पहला ऐसा घर है जो केवल एक अल्लाह की उपासना के पवित्र उद्देश्य के लिए बनाया था। (क़ुरआन, 3:96), काबा मक्का की पवित्र मस्जिद के केन्द्र में एक काले रंग के कपड़े से ढका हुआ काला घन है।

हज मानवता का सबसे बड़ा वार्षिक सम्मेलन है, जिसमें पूरी दुनिया के कोने-कोने से लगभग तीस लाख लोग एकत्र होते हैं जो बहुत सी क़ौमों, नस्लों, भाषाओं और संस्कृतियों का प्रतिनिधित्व करते हैं और ये दुनिया के सबसे बड़े धार्मिक कर्मकाण्ड को सामूहिक रूप से एक साथ अदा करते हैं। हज इस्लाम के सबसे अधिक महत्वपूर्ण तत्वों की गहराईयों का दर्शन कराता है और उस वैश्विक दृष्टिकोण को उभारता है जिसे वह प्रेरित करना चाहता है।

हज में भागीदारी इस्लाम के मार्ग का वास्तविक प्रदर्शन और अनुभव है जो किसी व्यक्ति को समूह का अभिन्न अंग बना देता है। यह सामूहिकता की, और न्याय पर ज़ोर देते हुए एकता की, असाधारण भावना पैदा करता है। हज की एकता नस्ल, संस्कृति, रंग और वर्ग पर आधारित भेदों के उन्मूलन पर आधारित है। सभी हाजी एक ही जैसे कपड़े पहनते हैं, आदर्श रूप से एक राजा या एक करोड़पति किसी साधारण व्यक्ति के साथ-साथ चल सकता है और उसे किसी भेद का एहसास नहीं होगा। यदि अल्लाह की दृष्टि में ये भेद इतने कम महत्वपूर्ण हैं तो दैनिक जीवन में इस बात के लिए तर्क मौजूद है कि हम इनसे अभिभूत न हो जाएँ। हमें जिस सन्तुलन को स्थापित

करने का प्रयास करना चाहिए यह उसका प्रमाण है। हज इस बात का प्रमाण है कि कुछ चीज़ें हमारी सामाजिक परम्पराओं और मानवीय खोजों से अधिक महत्वपूर्ण हैं जो कि भ्रष्ट हो सकते हैं, और इस्लाम जिस सन्तुलित मार्ग की ओर हमारा मार्गदर्शन करना चाहता है इसके विपरीत भी हो सकते हैं। लेकिन इससे अधिक गंभीर और गहरा दृष्टिकोण यह भी है कि किसी समुदाय में एकता और न्याय भी हो। लेकिन किसी का व्यक्तित्व समाप्त न होता हो। हाजियों द्वारा सबसे अधिक पढ़ी जाने वाली दुआ पूरी तरह व्यक्तिगत घोषणा हैः लब्बैक ऐ अल्लाह मैं उपस्थित हूँ! लब्बैक मैं मौजूद हूँ, मानवता के इस समुद्र में अल्लाह के सामने प्रत्येक व्यक्ति अपनी अद्वितीय बनावट से पहिचाना जाता है जिस तरह प्रत्येक का फ़ैसला अन्त में अकेले का होगा और उसे केवल अपने व्यक्तिगत कर्मों और नीयतों की जबाबदेही करनी होगी।

पाँच दिन के हज के दौरान पूरी मुस्लिम दुनिया से हाजी मक्का में एकत्र होते हैं, एक साथ इबादत और आज्ञापालन करते हैं और एक साथ लगातार, एक स्थान से दूसरे स्थान पर जाते रहते हैं। पवित्र क्षेत्र में प्रवेश से पहले उनसे अपेक्षा की जाती है कि वह शालीन दशा में रहेंगे। वह अपने सांसारिक विचारों और इच्छाओं को छोड़ देते और एहराम पहनते हैं जो दो बिना सिले सफेद कपड़े के टुकड़े होते हैं।

पवित्र क्षेत्र पूरी तरह सम्मानित है और इसमें किसी भी जानवर, पौधें यहाँ तक कि किसी मक्खी को हानि नहीं पहुँचा सकते हैं। हज-यात्री हर तरह के अहंकार को छोड़े देते हैं और अपने बालों में कंघा करने, सुंगध लगाने और नाखून काटने से बचते हैं। एक हज यात्री का पूरा अस्तित्व अल्लाह के लिए समर्पित होना चाहिए और अपनी छवि पर कोई ध्यान नहीं देना चाहिए। अल्लाह की मौजूदगी के एहसास के बहुत ही महत्वपूर्ण क्षणों में यह देखते हुए कि मानवता की बड़ी संख्या मौजूद है और यह जानते हुए कि अपने अहंकार का दमन करना है क्योंकि इन अनुभवों के प्रभाव में हम सच्चे दिल से विनम्र होते हैं। तमाम इच्छाओं यहाँ तक कि काम-भावनाओं को भी किनारे कर दिया जाता है। हज-यात्री अल्लाह की खुशी और उसकी दया और क्षमा प्राप्त करने के लिए मक्का आते हैं। जिस क्षण से वह एहराम पहनते हैं, उसी क्षण से वह घोषणा करते हैं, ''ऐ मालिक मैं मौजूद हूँ, आपकी पुकार के उत्तर में''। अपनी पूरी यात्रा के दौरान वे अल्लाह की बड़ाई का वर्णन करते हुए ''अल्लाह के अतिरिक्त कोई उपासना योग्य नहीं'' कहते हुए उसकी प्रशंसा करते हैं।

विश्व-बन्धुत्व

हज इस्लाम की एक अन्य अनोखी विशेषता है। विभिन्न उद्देश्यों के अन्तर्गत हज का आदेश दिया गया है जिनमें से कुछ उद्देश्य निम्नलिखित हैं:

1. यह ईमान वालों का सबसे बड़ा वार्षिक सम्मेलन हैं जहाँ मुसलमान एक-दूसरे को जानने, अपने एक जैसे मामलों को समझने और सामान्य कल्याण को विकसित करने के लिए मिलते हैं।

2. यह मानवता के इतिहास में सबसे बड़ा शान्ति सम्मेलन भी है। हज के दौरान शान्ति सबसे महत्वपूर्ण विषय होता है; अल्लाह और अपनी आत्मा के साथ शान्ति, आपस में और जानवरों के साथ शान्ति, पक्षियों और कीड़ों-मकोड़ों के साथ शान्ति। किसी भी तरह से, किसी भी जीवधारी की शान्ति को, किसी भी तरह भंग करना पूरी तरह अवैध है।

3. यह इस्लाम की व्यापकता और मुसलमानों के बन्धुत्व और समानता का व्यापक प्रदर्शन है। अल्लाह की पुकार का उत्तर देते हुए हर तरह के व्यवसाय और व्यापार करने वाले और हर वर्ग के लोग धरती के हर कोने के मुसलमान मक्का में एकत्र होते हैं। वे सभी एक ही जैसा साधारण कपड़ा पहनते हैं, एक जैसे नियमों का पालन करते हैं और एक ही समय में एक ही तरीक़े से एक ही दुआ सभी करते हैं। वहाँ कोई सरदारी नहीं चलती, बल्कि सभी सर्वशक्तिमान अल्लाह के वफादार होते हैं। यहाँ कोई कुलीनता नहीं होती, बल्कि विनम्रता और समर्पण होता है।

4. यह अल्लाह के प्रति मुसलमानों की वचनबद्धता की पुष्टि करने के लिए है और यह पुष्टि करने के लिए है कि वह उसकी इबादत में अपने सभी भौतिक हितों को छोड़ देने के लिए तैयार हैं।

5. यह हज करने वालों को पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल0) के आध्यात्मिक और ऐतिहासिक माहौल से अवगत कराने के लिए है ताकि वे इससे गहरी प्रेरणा प्राप्त कर सकें और अपने ईमान को मज़बूत कर सकें।

हज अदा करने के दौरान आसानी से यह देखा जा सकता है कि यह आध्यात्मिक सम्वर्धन और नैतिक मज़बूती, बढ़ी हुई श्रद्धा और अनुशासन का अनुभव,

मानवता के हितों और प्रेरणादायक ज्ञान सबकुछ एक साथ इस्लाम की एक ही इबादत में सम्मिलित होता है।

हज का अन्तिम कर्मकाण्ड एक चढ़ावा होता है जिसमें एक मवेशी की कुर्बानी करनी होती है। हालाँकि यह बात स्पष्ट कर दी गयी है कि

"न उनके माँस अल्लाह को पहुँचते हैं और न उनके रक्त। किन्तु उसे तुम्हारा तक़वा (धर्मपरायणता) पहुँचता है।" (क़ुरआन, 22:37)

वह मुसलमान जो मक्का से दूर होते हैं चाहे वे दुनिया के किसी भी हिस्से में हों। ईद के दिन वह भी यही कुर्बानी करते हैं और यही कुर्बानी हज का शिखर या चोटी है। इसलिए इस ईद को कुर्बानी का त्यौहार या ईद-उल अजहा कहा जाता है।

मुसलमानों को सीधे मार्ग पर रखने के लिए ये पाँच मुख्य अनिवार्य कर्त्तव्य हैं जो आध्यात्मिक अनुशासन के लिए हैं।

उपसंहार

क़ुरआन अक्सर इस बात को दुहराता है:

"नमाज़ कायम करो और ज़कात दो।" शरीर और आत्मा की एकता का इससे बढ़कर और अच्छा प्रदर्शन क्या हो सकता है कि एक ही साँस में एक अल्लाह की इबादत और समाज के प्रति अपने कर्त्तव्यों की अदायगी का आदेश दिया जाए! आध्यात्मिक कर्त्तव्य भौतिक लाभों से खाली नहीं होते और सांसारिक कर्त्तव्यों में भी आध्यात्मिक मूल्य होते हैं। इसके अतिरिक्त सब-कुछ नीयतों और उद्देश्यों पर निर्भर होता है जो उन कर्त्तव्यों का निर्वाह करने के लिए प्रेरित करती हैं।

इस्लाम के ये पाँच स्तम्भ इस्लाम के व्यापक समुदाय के अन्दर व्यक्तिगत ज़िम्मेदारी, सामाजिक जागृति और सामूहिक चेतना या सदस्यता की भावना पैदा करते हैं।

इस्लाम धर्म अपनाने का अर्थ एक ऐसे समुदाय की सदस्यता ग्रहण करना है जो एक सच्चे मालिक, सर्वशक्तिमान अल्लाह की इबादत के लिए समर्पित होता है, उसकी मर्ज़ी को लागू करता है और इस प्रकार सामाजिक रूप से एक न्यायपूर्ण समुदाय जन्म लेता है।

8

इस्लाम की मौलिक धारणाएँ

- जीवन की धारणा
- पाप की धारणा
- तौबा या गुनाहों से क्षमा माँगने की धारणा
- ईमान, विश्वास की धारणा
- प्रकृति की धारणा
- ख़िलाफत की धारणा
- नेकी की धारणा
- सन्तुलित जीवन की धारणा
- सेवा की धारणा
- स्वतन्त्रता की धारणा
- समानता की धारणा
- बन्धुत्व की धारणा
- न्याय की धारणा
- इल्म, ज्ञान की धारणा
- शान्ति की धारणा
- नैतिकता की धारणा
- ज़ेहाद की धारणा
- इस्लामी क़ानून शरीअत की धारणा
- फ़िक़्ह की धारणा
- इज़्तेहाद की धारणा
- सूरा या परामर्श की धारणा
- हलाल (वैध), हराम (अवैध) की धारणा

जीवन की धारणा

जीवन अल्लाह के विवेक और ज्ञान का सर्वोत्तम प्रदर्शन है, और उसकी कला और सत्ता का स्पष्ट प्रतिबिम्ब है। वह जीवन का देने वाला और पैदा करने वाला है। कोई भी चीज़ अचानक अस्तित्व में नहीं आती और कोई भी अपने को और किसी अन्य को पैदा नहीं करता। जीवन एक प्यारी और तमन्ना करने वाली सम्पत्ति है और कोई भी समझदार और सामान्य व्यक्ति इसे अपनी पसन्द से खोना नहीं चाहता।

जीवन मनुष्य को अल्लाह द्वारा दिया गया है और केवल वही इसे वापस लेने का अधिकारी है। उसके अतिरिक्त किसी और को प्राण नष्ट करने का अधिकार नहीं है। इसीलिए इस्लाम हर तरह की आत्महत्या और आत्मविनाश से मना करता है और जब प्यारी आत्मा पलायन कर जाती है तो इस्लाम धैर्य रखने और अच्छी आशा रखने का आदेश देता है।

जब अल्लाह ने मनुष्य को जीवन प्रदान किया है तो उसके अन्दर अनोखी विशेषताएँ और महान योग्यताएँ अकारण नहीं हैं। यदि अल्लाह ने मनुष्य के ऊपर कुछ कर्त्तव्य अनिवार्य किए हैं तो यह भी बिना कारण नहीं हैं। अल्लाह चाहता है कि अपने जीवन के उद्देश्य को पूरा करने में और अस्तित्व के लक्ष्य को प्राप्त करने में मनुष्य की सहायता करे। वह जीवन जीने की रचनात्मक कला सीखने में और दिव्य सन्देश के अनुसार जीवन के अच्छे स्वाद का आनन्द लेने में उसकी सहायता करना चाहता है। जीवन अल्लाह की ओर से एक अमानत है और मनुष्य एक न्यासी है जिसे उसकी अमानत को ईमानदारी और महारथ के साथ, अल्लाह को याद रखते हुए और उसके प्रति ज़िम्मेदारियों की चेतना के साथ उसकी अमानत का प्रयोग करना चाहिए।

जीवन का उद्देश्य अल्लाह की इबादत करना है। इसका अर्थ यह नहीं कि मनुष्य को अपना पूरा जीवन लगातार एकान्तवास में व्यतीत करना है और पूरी तरह ध्यान-ज्ञान में लगे रहना है। अल्लाह की इबादत करने का अर्थ उसकी मर्ज़ी को जानना, उससे प्यार करना, उसके आदेशों का पालन करना, जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में उसके क़ानून को लागू करना, भलाई का काम करने और बुराई को छोड़ने के माध्यम से उसके मिशन

की सेवा करना है और न्याय करना अल्लाह के प्रति, अपने आप के प्रति, और अन्य मनुष्यों के साथ। अल्लाह की इबादत का अर्थ जीवन को जीना है, जीवन जीने से पलायन नहीं।

जीवन की तुलना एक यात्रा से की जा सकती है जो किसी बिन्दु से आरम्भ होकर किसी मंजिल पर समाप्त होती है। यह क्षणिक है और आखिरत के शाश्वत जीवन का आरम्भ है। इस यात्रा में मनुष्य एक यात्री है और उसे केवल इस बात की चिन्ता होनी चाहिए कि भविष्य के जीवन में उसके लिए लाभदायक क्या है? दूसरे शब्दों में उसे जितनी भलाई हो सके, करनी चाहिए और शाश्वत जीवन की ओर किसी भी क्षण जाने के लिए पूरी तरह अपने आप को तैयार रखना चाहिए। उसे इस धरती पर अपने जीवन को एक ऐसा अवसर समझना चाहिए जिसको वह जितना बेहतर प्रयोग कर सके, करना चाहिए। क्योंकि इसके जाने का समय जब आ जाता है तो वह एक सेकेण्ड भी उसे रोक नहीं सकता, यदि उसका समय समाप्त हो जाता है तो इसे बढ़ाने के लिए कोई अवसर नहीं रह जाता। इसलिए जीवन का सबसे अच्छा उपयोग यह है कि इसे अल्लाह द्वारा दी हुई शिक्षाओं के अनुसार व्यतीत किया जाए और इसे भविष्य के शाश्वत जीवन की ओर जाने के लिए सुरक्षित मार्ग बनाया जाए। चूँकि जीवन अपनी मंजिल की ओर जाने का एक महत्वपूर्ण साधन है इसलिए इस्लाम ने मनुष्य को इसे जीने, इसमें क्या लिया जाए, इसमें क्या किया जाए और क्या छोड़ा जाए आदि के सिद्धान्त और नियमों की व्यवस्था प्रदान कर दी है। सभी मनुष्यों को अल्लाह ने पैदा किया है और इसमें कोई सन्देह नहीं कि उन सबको उसी की ओर लौटना है। पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल0) ने अपने एक संक्षिप्त कथन में मनुष्य को विवेकपूर्ण परामर्श दिया कि वह अपने आप को इस जीवन में एक अजनबी समझे या एक यात्री जो इस दुनिया से गुज़र रहा हो।

गुनाह (पाप) की धारणा

कहोः "क्या मैं अल्लाह से भिन्न और रब ढूढ़ूँ, जबकि हर चीज़ का रब वही है!" और यह कि प्रत्येक व्यक्ति जो कुछ कमाता है, उसका फल वही भोगेगा; कोई बोझ उठानेवाला किसी दूसरे का बोझ नहीं उठायेगा। फिर तुम्हें अपने रब की ओर लौटकर जाना है। उस समय वह तुम्हें बता देगा, जिसमें परस्पर तुम्हारा मतभेद और झगड़ा था।" (क़ुरआन, 6:164)

गुनाह जानबूझ कर अल्लाह की अवज्ञा करने का नाम है। सबसे बड़ा गुनाह शिर्क (अल्लाह की इबादत में अन्य देवताओं को साझीदार बनाना) है। हालाँकि अल्लाह के किसी भी आदेश का जानबूझकर उल्लंघन करना गुनाह का काम है, अल्लाह जो रोकने वाला है उसने अनेक ऐसी चीज़ों से मना किया है जो व्यक्ति और समाज के लिए हानिकारक हैं। क़त्ल, अत्याचार, चोरी, धोखाधड़ी, सूदखोरी, व्यभिचार, जादू-टोना, मदिरापान, सुअर का माँस खाना और अवैध नशीली दवाओं का प्रयोग कुछ गुनाह के कामों के उदाहरण हैं।

इस्लाम गुनाह के मूलभूत सिद्धान्त का इंकार करता है। अल्लाह तआला क़ुरआन में फ़रमाता हैः *"कोई व्यक्ति दूसरे का बोझ नहीं उठाएगा।"* हममें से हर एक अल्लाह के सामने जवाबदेह है, यदि एक व्यक्ति दूसरे को गुनाह करने के लिए प्रेरित करता है तो दोनों सजा के हक़दार होते हैं। उनमें से एक वास्तव में गुनाह करने की सजा का हक़दार है और दूसरा गुनाह के लिए उभारने पर सजा का हक़दार बनता है।

जब कोई व्यक्ति कोई गुनाह करता है तो वह अल्लाह की ओर से सजा का हकदार होता है। सौभाग्य यह है कि अल्लाह सबसे अधिक दयावान और सबसे बड़ा क्षमा करने वाला है। अल्लाह अपने अथाह ज्ञान और न्याय के आधार पर फैसले लेता है। मुसलमान इस बात पर विश्वास नहीं करते कि मरियम के बेटे ईसा मसीह को मानवता के गुनाहों के कारण मरना पड़ा। सबसे बड़ा दयावान अल्लाह, जिसको चाहता है, क्षमा कर देता है। यह विश्वास करना कि ईसा मसीह के लिए मुसीबतें झेलना और

हमारे गुनाहों की क्षमा के लिए मरना आवश्यक था, अल्लाह की अनन्त सत्ता और न्याय का इंकार है। अल्लाह अपनी दया करने में कोई सीमा नहीं रखता।

तौबा इबादत का एक रूप है। कोई व्यक्ति अल्लाह की दया से मुक्ति प्राप्त कर सकता है। सर्वशक्तिमान अल्लाह हमसे वादा करता है कि यदि हम उसकी ओर सच्चे दिल से तौबा करने के लिए लौटेंगे तो वह हमें क्षमा कर देगा।

सच्चे दिल से तौबा करने की निम्नलिखित शर्ते हैं:

1. व्यक्ति को यह स्वीकार करना चाहिए कि उसने गुनाह किया है और सच्चे दिल से ऐसा करने पर उसे अफसोस होना चाहिए।
2. व्यक्ति को क्षमा माँगने के लिए विनम्रतापूर्वक अल्ल्लाह की ओर झुकना चाहिए।
3. व्यक्ति को सच्चे दिल से प्रण करना चाहिए कि वह फिर ऐसा गुनाह नहीं करेगा।
4. यदि उस गुनाह से किसी और को हानि पहुँची हो तो उस व्यक्ति को चाहिए कि उस हानि की क्षतिपूर्ति के लिए हर संभव प्रयास करे।

इसका अर्थ यह नहीं है कि जब भविष्य में वह व्यक्ति वही गुनाह कर बैठेगा तो उसकी पहले की हुई तौबा बेकार हो जाएगी। आवश्यकता इस बात की है कि व्यक्ति अपने दिल में दुबारा गुनाह न करने का सच्चा प्रण करे। चूँकि हम नहीं जानते कि भविष्य में क्या घटित होने वाला है इसलिए तौबा का दरवाज़ा हमेशा खुला रहता है। सर्वशक्तिमान अल्लाह, जो सबसे बड़ा क्षमा करने वाला है, उस समय बहुत खुश होता है जब आदम की सन्तान उसकी अपार क्षमाशीलता की ओर लौटती है।

अल्लाह के अतिरिक्त कोई गुनाहों को क्षमा नहीं कर सकता है। मुसलमानों को मना किया गया है कि वह किसी और के माध्यम से क्षमा माँगने का प्रयास करें, मुसलमानों के अक़ीदे के अनुसार ऐसा करना शिर्क (एक से अधिक खुदाओं को मानना) है।

तौबा
पश्चाताप की धारणा

स्नेह करने वाला, दयावान अल्लाह को जब हम सच्चे दिल से पुकारते हैं तो वह हमें कभी नहीं भूलता या कभी हमारी दिल से निकली दुआओं की अनदेखी नहीं करता। अपने दया और स्नेह के कारण उसने हमें सीधा मार्ग दिखाया और इसके लिए पैग़म्बर और आसमानी किताबें उतारीः पैग़म्बर और उनके साथ किताबों को भेजने का उद्देश्य हमारे मार्गदर्शन में सहायता करना है। अल्लाह के अन्तिम पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल0) हैं और अल्लाह की सबसे अधिक प्रामाणिक मौजूद किताब क़ुरआन है। पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल0) की हदीसों और क़ुरआन की शिक्षाओं के माध्यम से हम क्षमाशील अल्लाह को जानते हैं। जब कोई व्यक्ति गुनाह करता है या कुछ गलत कर बैठता है तो वह अल्लाह के क़ानून का उल्लंघन करता है, अल्लाह के विरुद्ध गंभीर अपराध करता है और अपने सम्मान और अस्तित्व को हानि पहुँचाता है। लेकिन यदि उसका दिल सच्चा है और वह तौबा करना चाहता है, अपने गलत कामों पर अफसोस करता है और अल्लाह की ओर लौटता है, वफादारी के साथ अल्लाह से क्षमा माँगता है और ईमानदारी के साथ उसकी ओर जाता है तो निश्चय ही अल्लाह उसे स्वीकार करता है और क्षमा कर देता है।

उन लोगों से क्षमा का वादा किया गया है जो अल्लाह का इंकार करते हैं, यदि वह अपने गलत व्यवहार को समझ लें और अल्लाह की ओर लौटने का प्रण कर लें।

सर्वशक्तिमान अल्लाह ने उन लोगों के लिए जन्नत की गारंटी दी है जो लोग भलाई करते हैं और उन सबसे क्षमा का वादा किया है जिन्होंने गुनाह किया और तौबा की, और उन लोगों को चेतावनी दी है जो अल्लाह का इंकार करते हैं।

इस सम्बन्ध में क़ुरआन कहता हैः

"कह दोः "ऐ मेरे बन्दो, जिन्होंने अपने आप पर ज़्यादती की है, अल्लाह की

दयालुता से निराश न हो। निःसन्देह अल्लाह सारे ही गुनाहों को क्षमा कर देता है। निश्चय ही वह बड़ा क्षमाशील, अत्यन्त दयावान है। रुजू हो अपने रब की ओर और उसके आज्ञाकारी बन जाओ, इससे पहले कि तुम पर यातना आ जाए। फिर तुम्हारी सहायता न की जाएगी।" (क़ुरआन, 39, 53-54)

इन महान उपकारों और दयालुता के बदले में अल्लाह हमसे कुछ नहीं माँगता क्योंकि उसको किसी चीज़ की आवश्यकता नहीं है और वह सभी आवश्यकताओं से परे है। वह हमसे किसी चीज़ का बदला नहीं चाहता क्योंकि हम उसका बदला दे ही नहीं सकते और उस चीज़ की कीमत नहीं अदा कर सकते जो उसने हमपर असंख्य उपकार और दया किया है। वह हमसे जो काम करने के लिए कहता है वह केवल आभार प्रकट करना और उसके उपकारों को स्वीकार करना है और वह हमसे चाहता है कि जिन अच्छे व्यवहारों का आदेश दिया गया है हम उनको अपनाएँ। वह एक है जो हमें भय और अंधविश्वास से मुक्ति दिलाता है। वह हमें अपमानित नहीं करना चाहता क्योंकि वह ऐसा है जो हमें पैदा करता है और हमारा स्थान सृष्टि की सभी चीज़ों से ऊपर रखता है। इसलिए वह हमारे लिए जो भी नियम देता है वह हमारी ही भलाई और हमारे ही लाभ के लिए देता है।

' ईमान '
आस्था की धारणा

इस्लाम में आस्था एक आनन्द की स्थिति है जो सकारात्मक कर्म और रचनात्मक धारणाओं तथा सक्रिय और प्रभावकारी कदमों द्वारा प्राप्त होती है।

क़ुरआन मजीद और पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल0) की हदीसें उन वांछनीय सिद्धान्तों को परिभाषित करती हैं और वह मानक स्थापित करती हैं जिससे सार्थक आस्था या अक़ीदे का निर्माण होता है। इस प्रकार एक सच्चे मुसलमान की परिभाषा यह की गई किः

1. ये वह लोग हैं जो अल्लाह पर, उसके फ़रिश्तों पर, उसकी किताबों पर जिसका अंतिम संस्करण क़ुरआन है, उसके पैग़म्बरों पर जिनमें अन्तिम पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल0) हैं, क़ियामत या फ़ैसले के दिन पर, और अल्लाह के परम ज्ञान और विवेक पर विश्वास रखते हैं।

2. वह लोग जो अल्लाह पर सदैव भरोसा करते हैं और उसपर अटल विश्वास रखते हैं।

3. अल्लाह ने उन्हें धन, जीवन, स्वास्थ्य, ज्ञान, अनुभव आदि के रूप में जो कुछ प्रदान किया है, उसमें से वह अल्लाह के मार्ग में खर्च करते हैं।

4. जो लोग प्रतिदिन पाँच बार नियमित रूप से नमाज़ पढ़ते हैं और सप्ताह में एक बार जुमे की नमाज़ और साल में ईद की नमाज़ें अदा करते हैं।

5. जो लोग ज़कात (अनिवार्य दान), जरूरतमंदों (व्यक्तियों या संस्थाओं) को देते हैं, जो कम से कम वार्षिक आय या यदि व्यापार हो तो सभी खर्चों और उधार को घटाकर कुल भण्डार का 2.5 प्रतिशत है।

6. जो लोग अच्छी और उचित बातों का आदेश देते हैं और बुराई और ग़लत बातों का विरोध करते हैं।

7. जो लोग अल्लाह और उसके पैग़म्बर से सबसे अधिक प्रेम करते हैं और अन्य मनुष्यों से चाहे वह मुसलमान हों या ग़ैर मुस्लिम, केवल अल्लाह की खुशी के लिए सच्चे दिल से प्रेम करते हैं।

8. जो लोग अपने निकट और दूर के रिश्तेदारों से प्रेम करते हैं और अपने मेहमानों के साथ सच्ची दयालुता और उदारता का प्रदर्शन करते हैं।

9. जो लोग सच्ची बात कहते हैं और अच्छी बातों में सम्मिलित होते हैं अन्यथा उनसे दूर रहते हैं।

10. जो लोग प्रकृति और अल्लाह की रचनाओं से प्रेम करते हैं और उनकी रक्षा करते हैं।

यह स्पष्ट है कि ईमान का अर्थ ही इस्लाम को जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में गहराई में और रचनात्मक रूप से प्रवेश करने योग्य बनाता है। इस्लाम के अनुसार सच्ची आस्था मनुष्यों के आध्यात्मिक और भौतिक जीवन पर निश्चित प्रभाव डालती है और यह उसके व्यक्तिगत और सामाजिक व्यवहार तथा राजनीतिक आचरण और आर्थिक जीवन को भी प्रभावित करती है।

प्रकृति की धारणा

सर्वशक्तिमान अल्लाह ने स्पष्ट किया है कि धरती और इसकी सारी रचनाएँ अल्लाह के आज्ञाकारी बन्दे हैं जो अल्लाह के लिए प्रिय हैं और सब उसके लिए सजदा करती हैं:

> *क्या तुमने देखा नहीं की अल्लाह ही को सजदा करते हैं वे सब जो आकाशों में हैं और जो धरती में हैं, और सूर्य, चन्द्रमा, तारे, पहाड़, वृक्ष, जानवर और बहुत से मनुष्य? और बहुत से ऐसे हैं जिन पर यातना का औचित्य सिद्ध हो चुका है, और जिसे अल्लाह अपमानित करे उसे सम्मानित करने वाला कोई नहीं। निःसन्देह अल्लाह जो चाहे करता है।* (क़ुरआन, 22:18)

इस प्रकार, प्रकृत्ति इसलिए नहीं है कि उसका शोषण किया जाए और उसका दुरुपयोग किया जाए। वास्तव में चूँकि प्रकृत्ति और मनुष्य के बीच में बहुत निकट सम्बन्ध है इसलिए प्रकृत्ति का दुरुपयोग स्वयं अपना दुरुपयोग है। जिस प्रकार मानव जीवन पवित्र है उसी तरह क़ुरआन के अनुसार प्रकृत्ति भी धार्मिक और पवित्र है। इसलिए यह एक पवित्र चीज़ है।

> *"ज़मीन को उसने सभी रचनाओं के लिए बनाया, उसमें हर तरह के बहुत से मजेदार फल हैं, खजूर के पेड़ हैं जिनके फल आवरणों में लिपटे हुए हैं, तरह-तरह के अनाज हैं जिसमें भूसा भी होता है और दाना भी"।* (क़ुरआन, 55:10-13) *ये सभी चीज़ें हमारे हित के लिए हैं। लेकिन इनके साथ सम्मान, न्याय और संतुलित व्यवहार करना चाहिएः "अतः उसने सन्तुलन स्थापित कर दिया है इसलिए तुम्हें उस सन्तुलन में विघ्न नहीं डालना चाहिए। न्याय के साथ तोलो और तराजू में डंडी न मारो।"* (क़ुरआन, 55:7-9)

धरती और इसके वातावरण के कुछ अधिकार हैं और इसका पहला अधिकार यह है कि हम यह बात मानें कि हम इसके स्वामी नहीं हैं। हमने इन्हें पैदा नहीं किया है। इसलिए हम इसके स्वामी नहीं हो सकते। इसके बजाए यह हमें इसके सच्चे मालिक से अमानत के रूप में मिली है। तौहीद की धारणा इस बात पर ज़ोर देती है कि अल्लाह से सम्बन्ध के बिना प्रकृत्ति निरर्थक है। यदि आसमानी उद्देश्य इसमें से निकाल दिया जाए तो इसका कोई अस्तित्व नहीं रह जाता। इसीलिए क़ुरआन की शब्दावली में प्रकृत्ति के लिए रचित व्यवस्था का प्रयोग किया गया है

ख़लीफ़ा, मनुष्य अल्लाह का प्रतिनिधि

इस्लाम की दूसरी सबसे महत्वपूर्ण धारणा ख़लीफ़ा की धारणा है। आमतौर से इसका अनुवाद प्रतिनिधि, नायब या अमीन किया जाता है। यह बात क़ुरआन में स्पष्ट कर दी गयी है कि मनुष्य धरती पर अल्लाह का प्रतिनिधि या ख़लीफ़ा है। (क़ुरआन, 2:30) जहाँ अल्लाह फ़रिश्तों से कहता है: मैं धरती में एक ख़लीफ़ा बनाने वाला हूँ''। ख़लीफ़ा शब्द का प्रयोग ऊँचे अधिकारी के प्रतिनिधि के लिए होता है। उसका किसी चीज़ पर सम्पूर्ण अधिकार नहीं होता। प्रतिनिधियों की ज़िम्मेदारी अपने कर्त्तव्यों को विनम्रतापूर्वक पूरा करना और यह सुनिश्चित करना होता है कि अमानत सुरक्षित रहे और विकसित होती रहे। धरती पर अल्लाह के प्रतिनिधि होने की हैसियत से हमारी यह व्यक्तिगत और सामूहिक ज़िम्मेदारी है कि हम प्रकृत्ति के सामन्जस्य को बनाए रखें और धरती के सभी जीवों और वनस्पतियों की रक्षा करें और अल्लाह की सारी रचनाओं के प्रति सम्मान और श्रद्धा का व्यवहार करें। इस तरह हम इस धरती पर अपनी गतिविधियों; वैज्ञानिक और तकनीकी और व्यापारिक, व्यक्तिगत और सामूहिक के लिए अल्लाह के सामने जवाबदेह हैं, हम पूरी तरह स्वतन्त्र नहीं हैं। धरती और इसके वातावरण की एकता और अखण्डता को बचाए रखने की अमानत अल्लाह की ओर से दी हुई अमानत है और हमारा निर्णय इस बात पर होगा कि हम एक अमानतदार के रूप में अपने कर्त्तव्यों का निर्वाह किस प्रकार करते हैं।

''वही है जिसने तुम्हें धरती मैं ख़लीफ़ा (अधिकारी, उत्तराधिकारी) बनाया''।

(क़ुरआन, 6:165)

इस प्रकार प्रकृत्ति एक अमानत या धरोहर है और यह हमारे नैतिक और धार्मिक संघर्ष का रंगमंच है। हमें इस प्रकृत्ति पर क्षणिक नियन्त्रण तो प्राप्त है लेकिन हम इसके स्वामी और प्रभु नहीं हैं।

जब हम प्रकृत्ति में एक अमीन की हैसियत खो देते हैं तो हम अपनी मानवता की हैसियत भी खो देते हैं और धरती पर अजनबी बन जाते हैं।

''और धरती में उसके सुधार के पश्चात बिगाड़ न पैदा करो।''

(क़ुरआन, 7:56)

पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल0) ने फ़रमाया, ''धरती पर जो कुछ है उसके प्रति दयालु बनो और जो आसमानों में है वह तुम्हारे लिए दयालु रहेगा।

नेकी की धारणा

इस्लाम सतही धारणाओं और कर्म-काण्डों, निर्जीव औपचारिकताओं और अप्रभावी विश्वासों के विरूद्ध सदैव सचेत करता है। कुरआन की एक प्रतिनिधि आयत में अल्लाह नेकी के संपूर्ण अर्थ की व्याख्या इस तरह करता हैः

"नेकी केवल यह नहीं है कि तुम अपने मुँह पूरब और पश्चिम की ओर कर लो, बल्कि नेकी तो उसकी नेकी है जो अल्लाह, अन्तिम दिन, फ़रिश्तों, किताब और नबियों पर ईमान लाया और माल, उसके प्रति प्रेम के बाबजूद, नातेदारों, अनाथों, मुहताजों, मुसाफिरों, और माँगने वालों को दिया और गर्दनें छुड़ाने में भी और नमाज़ क़ायम की और ज़कात दी और अपने वचन को ऐसे लोग पूरा करने वाले हैं जब वचन दें; और तंगी और विशेष रूप से शारीरिक कष्टों में और लड़ाई के समय में जमने वाले हैं, ऐसे ही लोग हैं जो सच्चे सिद्ध हुए और वही लोग डर रखने वाले हैं।" (कुरआन, 2:177)

यह नेक इन्सान का कुरआनी चित्रण है। नेकी भावहीन उच्चारणों और सतही कर्म-काण्डों का नाम नहीं है। यद्यपि नेक मनुष्य को धर्म के अनुष्ठानों का पालन करना चाहिए लेकिन उसे अल्लाह के प्रेम और अल्लाह के लिए अपने जैसे इन्सानों से प्रेम केलिए सच्चे दिल से प्रेरित होना चाहिए।

' मध्यमार्ग '
सन्तुलन की धारणा

न्याय और सन्तुलन, संयम, समानता, सामन्जस्य, सद्भाव जैसे शब्द इस्लामी समाज के नैतिक मूल्य हैं। स्वयं समाज का आधार और कुछ नहीं बल्कि सामंजस्य और न्याय हैं और इसी के अनुसार अल्लाह, प्रकृत्ति और इतिहास के साथ सामंजस्य है। इसका तात्पर्य अपने आप को अल्लाह की मर्जी के सामने समर्पित कर देना, अमानत के सिद्धान्त को स्वीकार करना और सन्तुलित समुदाय अथवा मध्यमार्गी समुदाय बनने के लिए संघर्ष करना है। मुस्लिम चेतना यह मानती है कि न्याय का लक्ष्य सन्तुलित मार्ग अपनाने से ही प्राप्त हो सकता है।

इस्लाम मानव व्यवहार में चरमपंथ अथवा उग्रवाद को प्रोत्साहित नहीं करता। यह न तो शरीर को कष्ट देने का पक्षधर है और न वासनाओं में लिप्त होने को पसन्द करता है। यह एकल विवाह को पसन्द करता है लेकिन इसके ऊपर ज़ोर नहीं देता। यह कुछ परिस्थितियों में कुछ शर्तों के साथ युद्ध की अनुमति देता है लेकिन इसका मुख्य संदेश अल्लाह के सामने समर्पण और शान्ति है। संक्षेप में यह मानव आचरण को मनुष्य की आनुवांशिक योग्यता, आवश्यकता और सीमाओं में रहकर चलाना चाहता है लेकिन यह मानव प्रकृति को पूरी तरह बदलने से मना करता है क्योंकि न तो यह भौतिक रूप से संभव है और न आध्यात्मिक रूप से इसे पसंद किया गया है।

पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल्ल0) सन्तुलन या मध्यमार्ग के एक महान उपदेशक थे। आपने अपने अनुयायियों को ब्रह्मचर्य, आवश्यकता से अधिक व्रत, निराशावाद और बद्मिज़ाजी के विरुद्ध सचेत किया। पैग़म्बर (सल्ल0) के कुछ साथियों ने पवित्र जीवन व्यतीत करने का प्रण किया। एक साथी (सहाबी) ने कहा कि वह विवाह नहीं करेंगे, दूसरे ने कहा कि वह गोश्त नहीं खायेंगे, तीसरे सहाबी ने कहा कि वह बिना बिस्तर

के ज़मीन पर सोयेंगे और चौथे सहाबी ने कहा कि वह निरन्तर रोजा रखेंगे। पैग़म्बर (सल्ल0) ने उनसे कहा,

"ऐसा न करो! कुछ दिन रोज़े रखो और कुछ दिन खाओ। रात के कुछ हिस्से में सोओ और दूसरे हिस्से में नमाज़ पढ़ो क्योंकि तुम्हारे शरीर का तुमपर अधिकार है तुम्हारी आँख का तुमपर अधिकार है, तुम्हारी पत्नी का तुमपर अधिकार है और तुम्हारे मेहमान का तुमपर अधिकार है।"

एक बार आपने आश्चर्य प्रकट करते हुए इसे तीन बार दोहरायाः

"जो लोग अतिशयोक्ति करते हैं उनका नाश हो, (जो लोग अधिक कठोरता बरतते हैं)

और एक अन्य अवसर पर आपने फ़रमायाः

मध्यमार्ग! मध्यमार्ग!! मध्यमार्ग!!!

"क्योंकि केवल मध्यमार्ग अपनाकर ही तुम सफल हो सकते हो"।

इस प्रकार, पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल्ल0) ने एक सन्तुलन स्थापित किया और ज़ोर दिया कि धार्मिक गतिविधियों के साथ सांसारिक कार्यों को भी करना चाहिए। आपने न तो भौतिक चीज़ों को बहुत अधिक महत्व दिया और न ही आध्यात्मिक आनन्द के महत्व को घटाया। आपने सम्पत्ति और सांसारिक वैभव एकत्र करने की निन्दा की। लेकिन कठोरता और संसार त्याग का पक्ष नहीं लिया। आपने जीवन को अल्लाह और क़ैसर अर्थात राजा में नहीं बाँटा।

ऐसी शिक्षाओं से लाभ प्राप्त करने के लिए मुसलमान होना आवश्यक नहीं है। इस प्रकार अमेरिका के उपराष्ट्रपति अल-गोर के शब्द प्रासंगिक हो जाते हैंः

"क़ुरआन ने इस्लाम की जिन केन्द्रीय धारणाओं की शिक्षा दी वह हैं तौहीद-अल्लाह का एकत्व, ख़लीफा अर्थात अमानत की धारणा और अद्ल और न्याय, ये वातावरण के सम्बन्ध में इस्लामी नैतिक मूल्यों के स्तम्भ का भी काम करते हैं।"

सेवा की धारणा

इस संसार में कुछ लोगों को जीवन के सभी आरामदायक साधन मिले हुए हैं जबकि अन्य लोग इनसे वंचित हैं। क़ुरआन आदेश देता है कि जो लोग साधन सम्पन्न हैं उन्हें वंचित लोगों की सहायता करनी चाहिए।

जो मनुष्य जीवन में साधन सम्पन्न है, उसे अल्लाह का कृतज्ञ और शुक्रगुजार बनना चाहिए और उसका शुक्र अदा करने का सबसे अच्छा तरीक़ा उन लोगों की सेवा करना है जो लोग हमारी सहायता के पात्र हैं। अल्लाह ने हमें जो वस्तुएँ प्रदान की हैं, हमारे दूसरे इंसानों का उसमें हिस्सा है। इस हिस्सेदारी के बिना अल्लाह के लिए हमारा शुक्र हमेशा अधूरा रहेगा। इतना अधिक उपकृत होने के बाद यदि हम सेवा न करें तो हमारे दिल मुर्दा हो जायेंगे।

इस्लाम में मानवता की सेवा को अल्लाह की सेवा बताया गया है। सहायता के अधिकारी लोगों की सहायता करना अल्लाह की सहायता करना है। किसी व्यक्ति को खाली हाथ लौटाना अल्लाह की सहायता करने से मना करना है। अल्लाह को खुश करने का सबसे अच्छा तरीक़ा उसकी रचनाओं को खुश करना है। आसमान ज़मीन पर दया नहीं करेगा यदि ज़मीन के लोग आपस में एक-दूसरे के लिए दया करना छोड़ दें।

सेवा सबके लिए होनी चाहिए

इस्लाम अपने अनुयायियों को केवल मुसलमानों की चिंता करने पर नहीं उभारता बल्कि इस धरती के सभी मनुष्यों की चिंता करने पर उभारता है। कट्टरता, घृणा और दुश्मनी सिखाती है। एक मनुष्य जो राष्ट्रीय कट्टरता में अंधा हो वह दूसरे राष्ट्रों के लिए उदार और सहानुभूतिपूर्ण नहीं हो सकता। इस्लाम इसका विरोधी है। यह अल्लाह की सभी रचनाओं को एक परिवार मानता है। हज़रत अनस (रज़ि0) रिवायत करते हैं कि पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल0) ने फ़रमायाः "सभी रचनाएँ अल्लाह का परिवार हैं। उनमें से जो व्यक्ति अल्ल्लाह के परिवार की सबसे अधिक सेवा करता है, वह अल्लाह को पसंद होता है।"

क़ुरआन जरूरतमंदों, ग़रीबों, विकलांगों, अनाथों और अभागे लोगों की सेवा करने का सामान्य आदेश देता है। क़ुरआन ने कभी यह नहीं कहा कि केवल मुसलमानों या किसी विशेष समूह की सेवा की जाए। यह चाहता है कि पूरी मानवता की सेवा की जाए। चाहे वह लोग हमारे रिश्तेदार हों या न हों, हमसे सहमत हों या न हों, हमारी भाषा बोलते हों या कोई और भाषा। बिना किसी भेद-भाव के सभी सेवा के हक़दार हैं। धरती पर कोई भी व्यक्ति परेशान हो तो उसे ध्यान दिए बिना नहीं छोड़ा जाएगा बल्कि अपनी दुर्दशा पर नियन्त्रण पाने में उसकी सहायता की जाएगी क्योंकि अलग-अलग रंग, राष्ट्रीयता और क्षेत्रीयता से परे सारे इन्सान एक-दूसरे के अंग हैं क्योंकि वह सभी एक ही सार तत्व से पैदा किए गए हैं। यह सच्चाई पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल्ल0) की हदीस में स्पष्ट की गयी है।

"तुम ईमान वाले नहीं हो सकते जब तक तुम दूसरों के प्रति दयालु न हो।"

आपके सहाबा ने कहा,

ऐ अल्लाह के पैग़म्बर हममें से प्रत्येक दयालु है।

पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल्ल0) ने घोषणा कीः *"इससे तात्पर्य केवल वह दया नहीं है जो तुम केवल अपने घरवालों और रिश्तेदारों के लिए करते हो बल्कि तुम्हारी दया सभी लोगों के लिए होनी चाहिए।"*

आत्म-बलिदान

इस्लाम नैतिक ज़िम्मेदारी और जबाबदेही की भावना को एक व्यावहारिक साधन के रूप में उभारने पर बल देता है जिसके द्वारा मानवाधिकार और ज़िम्मेदारी की भावना को मानव चेतना में विकसित किया जा सके। मानवाधिकारों के बारे में उपदेश देना और नसीहत करना आसान है लेकिन अपने आप को दूसरों के कदमों में डालना यदि असंभव नहीं तो बहुत कठिन ज़रूर है। इसी तरह व्यक्ति अपनी पसंद और चाहत के मामले में जितना संवेदनशील होता है उतना ही संवेदनशील दूसरों की पसंद और चाहत के मामले में भी होना कठिन है। इसके लिए काफी मात्रा में निःस्वार्थ, दिल की सच्चाई और सहानुभूति की आवश्यकता होती है।

पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल0) ने घोषणा कीः

"एक मुसलमान उस समय तक सच्चा मुसलमान नहीं हो सकता जब तक वह दूसरों के लिए वही न पसंद करे जो अपने लिए पसंद करता है।"

स्वतन्त्रता की धारणा

एक धारणा और मूल्य की हैसियत से अनेक व्यक्तियों, समूहों और राष्ट्रों को स्वतन्त्रता से वंचित रखा जाता रहा है। स्वतन्त्रता का अर्थ अक्सर ग़लत समझा गया और इसका उल्लंघन भी किया गया।

इस सामान्य विचार से आगे बढ़कर इस्लाम स्वतन्त्रता की शिक्षा देता है और इसकी कामना करता है और मुसलमानों और ग़ैर मुस्लिमों के लिए स्वतन्त्रता की गारंटी देता है। स्वतन्त्रता की इस्लामी धारणा मनुष्य के जीवन के सभी क्षेत्रों में सभी ऐच्छिक गतिविधियों के लिए लागू होती है। प्रत्येक मनुष्य अपनी शुद्ध प्रकृत्ति *फितरः* के अनुसार स्वतन्त्र पैदा हुआ है। इसका तात्पर्य यह है कि इंसान पराधीनता, गुनाह, नस्लीय निम्नता और पारिवारिक बाधाओं से आज़ाद पैदा हुआ है। स्वतन्त्रता का अधिकार उस समय तक पवित्र है जब तक कोई व्यक्ति जानबूझकर अल्लाह के क़ानून का उल्लघंन न करे या दूसरों के अधिकारों का हनन न करे।

इस्लाम में विश्वास, इबादत और चेतना के साथ-साथ स्वतन्त्रता का प्रश्न भी बहुत महत्वपूर्ण है। प्रत्येक व्यक्ति को अपने अक़ीदे, अपनी चेतना और इबादत का अधिकार है। क़ुरआन में अल्लाह तआला फ़रमाता हैः

> *"धर्म के विषय में कोई ज़बरदस्ती नहीं। सही बात नासमझी की बात से अलग होकर स्पष्ट हो गई है। तो अब जो कोई बढ़े हुए सरकश को ठुकरा दे और अल्लाह पर ईमान लाए, उसने ऐसा मज़बूत सहारा थाम लिया जो कभी टूटनेवाला नहीं। अल्लाह सब कुछ सुननेवाला, जाननेवाला है।"*
>
> (क़ुरआन, 2:256)

इस्लाम यह व्यवहार इसलिए अपनाता है कि धर्म विश्वास, इच्छा और वचनबद्धता पर आधारित होता है। यदि इनको ताक़त से लागू किया जाए तो ये निरर्थक हो जायेंगे। इससे बढ़कर इस्लाम अल्लाह की सच्चाई को एक अवसर के रूप में प्रस्तुत करता है और मनुष्य को यह आज़ादी देता है कि वह स्वयं अपनी जीवनशैली का चुनाव करे। क़ुरआन कहता हैः

"यह सत्य है तुम्हारे रब की ओर से। तो अब जो कोई चाहे माने और जो चाहे इन्कार कर दे।" (क़ुरआन, 18:29)

स्वतन्त्रता की इस्लामी धारणा एक अक़ीदे का मामला है और यह सर्वोच्च रचयिता का गंभीर आदेश है। यह निम्नलिखित आधारभूत सिद्धान्तों पर निर्मित किया गया है। पहला यह कि मनुष्य की चेतना केवल अल्लाह के अधीन है जिसके सामने प्रत्येक व्यक्ति जबाबदेह है। दूसरे, प्रत्येक मनुष्य व्यक्तिगत रूप से अपने कर्मों के लिए ज़िम्मेदार है और वह ही अपने कर्मों का फल पाने का अधिकार रखता है। तीसरे, अल्लाह ने मनुष्य को यह ज़िम्मेदारी दी है कि वह अपने मामले में स्वयं ही फैसला करे। चौथे ज़िम्मेदाराना और गंभीर चुनाव करने के लिए मनुष्य को पर्याप्त आध्यात्मिक मार्गदर्शन प्रदान किया गया है और उसे बौद्धिक योग्यताएँ भी प्रदान की गयी हैं। स्वतन्त्रता की इस्लामी धारणा का यही आधार है और इस्लाम में स्वतन्त्रता का यही महत्व है। यह मनुष्य का प्राकृतिक अधिकार, एक आध्यात्मिक विशेषाधिकार, एक नैतिक अधिकार और सबसे बढ़कर धार्मिक कर्त्तव्य है। स्वतन्त्रता की इस इस्लामी धारणा के ढाँचे में धार्मिक अत्याचारों, वर्ग-संघर्ष या नस्लीय भेदभाव के लिए कोई जगह नहीं है। किसी व्यक्ति की स्वतन्त्रता का अधिकार उतना ही पवित्र है जितना उसके जीने का अधिकार पवित्र है। इस तरह स्वतन्त्रता स्वयं जीवन के समान है।

' धर्म के माममे कोई ज़ोर-जबरदस्ती नहीं '

इस प्रकार मुसलमान दूसरे धर्मों के विश्वासों, शिक्षाओं और संस्थाओं का सम्मान करते हैं। मुसलमानों द्वारा शासित क्षेत्र के अंदर सभी ग़ैर मुस्लिमों को अपनी रीतियों और परम्पराओं के अनुसार रहने का अधिकार है और दूसरों की तरह वह भी अधिकारों और कर्त्तव्यों के मामले में समान नागरिक हैं।

समता की धारणा

इस्लाम की नैतिक व्यवस्था में एक मौलिक तत्व समता का सिद्धान्त है। समता के इस मूल्य को समानता नहीं समझना चाहिए। इस्लाम सिखाता है कि अल्लाह की दृष्टि में सभी इंसान बराबर हैं। लेकिन आवश्यक रूप से वह सब एक जैसे अथवा समरूप नहीं हैं। उनके बीच योग्यताओं, क्षमताओं, आकांक्षाओं और सम्पत्ति के मामले में अन्तर होता है। इसके बावजूद इनमें से कोई भी चीज़ किसी व्यक्ति पर या किसी नस्ल पर किसी दूसरे व्यक्ति या नस्ल को श्रेष्ठता प्रदान नहीं करती। अल्लाह की दृष्टि में किसी व्यक्ति के चरित्र और उसके व्यक्तित्व पर उसके रंग या उसकी दौलत का कोई प्रभाव नहीं पड़ता। अल्लाह की दृष्टि में केवल एक अंतर है जो नेकी के आधार पर है और यही एक मानक है जो भलाई और आध्यात्मिक श्रेष्ठता के आधार पर है। अल्लाह तआला कुरआन में फ़रमाता हैः

> *"ऐ लोगो! हमने तुम्हें एक पुरुष और एक स्त्री से पैदा किया और तुम्हें बिरादरियों और कबीलों का रूप दिया, ताकि तुम एक-दूसरे को पहचानो। वास्तव में अल्लाह के यहाँ तुममें सबसे अधिक प्रतिष्ठित वह है, जो तुममें सबसे अधिक डर रखता है। निश्चय ही अल्लाह सब कुछ जाननेवाला, ख़बर रखनेवाला है।"* (कुरआन, 49:13)

नस्ल, रंग और सामाजिक प्रतिष्ठा के अन्तर मात्र क्षणिक हैं। अल्लाह की दृष्टि में ये मनुष्य के सच्चे स्थान को प्रभावित नहीं करते। इसके अतिरिक्त समता का यह मूल्य केवल संवैधानिक अधिकार या कुलीन लोगों की सहमति या नीच लोगों को दिया गया दान नहीं है। यह विश्वास का एक ऐसा तत्व है जिसे एक मुसलमान गंभीरता से लेता है और उसपर उसे सच्चे दिल से अटल रहना चाहिए। इस्लाम के इस समता के मूल्य की बुनियादें इस्लामी ढाँचे में गहराई में जमी हुई हैं। समता का यह मूल्य कुछ बुनियादी सिद्धान्तों से निकलता है जो निम्नलिखित हैंः

1. सभी मनुष्य एक ही शाश्वत हस्ती द्वारा पैदा किए गए हैं जो सबका सर्वोच्च स्वामी है।

2. पूरी मानवता एक ही मानव नस्ल से सम्बन्ध रखती है और सभी आदम और हव्वा की सन्तान हैं।

3. अल्लाह अपनी सभी रचनाओं के लिए न्यायप्रिय और दयालु है। वह किसी नस्ल, युग या धर्म का पक्ष नहीं लेता। पूरी क़ायनात उसका साम्राज्य है और सभी लोग उसी के द्वारा पैदा किए गए हैं।

4. सभी लोग इस मामले में समान पैदा किए गए हैं कि कोई भी अपने साथ सम्पत्ति नहीं लाता और वह एक समान मरते हैं क्योंकि वह अपनी सांसारिक सम्पत्ति में से कोई भी चीज़ लेकर नहीं जाते।

5. अल्लाह तआला प्रत्येक व्यक्ति के बारे में उसकी अपनी योग्यताओं और उसके अपने कर्मों के अनुसार फ़ैसला करता है।

6. अल्लाह ने मनुष्य को सम्मान और प्रतिष्ठा प्रदान किया है।

इस्लाम में समता के महत्व की पृष्ठभूमि में ये कुछ सिद्धान्त हैं। जब इस धारणा का प्रयोग पूरी तरह किया जाएगा तो भेदभाव या दमन के लिए कोई स्थान नहीं बचेगा। और जब यह आसमानी अध्यादेश पूरी तरह लागू हो जाए तो दमन और उत्पीड़न के लिए कोई अवसर नहीं रहेगा। चुने हुए लोग और कुलीन वर्ग जैसी धारणाएँ, विशेषाधिकार प्राप्त नस्लें और नीच नस्लें जैसी शब्दावली और सामाजिक जातियों और दूसरे दर्जे की नागरिकता यह सब विचार निरर्थक हो जायेंगे।

बन्धुत्व की धारणा

"सारे मनुष्य एक ही समुदाय थे। वे तो स्वयं अलग-अलग हो गए थे।"

(क़ुरआन, 10:19)

"और निश्चय ही यह तुम्हारा समुदाय, एक ही समुदाय है और मैं तुम्हारा रब हूँ। अतः मेरा डर रखो। किन्तु उन्होंने स्वयं अपने मामले को परस्पर टुकड़े-टुकड़े कर डाला। प्रत्येक गिरोह उसी पर खुश है, जो कुछ उसके पास है।"

(क़ुरआन, 23:52-53)

इस्लाम की नैतिक व्यवस्था में एक और बुनियादी तत्व मानव बन्धुत्व का मूल्य है। यह मूल्य भी उन्हीं सिद्धान्तों पर कायम किया गया है जिनका उल्लेख स्वतन्त्रता और समता की वार्ता (अध्याय) में किया गया है। उन उल्लिखित सिद्धान्तों के अतिरिक्त इस्लाम में मानव बन्धुत्व, पूज्य अल्लाह के एकत्व और सर्वव्यापकता, उपासक मानवता की एकता, और धर्म की एकता जो इबादत का माध्यम है, के अटल विश्वासों पर आधारित है। मुसलमानों के लिए अल्लाह एक है, शाश्वत है और सबका है। वह सभी इंसानों का पैदा करने वाला, सबको रोज़ी देने वाला, सबका न्यायधीश और सबका राजा है। उसके लिए सामाजिक प्रतिष्ठा, राष्ट्रीय प्रभुता और नस्लीय स्रोत निरर्थक हैं। उसकी नज़र में सभी इंसान बराबर हैं और आपस में एक-दूसरे के भाई हैं।

मुसलमान मानवता की एकता में विश्वास करता है। क्योंकि वह मानता है कि सबकी रचना का स्रोत एक है। सबके पूर्वज एक हैं और सबकी मंजिल भी एक है। सबकी रचना का स्रोत स्वयं अल्लाह है। सबके पूर्वज आदम और हव्वा हैं। सबका सम्बन्ध उसी एक ही माँ-बाप से है। जहाँ तक अन्तिम मंजिल का सम्बन्ध है तो इसमें कोई संदेह नहीं कि सबकी अन्तिम मंजिल अल्लाह है जो सबका बनाने वाला है और उसी की ओर सबको लौटना है।

मुसलमान अल्लाह के धर्म की एकता में विश्वास करते हैं। इसका अर्थ यह है कि अल्लाह ने अपने धर्म को किसी विशेष राष्ट्र, नस्ल या युग में सीमित नहीं किया। इसका अर्थ यह भी है कि अल्लाह के धर्म में कोई मतभेद या मौलिक अन्तर नहीं हो सकता।

न्याय की धारणा

इस्लाम में *अद्ल* या न्याय सबसे बड़ा मूल्य है। वास्तव में मुस्लिम विद्वानों ने तर्क दिया है कि क़ुरआन का मुख्य उद्देश्य और पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल0) का बुनियादी मिशन धरती पर न्याय स्थापित करना है। इस्लाम में पूरा सामाजिक जीवन न्याय की विचारधारा के चारो ओर घूमता है और मुसलमानों को आदेश दिया गया है कि आपस में न्याय के अनुसार व्यवहार करें। न्याय अपने आप से शुरु होता है जिसमें व्यक्ति का अपने शारीरिक, मानसिक और आत्मिक आवश्यकताओं को पूरा करना सम्मिलित है। पारिवारिक सम्बन्ध न्याय पर आधारित होने चाहिए अर्थात अपने माता-पिता और बड़ों का सम्मान अपने सभी बच्चों के प्रति समान प्यार और स्नेह का प्रदर्शन और अपने दम्पति के प्रति ईमानदारी और वफादारी, ये सब न्यायप्रिय पारिवारिक व्यवहार की पहिचान हैं। सम्प्रदाय के स्तर पर न्याय की माँग यह है कि व्यक्ति अपने सामाजिक कर्त्तव्यों और जिम्मेदारियों को पूरा करे। मुसलमानों का यह कर्त्तव्य है कि वह हर तरह के दमन का विरोध करे, चाहे दमन करने वाले उसके अपने खून, अपने समाज या अपने देश के लोग हों। अल्लाह तआला क़ुरआन में फ़रमाता हैः

"ऐ ईमान लानेवालो! अल्लाह के लिए खूब उठने वाले, इन्साफ़ की निगरानी करने वाले बनो और ऐसा न हो कि किसी गिरोह की शत्रुता तुम्हें इस बात पर उभार दे कि तुम इन्साफ़ करना छोड़ दो। इन्साफ़ करो, यही धर्मपरायणता के अधिक निकट है।" (क़ुरआन, 5:8)

"ऐ ईमान लानेवालो! अल्लाह के लिए ग़वाही देते हुए इन्साफ़ पर मज़बूती के साथ जमे रहो, चाहे वह स्वयं तुम्हारे अपने माँ-बाप और नातेदारों के विरूद्ध ही क्यों न हो। कोई धनवान हो या निर्धन।" (क़ुरआन, 4:135)

क़ुरआन की यह आयतें न्याय की आदर्श विचारधारा को स्पष्ट शब्दों में प्रस्तुत करती हैं। ये मनुष्य को न्याय के पक्ष में मज़बूती से खड़े होने का आदेश देती हैं और इसके लिए उभारती हैं, चाहे अपना यह कदम अपने माता-पिता, रिश्तेदारों, दोस्तों और

उसके स्वयं अपने व्यक्तिगत हितों के विरुद्ध हो। क़ुरआन एक बार फिर मुसलमानों को चेतावनी देता है कि न्याय के मार्ग से विचलित न हों चाहे उनका विरोधी कट्टर दुश्मन हो या चाहे उन लोगों में से हो जो इस्लाम के विरोधी हैं। यह मुसलमान का कर्त्तव्य है कि बिना किसी भय और भेदभाव के सच्चाई के पक्ष में गवाही दे और इस तरह न्यायिक प्रशासन में सहायक बने और अन्याय और दमन का विरोध करना एक मुसलमान का धार्मिक कर्त्तव्य है।

"तुम्हें क्या हुआ है कि अल्लाह के मार्ग में और उन कमज़ोर पुरूषों, औरतों और बच्चों के लिए युद्ध न करो, जो प्रार्थनाएं करते हैं कि "हमारे रब! तू हमें इस बस्ती से निकाल, जिसके लोग अत्याचारी हैं। और हमारे लिए अपनी ओर से तू कोई समर्थक नियुक्त कर और हमारे लिए अपनी ओर से तू कोई सहायक नियुक्त कर।" (क़ुरआन, 4:75)

एक अत्याचारी शासक के सामने खड़े हो जाओ और उसके सामने सच बोलो। पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल0) ने मुसलमानों और लोगों को न्याय के लिए प्रेरित किया कि वह दमन के विरुद्ध और दलित वर्गों के पक्ष में आवाज़ उठाएँ। क़ुरआन कहता है, कमज़ोर वर्गों के मित्र बनो और अत्याचारी शासकों और उनके भ्रष्ट तरीकों का उपयुक्त साधनों द्वारा विरोध करो।

' इल्म '
ज्ञान की धारणा

मानव व्यवहार के प्रत्येक क्षेत्र में न्याय की स्थापना के लिए एक सीमा तक ज्ञान अर्थात इल्म की आवश्यकता होती है। इस्लाम प्रत्येक मुस्लिम मर्द और औरत के लिए ज्ञान प्राप्त करना अनिवार्य घोषित करता है। एक मुस्लिम समाज उसी समय न्यायप्रिय समाज बन सकता है। जब वह ज्ञान पर आधारित समाज हो।

इस प्रकार ज्ञान प्राप्त करना एक सामाजिक कर्त्तव्य भी है। मुस्लिम समुदाय जहाँ भी रहता हो, उसे यह सुनिश्चित करना चाहिए कि ज्ञान की कुछ विधाओं जैसे क़ानून, औषधि, शिक्षा, इंजीनियरिंग आदि में समुदाय के लोगों का उपयुक्त प्रतिनिधित्व हो। ज्ञान के किसी एक क्षेत्र में विशेष योग्यता रखने वाले व्यक्ति के लिए इस्लामी शब्दावली *आलिम* है। इस्लामी समाज में धार्मिक विद्वानों, वकीलों, भौतिक विज्ञानी, समाजशास्त्रियों और दार्शनिकों को आलिम कहा जाता है। इस्लाम में ज्ञान सन्तुलन और विनम्रता के साथ प्राप्त करना चाहिए। जिसका उद्देश्य सुन्दरता और प्रतिष्ठा, स्वतन्त्रता और न्याय का विकास हो।

पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल0) ने फ़रमायाः

"जो व्यक्ति मात्र इबादत करता है उसके ऊपर आलिम अथवा विद्वान की श्रेष्ठता उसी तरह है जैसे पूर्णिमा के चाँद की श्रेष्ठता सितारों पर होती है जिसका प्रकाश सभी सितारों को ढक लेता है।"

"ज्ञान की तलाश हर मुसलमान का पवित्र कर्त्तव्य है। ज्ञान प्राप्त करो चाहे इसके लिए चीन जाना पड़े।"

शान्ति की धारणा

यह जानने के लिए कि इस्लाम शान्ति के प्रश्न पर क्या दृष्टिकोण अपनाता है, किसी व्यक्ति को इस्लाम के बारे में केवल कुछ बुनियादी तथ्यों पर विचार करना होगा। शान्ति (सलाम)और इस्लाम एक ही धातु शब्द से निकले हैं और इन्हें समानार्थी भी कहा जा सकता है। अल्लाह के एक नाम *'सलाम'* का अर्थ शान्ति भी है। मुसलमानों की प्रतिदिन की नमाज़ों का अन्तिम शब्द 'सलाम' शान्ति ही है। मुसलमानों का अभिवादन जब वे अल्लाह की ओर लौटते है तो यह अभिवादन *'सलाम'* शान्ति ही है। मुसलमानों का आपस में प्रतिदिन का अभिवादन 'सलाम'शान्ति की घोषणा है। विशेषण *मुस्लिम* का अर्थ शान्तिपूर्ण भी है। इस्लाम में जन्नत भी एक शान्ति का स्थल है।

इस्लाम में शान्ति का विषय इतना ही बुनियादी और उभरा हुआ है कि जो व्यक्ति इस्लाम के माध्यम से अल्लाह के निकट जाता है वह अल्लाह के साथ, अपने आप के साथ और दूसरे इन्सानों के साथ शान्ति की स्थिति में जाने में असफल नहीं हो सकता। अगर इन सभी मूल्यों को एक साथ रख लें और मनुष्य को इस क़ायनात में उपयुक्त स्थान पर रखें और जीवन को इस्लामी परिप्रेक्ष्य में देखें तो अच्छे ईमानवाले और अच्छे सिद्धान्तों वाले लोग इस संसार को बेहतर संसार बनाने, मानव प्रतिष्ठा को पुनः स्थापित करने, समानता का लक्ष्य प्राप्त करने, विश्व-बन्धुत्व का आनन्द लेने और स्थायी शान्ति स्थापित करने में नाकाम नहीं हो सकते।

नैतिकता की धारणा

इस्लाम में नैतिकता की धारणा कुछ बुनियादी विश्वासों और सिद्धान्तों के बीच केन्द्रित है। इनमें से कुछ निम्नलिखित हैं:

(1) अल्लाह सबका बनाने वाला और अच्छाई, सच्चाई और सौन्दर्य का स्रोत है।

(2) मनुष्य अपने रचयिता का ज़िम्मेदार, प्रतिष्ठित और सम्मानित प्रतिनिधि है।

(3) अल्लाह ने ज़मीन और आसमान में जो चीज़ भी बनाया है वह मनुष्य की सेवा के लिए है।

(4) अल्लाह अपनी दया और विवेक के कारण मनुष्य से असंभव काम करने की आशा नहीं रखता या उसे इसकी क्षमता से अधिक किसी चीज़ के लिए ज़िम्मेदार नहीं बनाता और न ही अल्लाह मनुष्य को जीवन की अच्छी चीज़ों का आनन्द लेने से रोकता है।

(5) सन्तुलन, व्यावहारिकता और सामंजस्य, उच्च एकात्मता और गंभीर नैतिकता की गारंटी है।

(6) सिद्धान्त रूप में सभी चीज़ें वैध हैं केवल कुछ चीज़ों को अनिवार्य कर दिया गया है जिनका पालन करना आवश्यक है और कुछ चीज़ों से मना किया गया है जिनसे बचना ज़रूरी है।

(7) मनुष्य अन्ततः अल्लाह के सामने उत्तरदायी है और उसका सर्वोच्च लक्ष्य अपने रचयिता की खुशी प्राप्त करना है।

इस्लाम में नैतिकता के पहलू अनेक, दूरगामी और व्यापक हैं। इस्लामी नैतिक मूल्य, मनुष्य और अल्लाह के बीच सम्बन्ध, मनुष्य और दूसरे मनुष्यों के बीच सम्बन्ध और मनुष्य के क़ायनात की दूसरी रचनाओं के साथ सम्बन्ध के बारे में बताते हैं।

अधिक स्पष्ट शब्दों में कहा जाये तो मुसलमानों का अपने अल्लाह से सम्बन्ध, प्यार और आज्ञापालन, वफ़ादारी, चिन्तन, शान्ति और सद्भाव, सत्यवादिता और सक्रिय सेवा का है। यह उच्च स्तरीय नैतिकता निस्सन्देहः मानव स्तर की नैतिकता को पोषित करेगी और उसे मज़बूत करेगी। इसीलिए दूसरे इंसानों के साथ अपने

सम्बन्धों के मामले में मुसलमानों को अपने घरवालों और पड़ोसियों के लिए दयालुता, बड़े-बूढ़ों का सम्मान और जवानों से सहानुभूति, मरीज़ों की देखभाल और जरूरतमंदों का सहयोग, पीड़ितों के साथ सहानुभूति और दबे-कुचले लोगों की खुशी, सम्पन्न लोगों के साथ खुशी और गुमराह लोगों के साथ धैर्य, अज्ञानियों के प्रति सहनशीलता और क्षमा, बुराईयों का इंकार और मामूली चीज़ों से ऊपर उठने जैसा व्यवहार अपनाना चाहिए। इससे बढ़कर उसे दूसरों के वैध अधिकारों का उसी तरह सम्मान करना चाहिए जिस तरह वह अपने अधिकारों का करता है। उसका मन रचनात्मक विचारों से और गंभीर उद्देश्यों से भरा होना चाहिए। उसका दिल सहानुभूति की भावनाओं और सद्भावना के साथ धड़कना चाहिए। उसकी आत्मा शान्ति और मनोरमता का प्रतिबिम्ब होनी चाहिए और उसका परामर्श सच्चे दिल से और बन्धुत्व की भावना से होना चाहिए। सच्चाई और नेकी उसके लक्ष्य हैं। विनम्रता और सादगी, शिष्ट व्यवहार और सहानुभूति उसकी दूसरी प्रवृत्तियाँ होती हैं। उसके लिए अहंकार, कठोरता और उदासीनता नापसंदीदा और अपराध होते हैं और अल्लाह को नाराज़ करने वाले होते हैं।

कुरआन के एक उल्लेखनीय और विशेष अनुच्छेद में गंभीर नैतिक आचरण का दर्शन और आधार प्रस्तुत किया गया है। उस अनुच्छेद का अनुवाद इस तरह किया जा सकता हैः

ऐ आदम की सन्तान! अपना सौन्दर्यपूर्ण परिधान हर समय और नमाज़ के समय धारण कर लिया करो, खाओ, पीओ लेकिन फ़िज़ूलखर्ची मत करो इसलिए कि फ़िज़ूलखर्ची करने वालों को अल्लाह पसन्द नहीं करता। कह दोः अल्लाह के सुन्दर उपहारों को किसने अवैध कर दिया है, जिसे उसने अपने बन्दों के लिए पैदा किया है और उसने उसकी रोज़ी के लिए साफ और शुद्ध चीज़ें प्रदान की हैं।

जिन चीज़ों को मेरे मालिक ने मना किया है वह ये हैंः

"मेरे रब ने केवल अश्लील कर्मों को हराम किया है-जो उनमें से प्रकट हों उन्हें भी और जो छिपे हों उन्हें भी-और हक़ मारना, नाहक ज़्यादती और इस बात को कि तुम अल्लाह का साझीदार ठहराओ, जिसके लिए उसने कोई प्रमाण नहीं उतारा और इस बात को भी कि तुम अल्लाह पर थोपकर ऐसी बात कहो जिसका तुम्हें ज्ञान न हो।" (कुरआन, 7:31-33)

इस्लाम में नैतिकता का क्षेत्र इतना व्यापक और समावेश करने वाला है कि यह अपने अन्दर अल्लाह पर ईमान, धार्मिक कर्मकाण्ड, आध्यात्मिक कर्म, सामाजिक

व्यवहार, निर्णय लेने, ज्ञान प्राप्त करने, खाने की आदतें, बोलने का तरीक़ा और मानव जीवन के अन्य पहलुओं को समेटता है। चूँकि नैतिकता इस्लाम का इतना अभिन्न अंग है कि नैतिक शैली क़ुरआन के सभी अनुच्छेदों में मौजूद है और पूरे क़ुरआन में नैतिक शिक्षाओं को बार-बार विभिन्न संदर्भों में दुहराया गया है। अल्लाह तआला क़ुरआन में फ़रमाता हैः

> ''अल्लाह की बन्दगी करो और उसके साथ किसी को साझी न बनाओ और अच्छा व्यवहार करो माँ-बाप के साथ, नातेदारों, अनाथों और मुहताजों के साथ, नातेदार पड़ोसियों के साथ और अपरिचित पड़ोसियों के साथ और साथ रहनेवाले व्यक्ति के साथ और मुसाफ़िर के साथ और उनके साथ भी जो तुम्हारे क़ब्ज़े में हों। अल्लाह ऐसे व्यक्ति को पसन्द नहीं करता जो इतराता और डींगें मारता हो। वे जो स्वयं कंजूसी करते हैं और लोगों को भी कंजूसी पर उभारते हैं और अल्लाह ने अपने उदार दान से जो कुछ उन्हें दे रखा होता है, उसे छिपाते हैं, तो हमने अकृतज्ञ लोगों के लिए अपमानजनक यातना तैयार कर रखी है। वे जो अपना माल लोगों को दिखाने के लिए ख़र्च करते हैं, न अल्लाह पर ईमान रखते हैं, न अंतिम दिन पर, और जिस किसी का साथी शैतान हुआ, तो वह बहुत ही बुरा साथी है।'' (क़ुरआन, 4:36-38)

' जेहाद ' की धारणा

न्याय के लिए निरन्तर संघर्ष को जेहाद कहा जाता है। इसका तात्पर्य 'एक निर्धारित उद्देश्य के लिए संघर्ष' करना होता है और यह संघर्ष अनेक रूपों में हो सकता है। पैग़म्बर (सल्ल0) की एक हदीस में घोषणा की गयी है कि सर्वोच्च जेहाद अपने आप के विरुद्ध होता है अर्थात अपने स्वार्थ, लालच और अतृप्त इच्छाओं के विरुद्ध। जेहाद समुदाय के सामाजिक विकास के लिए भी हो सकता है। यह बौद्धिक भी हो सकता है जो दमनकारी और एकाधिकारवादी विचारों के विरुद्ध या समाज को बौद्धिक रूप से विकसित करने के लिए हो सकता है। अन्ततः जेहाद दमन और आक्रमण के विरुद्ध भौतिक संघर्ष का रूप भी ले सकता है। इस प्रकार जेहाद साधारण रूप से अंग्रज़ी के होली वार (पवित्र युद्ध) से बढ़कर कोई और चीज़ है।

लेकिन जेहाद आक्रामक युद्ध या क्षेत्रीय विस्तार या भौगोलिक विस्तार या जनता पर किसी विशेष राजनैतिक व्यवस्था को थोपने के लिए नहीं हो सकता। यह रक्षात्मक युद्ध होता है जो उन लोगों पर कुछ ज़िम्मेदारियाँ डालता है जिनको जेहाद में सम्मिलित करने के लिए पुकारा जाता है। नैतिक अभ्यास के रूप में जेहाद सख्ती के साथ अमल किए जाने वाले इस्लामी नियमों के अन्तगर्त ही किया जा सकता है। इसका अर्थ यह है कि निर्दोष व्यक्ति, महिलाओं, बच्चों, शस्त्रविहीन नागरिकों को हानि नहीं पहुँचायी जा सकती। सम्पत्ति और वातावरण को नष्ट नहीं किया जा सकता। दूसरे धर्मों के धर्मस्थलों को नहीं तोड़ा जा सकता। इस प्रकार अपहरण, बन्धक बनाना, बिना किसी भेदभाव के नागरिकों पर गोलियाँ चलाना, ऐसे क्षेत्रों या भवनों में बम रखना जहाँ लोग काम करते हैं, ये सब बुरे काम हैं जिनकी इस्लाम पूरी तरह निन्दा करता है।

इसके अतिरिक्त कोई भी व्यक्ति किसी के विरुद्ध जेहाद की घोषणा नहीं कर सकता। उदाहरण के लिए एक मुस्लिम देश किसी दूसरे देश के विरुद्ध या एक दमनकारी तानाशाह अपने विरोधी देशों के विरुद्ध जेहाद की घोषणा नहीं कर सकता। जेहाद के लिए पूरे मुस्लिम समुदाय की सर्वसम्मति की आवश्यकता होती है और असहाय पीड़ितो पर दमन और आक्रमण करने वाले दुश्मन की स्पष्ट पहिचान होनी चाहिए।

' शरीअत '
इस्लामी क़ानून की धारणा

शरीअत इस्लाम का एक अभिन्न अंग है। अक्सर इसकी परिभाषा इस्लामी क़ानून के रूप में की जाती है जिससे यह आभास होता है कि इसमें अधिकतर दण्ड विधान और सजाएँ ही हैं। हालाँकि शरीअत में क़ानून की परम्परागत समझ से अधिक भी बहुत कुछ है। हालाँकि शरीअत समाज की बुनियादों और इसके संचालन के लिए क़ानूनी ढाँचा उपलब्ध कराती है। लेकिन यह व्यक्तिगत और सामूहिक स्तर पर मुसलमानों के लिए नैतिक, सामाजिक और राजनैतिक आचरण भी विस्तारपूर्वक प्रदान करती है।

शरीअत या इस्लामी क़ानून मुसलमानों के लिए आचार संहिता है, और यह दो प्रमुख स्रोतों : क़ुरआन और पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल0) की सुन्नत पर आधारित है। इसका उद्देश्य सांसारिक जीवन और मृत्यु के बाद के जीवन में भी मानवता की सफलता और कल्याण है।

शरीअत मानवता के मार्गदर्शन के लिए क़ानून का पूरा ढाँचा प्रस्तुत करती है ताकि भलाई "मारूफ" को स्थापित किया जा सके और समाज से बुराई "मुनकर" को मिटाया जा सके। यह ऐसा स्पष्ट और सीधा मार्ग प्रदान करती है जो जीवन को विकास और सन्तुष्टि की ओर ले जाती है और इसके द्वारा अल्लाह की प्रसन्नता प्राप्त होती है।

क़ुरआन शरीअत का मुख्य आधार है। यह शरीअत के लिए सिद्धान्त प्रदान करता है जबकि पैग़म्बर की सुन्नत इसका व्यावहारिक स्वरूप प्रदान करती है। उदाहरण के लिए क़ुरआन कहता है: नमाज़ क़ायम करो, रोज़े रखो, ज़कात दो, परामर्श के द्वारा निर्णय लो। ग़लत ढंग से न कमाओ और न खर्च करो- लेकिन क़ुरआन यह नहीं बताता कि इन कामों को किस तरह किया जाए। यह पैग़म्बर की सुन्नत है जो हमें बताती है कि अल्लाह के आदेशों पर किस प्रकार अमल किया जाए।

क़ुरआन मार्गदर्शन की प्रमुख पुस्तक है और पैग़म्बर (सल्ल0) ने इसका अनुसरण करना सिखाया है। पैग़म्बर (सल्ल0) ने केवल यह नहीं बताया कि मार्गदर्शन का अनुसरण किस तरह किया जाए बल्कि आपने स्वयं भी इसका अनुसरण किया। पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल्ल0) का जीवन एक चलता फिरता क़ुरआन था।

शरीअत के उद्देश्य

शरीअत का अन्तिम उद्देश्य सहानुभूति के आधार पर परस्पर मनुष्यों के बीच और सरकार तथा जनता के बीच न्याय स्थापित करना है। यह इस उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए व्यक्तियों और समाज, समुदाय और राज्य, शासक और जनता के एक-दूसरे के प्रति अधिकारों और कर्त्तव्यों पर ज़ोर देकर इसे प्राप्त करना चाहता है। मुख्य उद्देश्य नैतिक रूप से ज़िम्मेदार समाज का निर्माण करना है। इसमें सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक न्याय पर ज़ोर दिया जाता है। शरीअत मनुष्य की पूर्ण स्वतन्त्रता की बात करती है अर्थात शरीअत के अनुसार अमल करने की तथा शरीअत के अनुसार अमल न करने की पूर्ण स्वतन्त्रता की धारणा को मानकर चलती है। जो लोग अपने समाज को शरीअत के अनुसार चलाना चाहते हैं वह सोच-समझकर और जान-बूझकर ऐसा करते हैं।

शरीअत स्वतन्त्र समाज की कल्पना भी करती है, एक ऐसा समाज जो आत्मनिर्णय कर सकता हो और अपने संसाधनों का प्रभारी भी हो। जबतक समाज अपने संसाधनों को विकसित करने और उपयोग करने के लिए स्वतन्त्र न हो तब तक वह न तो अपने संसाधनों को उपयुक्त ढंग से बाँट सकता है और न सामाजिक और आर्थिक न्याय स्थापित कर सकता है। जो समाज शरीअत के आधार पर चलता है उसके लिए व्यक्तिगत और सामूहिक दोनों स्तरों पर आत्मनिर्भरता और आत्मसम्मान का विकास आवश्यक है।

‘ फ़िक़्ह ’
विधान के इस्लामिक सिद्धान्त की धारणा

फ़िक़्ह इस्लामी क़ानून-विज्ञान या धर्मशास्त्र है। इसका तात्पर्य क़ुरआन और पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल0) की सुन्नत के आधार पर इस्लामी क़ानून की व्याख्या करना और इसका संकलन करना है। फ़िक़्ह का शाब्दिक अर्थ बुद्धि और ज्ञान है। इस प्रकार फ़िक़्ह वह कानून है जिसे प्रारम्भिक मुस्लिम विद्वानों ने अपनी बुद्धि और ज्ञान के आधार पर संकलित किया। इस प्रकार यह एक मानव द्वारा संकलित विधान है। अपने व्यापक अर्थ में फ़िक़्ह धर्म के सभी पहलुओं, राजनैतिक और सामाजिक जीवन को समेटे हुए है। इबादत और अन्य धार्मिक कर्मकाण्डों से सम्बन्धित क़ानून के अतिरिक्त इसमें पारिवारिक क़ानून, विरासत का क़ानून, सम्पत्ति और सन्धियों का क़ानून, दण्ड-विधान और राज्य प्रशासन और युद्ध नैतिकता के सम्बन्ध में क़ानून सम्मिलित हैं।

इस्लामी क़ानून या शरीअत, आदर्श इस्लामी जीवन को व्यवहार में लाता है। इस्लाम सम्पूर्ण जीवन व्यवस्था है और शरीअत इस्लाम द्वारा अनुसंशित आदर्श जीवन प्राप्त करने का साधन है। शरीअत हमें अल्लाह की मर्ज़ी के अनुसार अपने जीवन को ढालने में सफल बनाती है। यह हमारे जीवन के उद्देश्य को प्राप्त करने का साधन है।

इस्लामी क़ानून के विद्वानों ने फ़िक़्ह के विज्ञान के द्वारा शरीअत को समझना और उसपर अमल करना आसान बना दिया है। जो व्यक्ति फ़िक़्ह का विस्तृत ज्ञान और समझ रखता हो उसे फ़क़ीह कहा जाता है। जो व्यक्ति शरीअत से सम्बन्धित मामलों में परामर्श देने की योग्यता रखता है उसे मुफ़्ती कहा जाता है। और वह जो आदेश या परामर्श देता है उसे फतवा कहा जाता है।

' इज्तेहाद '
क़ानून में परिवर्तन के सिद्धान्त

शरीअत इस्लाम को एक स्थायी आधार उपलब्ध कराती है। लेकिन इस्लाम में जो कुछ स्थायी है वह अधिकतर नैतिकता : इबादत के रूप व आदेश हैं जो कुछ सामाजिक बुराईयों से रोकते हैं, और वह सिद्धान्त जिनका उद्देश्य सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक न्याय स्थापित करना है, और ज्ञान और विवेक की प्राप्ति को प्रोत्साहन देना है। इसके अतिरिक्त हर चीज़ बदल सकती है। इस्लाम एक गतिशील, फलता-फूलता हुआ और विकासशील समाज की कल्पना करता है।

इस्लाम में परिवर्तन का सिद्धान्त इज्तेहाद कहा जाता है। इज्तेहाद की परिभाषा शरीअत की किसी समस्या के बोध के लिए अपने आप को बौद्धिक स्तर पर सर्वाधिक प्रेरित करना है। बौद्धिक प्रक्रिया तर्क की नयी विधियों, नया सामाजिक और बौद्धिक चिन्तन, जानने और समझने की नयी विधियों का रूप ले सकती है। जब शरीअत की नयी समझ को इज्तेहाद के द्वारा प्राप्त किया जाये और इसपर इज्मा या मुस्लिम उम्मत और अन्तर्राष्ट्रीय मुस्लिम समुदाय की सर्वसम्मति हो जाए तो यह इस्लामी क़ानून का अंग बन जाता है।

इज्तेहाद, इज्मा, शूरा और इस्तिसलाह के आधार पर भी मुस्लिम समाज आगे बढ़ते हैं, नयी परिस्थितियों में अपने आप को ढालते हैं और इस्लामी क़ानून बनता और विस्तृत होता है।

' शूरा '
परामर्श की धारणा

'शूरा' या परामर्श में जीवन का हर पहलू सम्मिलित है और इसे विभिन्न परिस्थितियों में आसानी से अपनाया जा सकता है। इस्लाम धर्म में इसे केवल राजनैतिक क्षेत्र में ही प्रोत्साहित नहीं किया गया बल्कि इसे सामाजिक स्तर; परिवार और व्यावसायिक इकाइयों में भी प्रोत्साहित किया गया है।

क़ुरआन शूरा का उल्लेख उस समय करता है जब वह उन लोगों की सूची बताता है जिनको अल्लाह के पास न समाप्त होने वाला पुरस्कार मिलेगा 'वह लोग अपने मामलों को शूरा अथवा परामर्श के द्वारा चलाते हैं।' (क़ुरआन, 42:38) इस प्रकार शूरा एक अनिवार्य इस्लामी सिद्धान्त है।

पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल0) महत्वपूर्ण मामलों में निर्णय लेने से पहले अपने आस-पास के लोगों से परामर्श लिया करते थे चाहे ये मामले सामुदायिक हों या अपने घर के हों। आपने ऐसे अनेक आदर्श छोड़े हैं जिनमें आपने परामर्श लिया और उस परामर्श पर अमल भी किया। इस प्रकार आपने आदर्श प्रस्तुत किया कि किस तरह एक न्यायवादी नेता बना जाए या एक सफल सेनापति बना जाए या एक ऐसा पिता या पति बना जाए जो अपने परिवार से हमेशा परामर्श लेता हो। वास्तव में आप (सल्ल0) के लिए शूरा एक अभिन्न प्रक्रिया थी और आपने इसे समाज की जारी परम्परा बनाया जो वार्त्ता परस्परता और एकता पैदा करती थी।

अल्लाह तआला ने पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल0) से फ़रमायाः

> *"यह अल्लाह की ओर से ही बड़ी दयालुता है। जिसके कारण तुम उनके लिए नर्म रहे हो, यदि कहीं तुम स्वभाव के क्रूर और कठोर हृदय होते तो ये सब तुम्हारे पास से छँट जाते। अतः उन्हें क्षमा कर दो और उनके लिए क्षमा की प्रार्थना करो। और मामलों में उनसे परामर्श कर लिया करो। फिर जब तुम्हारे संकल्प किसी सम्मति पर सुदृढ़ हो जायें तो अल्लाह पर भरोसा करो। निःसन्देह अल्लाह को वे लोग प्रिय हैं जो उस पर भरोसा करते हैं।"* (क़ुरआन, 3:159)

परिवारों में शूरा

इसी तरह परिवार में भी शूरा या परामर्श बहुत महत्वपूर्ण है और यह परामर्श पूरे परिवार और बच्चों से लिया जाना चाहिए। परामर्श पारिवारिक इकाई को मज़बूत बनाता है और सबके परामर्श के आधार पर निर्णय लेने की संस्कृति पैदा करता है। यह बच्चों के अन्दर आत्मविश्वास भी पैदा करता है और परिवार के बीच भरोसे का सम्बन्ध पैदा करता है। जब शूरा परिवार के भवन की एक ईट हो, जीवन के विशेष चरणों से पार पाना जैसे बच्चों के विकास के चरण, व्यावहारिक परिवर्तन, आर्थिक चुनौतियाँ और अपने प्रियजनों आदि की मृत्यु को सहन करना आसान हो जाता है। पैग़म्बर (सल्ल0) ने फ़रमाया, ''सबसे मज़बूत ईमानवाले वह हैं जिनका आचरण और व्यवहार सबसे अच्छा हो और तुममें सबसे अच्छे वह लोग हैं जो अपने परिवार के लोगों के लिए अच्छे हों।''

इसकी तुलना हमारे आज के व्यवहार से कीजिए। हम अक्सर महिलाओं के दृष्टिकोण को हल्के से लेते हैं और महत्वपूर्ण मामलों में भी जैसे विवाह, निवेश, घर का निर्माण और बच्चों की शिक्षा में उनके परामर्श से बचते हैं जिनकी भूमिका बच्चों के जन्म में 90 प्रतिशत से अधिक होती है। हम लोग महिलाओं को महत्व नहीं देते। यह बिना किसी उद्देश्य के किसी ऐसे भूखण्ड का चक्कर लगाना है जिसके बारे में यह पता न हो कि इसके अन्दर अकूत ख़जाना दफन है। बहुत से लोगों के दृष्टिकोण में महिलाएँ दूसरे दर्जे का अस्तित्व हैं। यह विचारधारा उन लोगों की भी है जो अपने आप को महिला अधिकारों के रक्षक कहते हैं और उन लोगों की भी है जो क़ानूनी दृष्टिकोण रखने वाले ऊँचे पदों पर आसीन हैं। इसके विपरीत महिलाएँ एक ऐसे पूर्ण ढाँचे का अंग हैं जो अंग दूसरे आधे को उपयोगी बनाता है। उनका स्थान पूरक का भी नहीं है बल्कि उनका स्थान सहयोगी का है। कोई पूर्ण वस्तु उसी समय अस्तित्व में आती है जब दो आधे अस्तित्व एक साथ मिलते हैं। इस एकता के बिना मानवता पूर्ण नहीं हो सकती चाहे वह मनुष्य पैग़म्बर हो, सन्त हो या सामान्य व्यक्ति हो।

' हलाल और हराम '
वैध और अवैध की धारणा

इस्लाम एक सम्पूर्ण जीवन व्यवस्था है। किसी मनुष्य अथवा समुदाय के जीवन का कोई अंग इस्लाम से बाहर नहीं है। आर्थिक पहलू जीवन का एक महत्वपूर्ण अंग है इसलिए इस्लाम जीवन के आर्थिक पहलू को चलाने के लिए विस्तृत दिशा-निर्देश देता है। यह विशेष रूप से बताता है कि हम सम्पत्ति कैसे कमाएँ और उसका उपयोग किस प्रकार करें। इस्लामी व्यवस्था सन्तुलित है और यह हर चीज़ को उपयुक्त स्थान पर रखती है।

धन कमाना और ख़र्च करना हमारे जीवन के लिए महत्वपूर्ण है। लेकिन केवल हम इसी के लिए नहीं जीवित हैं। मनुष्य को जीने के लिए रोटी की आवश्यकता है। लेकिन वह केवल रोटी खाकर ही जीवित नहीं रह सकता। हमारे सामने जीवन का इससे बड़ा उद्देश्य है। हम धरती पर अल्लाह के ख़लीफा हैं। हमारे पास केवल शरीर ही नहीं है बल्कि हमारे अन्दर एक आत्मा और एक चेतना भी है। चेतना के बिना हमारा व्यवहार जंगली जानवरों से भी बुरा हो जाएगा और समाज में बहुत अधिक समस्याएँ पैदा करेगा।

इस्लाम की हर चीज़ मानवता के हित और कल्याण के लिए है। इस्लाम के आर्थिक सिद्धान्तों का उद्देश्य एक न्याय पर आधारित समाज स्थापित करना है जिसमें हम ज़िम्मेदारी और ईमानदारी से व्यवहार कर सकें और किसी चीज़ के सर्वाधिक संभव हिस्सेदारी के लिए स्वार्थपूर्वक आपस में न लड़ें और ईमानदारी, शालीनता, भरोसा और उत्तरदायित्व को ध्यान में रखें।

इस्लाम का आर्थिक तन्त्र निम्न सिद्धान्तों पर आधारित हैः

1. हलाल (वैध) साधनों द्वारा कमाना और ख़र्च करना,

मुसलमानो को अपनी इच्छा के अनुसार कमाने और ख़र्च करने की अनुमति नहीं दी गयी है। इस्लाम कमाने और ख़र्च करने के मामलों को चलाने के लिए क़ुरआन और सुन्नत (पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल0) का व्यवहार और शिक्षाएँ) पर आधारित क़ानून रखता हैः

अ. जूआ, लाटरी और व्याज पर आधारित लेन-देन की कमाई की तरह अल्कोहल पर

आधारित पेय पदार्थों के उत्पादन, विक्रय और वितरण से कमाई करना हराम या अवैध है। (क़ुरआन, 5:90-91; 2:275)

ब. झूठ, धोखा और चोरी द्वारा कमाई करना हराम है। अनाथ बच्चों की सम्पत्ति धोखे से लेना विशेष रूप से अवैध है। (क़ुरआन, 2:188; 4:2; 6:152; 7:85; 83:1-5)

स. खाद्य पदार्थों और बुनियादी आवश्यकताओं की जमाखोरी, तस्करी और कृत्रिम रूप से माल की कमी पैदा करना अवैध हैं। (क़ुरआन, 3:180; 9:34-35)

द. वेश्यालयों और अन्य अनैतिक स्रोतों से कमाई करना भी अवैध है जो समाज के लिए हानिकारक हैं।

इस्लाम बुराई की जड़ पर चोट करता है और न्याय पर आधारित पारदर्शी समाज की स्थापना करना चाहता है। एक मुसलमान को अपनी जीविका हलाल ढंग से कमाना चाहिए और उसे अपने मन में सदैव रखना चाहिए कि जो कुछ वह कर रहा है अल्लाह को मालूम है। क़ियामत के दिन उसे अपने कर्मों के लिए उत्तरदायी होना पड़ेगा। वह सर्वशक्तिमान अल्लाह की जानकारी से कोई चीज़ छिपा नहीं सकता।

इस्लाम में अवैध ख़र्चों की अनुमति नहीं दी गई है। एक मुसलमान को अपना धन ग़ैर ज़िम्मेदाराना ढंग से नहीं ख़र्च करना चाहिए। इसके बजाए उसे विवेकपूर्ण और सोच-समझकर ख़र्च करना चाहिए। फिजूलख़र्ची और बर्बादी को सख़्ती के साथ हतोत्साहित किया गया है। (क़ुरआन, 7:31; 17:26; 19:27-31; 25-28)

9

व्यवहारिक जीवन में इस्लाम

इस्लाम में पारिवारिक जीवन

पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल0) को पूरे भूमण्डल पर फैली हुई मानवता के मार्गदर्शन और सुधार का काम सौंपा गया था। इस सुधार में जीवन के दोनों पहलू आध्यात्मिक और भौतिक सम्मिलित हैं और उनसे कहा गया था कि वह यह कर्त्तव्य क़ुरआन के रूप में प्रदान किए गए दिव्य मार्गदर्शन के अनुसार पूरा करें।

क़ुरआन और पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल0) की शिक्षाएँ समय और समाज दोनों अवरोधों से परे थीं और इनका सम्बन्ध मानव जीवन के सभी पहलुओं से था जो मनुष्य की जानकारी में हैं और जो मनुष्य की जानकारी में नहीं हैं। आपने एक व्यापक विचार-धारा प्रस्तुत किया और उसी के अनुसार नियम और क़ानून बनाया। यह व्यवस्था सम्पूर्ण मानवता की साझा विरासत है और जो भी इसको चाहे इस तक पहुँच सकता है।

मुसलमानों और ग़ैर मुस्लिमों को क़ुरआन और पैग़म्बर की शिक्षाओं से और अधिक सीखने के लिए प्रेरित किया गया है ताकि वह अच्छे लोग बनना सीख सकें। निश्चित रूप से अल्लाह हमारी उन इबादतों को महत्व नहीं देता जो इन्सानों, जानवरों और अपने आस-पास के माहौल के प्रति दयालुता से रिक्त हो। निम्न में इस्लाम के कुछ सफल सिद्धान्त प्रस्तुत किए जा रहे हैं जिन्हें मानवता के लिए प्रस्तुत किया गया है और जो हमारे मार्ग को 21वीं सदी के प्रौढ़ युग में आज भी प्रकाशित करते हैं।

माता-पिता के प्रति कर्त्तव्य

माता-पिता को ऐसे व्यक्ति माना गया है जो दया और कृपा के सबसे अधिक अधिकारी हैं इसलिए कि क़ुरआन तौहीद को उनके प्रति दयालु और कृपालु बनने से जोड़ता है:

"तुम्हारे रब ने फ़ैसला कर दिया है कि उसके सिवा किसी की बन्दगी न करो और माँ-बाप के साथ अच्छा व्यवहार करो।" (क़ुरआन, 17:23)

अल्लाह की इबादत करने का आदेश देने के बाद हमसे लोगों के साथ दयालुतापूर्वक व्यवहार करने का आदेश दिया गया है। इस मामले में माता-पिता का उल्लेख सबसे पहले आया है।

"और अपने माता-पिता के साथ अच्छा व्यवहार करो।" (क़ुरआन, 4:36)

क़ुरआन में विभिन्न अवसरों पर अल्लाह की इबादत के बाद माता-पिता के साथ दयालुतापूर्ण व्यवहार को प्रमुखता दी गयी है। इसका अर्थ यह है कि अल्लाह के उपकारों के बाद माता-पिता के उपकार सबसे अधिक महत्वपूर्ण हैं। वह व्यक्ति के अस्तित्व, उसका जन्म, उसका पालन-पोषण, उसकी शिक्षा और उसके नैतिक और भौतिक विकास में एक बड़ी भूमिका रखते हैं। माता-पिता की देख-रेख के बिना उसका विकास बाधित होता। निर्धन और अनपढ़ माता-पिता भी अपने बच्चों के लिए बहुत अधिक त्याग करते हैं। क्योंकि पूरे समाज में इसकी तुलना किसी चीज़ से नहीं की जा सकती। माता-पिता के उपकारों में हम अल्लाह के उपकारों का प्रतिबिम्ब पाते हैं। वास्तव में इबादत का अर्थ अल्लाह के उपकारों का आभारी बनना है। माता-पिता का स्थान अल्लाह के स्थान जैसा नहीं है। इसलिए उनकी पूजा नहीं की जा सकती। लेकिन उनके साथ बहुत सम्मान का व्यवहार होना चाहिए। उनके साथ व्यवहार में दयालुता उनके उपकारों का बदला देने का एक तरीक़ा है। क़ुरआन ने हमें अल्लाह और अपने माता-पिता के प्रति आभार प्रकट करने का आदेश दिया है।

"मेरे प्रति कृतज्ञ हो और अपने माँ-बाप के प्रति भी। अन्ततः मेरी ही ओर आना है।" (क़ुरआन, 31:14)

भौतिकतावादी समाज

आधुनिक सभ्यता ने परिवार की संस्था को तितर-बितर कर दिया है। इस व्यवस्था से सम्बन्धित ऊँचे मूल्य भी नष्ट हो गए हैं। इस प्रक्रिया में इसने सबसे अधिक बूढ़े माता-पिता को प्रभावित किया हैं। आज लोग यह बहस कर रहे हैं कि बूढ़े माता-पिता के साथ क्या व्यवहार किया जाए जिनकी उपयोगिता समाप्त हो चुकी है। जब ये लोग भविष्य को बनाने में कोई उपयोगी भूमिका अब नहीं निभा सकते उनको कब तक सहन किया जायेगा। जिन माता-पिता का आज तिरस्कार किया जा रहा है, एक समय वह भी था जब उनको अपने बच्चों पर पूरा अधिकार और क्षमता प्राप्त थी कि वह उन्हें बचपन में ही अपने रास्ते से हटा सकते थे लेकिन उन्होंने ऐसा नहीं किया। एक समय वह भी था जब आज की पीढ़ी इन बूढ़े माता-पिता की कृपा पर निर्भर थी, लेकिन उन्होंने कठिन परिश्रम करके उनका पालन-पोषण किया और अपने बच्चों का पालन-पोषण करने के लिए अपने पेशानी का पसीना बहाया। पवित्र कुरआन ने विशेष रूप से माता-पिता के साथ दयालुता और विनम्रतापूर्वक व्यवहार करने का आदेश दिया है।

"यदि उनमें से कोई एक या दोनों ही तुम्हारे सामने बुढ़ापे को पहुँच जायें तो उन्हें उँह तक न कहो ओर न उन्हें झिड़को, बल्कि उनसे शिष्टतापूर्वक बात करो और उनके आगे दयालुता से नम्रता की बाहें बिछाये रखो और कहोः "मेरे रब! जिस प्रकार उन्होंने मुझे बालकाल में पाला है, तू भी उनपर दया कर।"

(कुरआन, 17:23-24)

इस्लाम में यह पर्याप्त नहीं है कि हम केवल अपने माता-पिता के लिए दुआएँ और प्रार्थनाएँ करें। बल्कि हमें असीमित सहानुभूति के साथ काम करना चाहिए और यह याद रखना चाहिए कि जब हम असहाय बच्चे थे तो उन्होंने हमें अपने लिए पसन्द किया। माताओं का विशेष रूप से सम्मान किया जाना चाहिए।

किसी व्यक्ति द्वारा अपने बूढ़े माता-पिता की उनकी सबसे अधिक कठिन अवस्था में देखभाल करने में जो उसे तनाव झेलना पड़ता है उसे महान आध्यात्मिक विकास के लिए एक सम्मान और कृपा और अवसर माना गया है।

जब माता-पिता अपने बुढ़ापे को पहुँच जाएँ तो उनके साथ दया और कृपा का व्यवहार निःस्वार्थ भाव से करना चाहिए।

"उन्हें उँह तक न कहो ओर न उन्हें झिड़को, बल्कि उनसे शिष्टतापूर्वक बात करो।" (कुरआन, 17:23)

महिलाएँ

बहुत से लोग जब मुस्लिम महिलाओं के बारे में सोचते हैं तो सबसे पहले जो शब्द उनके मन में आते हैं वह दबी हुई, पिछड़ी और समानता के अधिकारों से वंचित हैं। इस तरह के नामों के द्वारा लोग इस्लाम को कुछ सांस्कृतिक रीतियों के अनुसार देखते हैं और यह बात समझ नहीं पाते कि इस्लाम ने सातवीं शताब्दी से ही महिलाओं को सबसे अधिक विकासशील अधिकारों के द्वारा सशक्त बनाया था। इस्लाम में महिलाओं का स्थान न तो नीचे है और न वह पुरुषों की तुलना में असमान है। इस अध्याय में महिलाओं के अधिकारों, उनकी भूमिका और ज़िम्मेदारियों को इस्लाम में लैंगिक समानता पर विशेष ध्यान देते हुए प्रस्तुत किया गया है।

ऐसे समय में जब अरब में नवजात बालिकाओं को जिन्दा दफन किया जाता था और उन्हें हस्तान्तरणीय सम्पत्ति समझा जाता था, इस्लाम ने महिलाओं को समाज में ऐसे अधिकार देकर सुरक्षित किया और उनका स्थान ऊँचा किया जो उससे पहले नहीं दिये गए थे। इस्लाम ने महिलाओं को शिक्षा का अधिकार, अपनी पसंद से विवाह करने का अधिकार, विवाह के बाद अपनी पहिचान बचाये रखने का अधिकार, खुलअ का अधिकार, काम करने का अधिकार, सम्पत्ति की स्वामिनी होने और बेचने का अधिकार, क़ानून के द्वारा सुरक्षा पाने का अधिकार, मतदान का अधिकार और नागरिक और राजनैतिक मामलों में भूमिका अदा करने का अधिकार प्रदान किया।

सन् 610 ई0 में अल्लाह तआला ने मक्का में इस्लाम के पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल0)पर सन्देश अवतरित करना आरम्भ किया। पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल0) ने एक अल्लाह पर ईमान की ओर पुकारा और उन्हें आपस में न्यायपूर्ण और दयालु बनने के लिए प्रोत्साहित किया। अरब समाज के सुधार के लिए आपने विशेष रूप से महिलाओं के सम्बन्ध में उनकी मानसिकता का सुधार किया। इस्लाम ने बालिकाओं की हत्या की रीति का उन्मूलन किया और समाज में महिलाओं का स्थान ऊँचा करके आदर, सम्मान और विशेषाधिकार प्रदान किया।

अल्लाह तआला ने इस्लाम की पवित्र पुस्तक क़ुरआन में एक पूरा अध्याय ही महिलाओं को समर्पित किया है। इसके अतिरिक्त अल्लाह पूरे क़ुरआन में बार-बार महिलाओं को सीधे सम्बोधित करता है। इस्लाम घोषणाा करता है कि सभी मनुष्य, स्त्री और पुरुष शुद्ध रूप में पैदा किए गए हैं। हर मुसलमान का लक्ष्य यह है कि वह इस शुद्धता की रक्षा, बुरी प्रवृत्तियों को छोड़कर और अपने अन्दर मौजूद भली प्रवृत्तियों को और सुन्दर बनाकर करे।

इस्लाम आगे पुष्टि करता है कि अल्लाह की नजर में स्त्री और पुरुष दोनों समान हैं। क़ुरआन में अल्लाह तआला घोषणा करता है, *''वास्तव में अल्लाह के यहाँ तुममें सबसे अधिक प्रतिष्ठित वह है, जो तुममें सबसे अधिक डर रखता है।'* (क़ुरआन, 49:13)। क़ुरआन में एक अन्य स्थान पर अल्लाह तआला स्पष्ट फ़रमाता है कि सभी इंसान समान हैं : *''जिस किसी ने भी अच्छा कर्म किया पुरुष हो या स्त्री, शर्त यह है कि वह ईमान पर हो, तो हम उसे अवश्य पवित्र जीवन यापन करायेंगे। ऐसे लोग जो अच्छे कर्म करते रहे उसके बदले में हम उन्हें अवश्य उनका प्रतिदान प्रदान करेंगे।''*

(क़ुरआन, 16:97)

यद्यपि इस्लाम स्पष्ट रूप से बताता है कि स्त्री और पुरुष समान हैं लेकिन यह इस वास्तविकता को भी स्वीकार करता है कि स्त्री पुरुष समरूप नहीं हैं। अल्लाह तआला ने पुरुषों और स्त्रियों को विशेष शारीरिक और मनोवैज्ञानिक विशेषताओं के साथ पैदा किया है। इस्लाम ने इन भिन्नताओं को एक स्वस्थ्य परिवार के लिए अनिवार्य घटकों के रूप में स्वीकार किया है और वह ऐसी सामुदायिक संरचना को स्वीकार करता है जिसमें प्रत्येक व्यक्ति अपनी विशेष प्रतिभाओं द्वारा समाज में अपना योगदान देता है।

चूँकि अल्लाह का क़ानून स्त्रियों और पुरुषों दोनों पर लागू होता है लेकिन भिन्न तरीक़ों से होता है। उदाहरण के लिए अल्लाह महिलाओं को आदेश देता है कि वह अपनी शालीनता की रक्षा के लिए अपने शरीर के कुछ अंगों, जिनमें उनके बाल सम्मिलित हैं को छिपाए रखे। पुरुषों को भी अपने शरीर के कुछ अंगों को शालीनता के लिए छिपाने की आवश्यकता होती है लेकिन इस तरह नहीं जैसे महिलाओं को होती है। इसलिए अल्लाह ने स्त्रियों और पुरुषों दोनों को आदेश दिया कि वह शालीन बनें लेकिन इसके लिए दोनों को अलग-अलग तरीक़े बताए हैं।

इसी तरह महिलाओं के अधिकारों, उनकी भूमिका और उत्तरदायित्व को उपयुक्त रूप से पुरुषाों के साथ सन्तुलित किया गया है लेकिन आवश्यक नहीं कि दोनों को एक ही तरह की भूमिकाएँ प्रदान की जाएँ। चूँकि इस्लाम ने पुरुषों और स्त्रियों को व्यक्तिगत पहिचान प्रदान की है। इसलिए हर मामले में उनकी तुलना करना निरर्थक है। सामाजिक नैतिकता और सामाजिक सन्तुलन को बनाए रखने में दोनों में से प्रत्येक अपनी विशेष भूमिका अदा करता है।

इस्लाम में महिलाओं के अधिकारों को निम्नलिखित पंक्तियों में सरसरी तौर पर बताया गया है। इसमें कुछ सामान्य ग़लतफ़हमियों को सम्बोधित किया गया है और महिलाएँ समाज में जो भिन्न भूमिकाएँ और जिम्मेदारियाँ अदा करती हैं उनपर गहरी दृष्टि डाली गयी है। यहाँ पर यह भी उल्लेख करना चाहिए कि मुसलमान सदैव इस्लाम का प्रतिनिधित्व नहीं करते और वह अपने सांस्कृतिक प्रभावों या व्यक्तिगत हितों का अनुसरण करते हैं। ऐसा करके वह केवल महिलाओं का मताधिकार ही नहीं छीनते बल्कि वह महिलाओं के प्रति व्यवहार के मामले में इस्लाम द्वारा दिए गए स्पष्ट दिशा-निर्देशों का उल्लंघन भी करते हैं। इस तरह उनका व्यवहार इस्लाम ने महिलाओं को जो अधिकार और स्वतन्त्रताएँ दी हैं, उनके विरुद्ध जाता है जैसा कि निम्न में दर्शाया गया है।

शिक्षा

पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल0) ने सातवीं शताब्दी में ही घोषणा कर दी थी कि शिक्षा प्राप्त करना प्रत्येक मुस्लिम स्त्री और पुरुष का कर्त्तव्य है। यह घोषणा बहुत स्पष्ट थी और अधिकतर इसे मुसलमानों के इतिहास में लागू किया जाता रहा है। पैग़म्बर (सल्ल0) की पत्नी हज़रत आयशा इस्लाम के सबसे बड़े विद्वानों में से एक थीं। आपकी मृत्यु के बाद हज़रत आयशा से ज्ञान सीखने के लिए स्त्री और पुरुष यात्रा करके आया करते थे। क्योंकि उन्हें इस्लाम का महान विद्वान समझा जाता था। इस्लामी इतिहास के अधिकतर युगों में शिक्षा के मामले में महिलाओं की साझीदारी और विद्वता को स्वीकार भी किया जाता रहा है और इसे लागू भी किया जाता रहा है। उदाहरण के लिए सबसे पुराना चलता हुआ विश्वविद्यालय अल-करावईन मस्जिद और विश्वविद्यालय सन् 859 ई0 में मोरक्को में एक महिला, फ़ातिमा अल फिहरी द्वारा दिए गए कोष से चलाया जाता था।

मातृत्व

अल्लाह ने इस्लाम में माताओं को स्पष्ट रूप से ऊँचा स्थान दिया है और परिवार में उनके स्थान को ऊपर उठाया है। क़ुरआन में अल्लाह उन सभी त्यागों का वर्णन करता है जो माताएँ बच्चों का पालन-पोषण करने में करती हैं ताकि लोगों को अपनी माताओं के साथ प्यार, सम्मान और देख-भाल के व्यवहार को याद दिलाया जाए। माताओं के महत्व पर बल देते हुए पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल0) ने फ़रमाया, "जन्नत तुम्हारी माँओं के कदमों के नीचे हैं।

एक दूसरे अवसर पर एक व्यक्ति ने पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल0) से बार-बार पूछा कि इस दुनिया में मेरे प्यार और साथ का अधिकारी सबसे अधिक कौन है। हर बार पैग़म्बर (सल्ल0) ने यही उत्तर दिया कि तुम्हारी माँ। जब उस व्यक्ति ने चौथी बार पूछा तो आपने फ़रमाया, तुम्हारा बाप।

पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल0) ने अपने साथियों से अपने माता-पिता के साथ अच्छा व्यवहार करने का आदेश दिया चाहे उनका धर्म कुछ भी हो। हज़रत अस्मा (रज़ि0) रिवायत करती हैं कि "मेरी माँ जो ईमान नहीं लायी हैं वह मुझसे मिलने के लिए मक्का से मदीना यात्रा करके आयी हैं और उन्होंने मुझसे कुछ माँगा है। मैंने पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल0) से पूछा, "मेरी माँ मुझसे मिलने के लिए आयी हैं और मुझसे कुछ आशा कर रही हैं। क्या मैं उनके अनुरोध पर उनकी सहायता कर सकती हूँ? क्या मैं उनसे स्नेह प्रकट करुँ और उनके साथ दयालुता का व्यवहार करुँ?" आपने फ़रमाया, "हाँ, अपनी माँ के साथ दयालुता का व्यवहार करो।"

राजनीति और सामाजिक सेवाएँ

प्रारम्भिक मुसलमानों में महिलाएँ समाज की गतिविधियों में सक्रिय रूप से साझीदार रहती थीं। महिलाएँ स्वतन्त्र रूप से अपने विचार व्यक्त करतीं और उनके परामर्श सक्रिय रूप से लिए जाते थे। महिलाएँ युद्ध के दौरान घायलों की देख-रेख करतीं और कुछ युद्ध में भी भाग लेती थीं। महिलाएँ बाज़ार में खुलकर व्यापार करती थीं। यहाँ तक कि दूसरे ख़लीफा हज़रत उमर (रज़ि0) ने सफा बिन्ते अब्दुल्लाह नाम की एक महिला को बाज़ार की निरीक्षिका नियुक्त किया।

इस्लामी इतिहास में महिलाएँ सरकार, जनता के मामलों, क़ानून बनाने, विद्याओं और शिक्षा देने में भागीदार रहती थीं। इस परम्परा को जारी रखने के लिए

महिलाओं को मुस्लिम समुदाय की सेवा, नेतृत्व और विभिन्न पहलुओं से उसका विकास करने में सक्रिय साझीदारी के लिए प्रेरित किया जाता है।

विरासत

इस्लाम से पहले सारी दुनिया में महिलाओं को विरासत के अधिकार से वंचित रखा गया था और उन्हें स्वयं ही ऐसी सम्पत्ति समझा जाता था जिनको पुरुष विरासत के रूप में प्राप्त करते थे। इस्लाम ने महिलाओं को सम्पत्ति रखने का अधिकार प्रदान किया और अपने रिश्तेदारों से विरासत पाने का अधिकार दिया, जो सातवीं शताब्दी में एक क्रान्तिकारी कदम था।

महिला चाहे पत्नी हो, माँ हो, बहन हो या बेटी हो, वह अपने मरे हुए रिश्तेदार की सम्पत्ति का एक हिस्सा विरासत के रूप में प्राप्त करती है। उसका यह हिस्सा मृतक से उसके रिश्ते के दर्जे पर और वारिसों की संख्या पर आधारित है। जब दुनिया के विभिन्न समाज महिलाओं को विरासत से वंचित रखते थे, उस समय इस्लाम ने महिलाओं को यह अधिकार दिया और दिव्य इस्लामी कानून के व्यापक न्याय का प्रदर्शन किया।

आर्थिक कर्त्तव्य

इस्लाम ने महिलाओं पर घर को चलाने, खिलाने या सामान्य खर्चों को पूरा करने के लिए धन कमाने या खर्च करने का कर्त्तव्य नहीं लिया है। यदि महिला का विवाह हो गया है तो उसके पति को आर्थिक रूप से उसे पूरी तरह सहयोग देना चाहिए और यदि वह विवाहित नहीं है तो यह ज़िम्मेदारी उसके निकटतम पुरुष सम्बन्धी (पिता, भाई, चाचा आदि) पर आती है।

उसे काम करने का अधिकार है और अपने कमाए हुए धन को अपनी इच्छा के अनुसार ख़र्च करने का भी अधिकार है। उसे अपने धन को अपने पति या परिवार के अन्य सम्बन्धियों से साझा करने की ज़िम्मेदारी नहीं है। हालाँकि वह नेकी की भावना से ऐसा कर सकती है। उदाहरण के लिए पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल0) की पत्नी हज़रत ख़दीजा (रज़ि0) मक्का की सबसे अधिक सफल महिला व्यापारी थीं और उन्होंने अपने धन के द्वारा अपने पति को और इस्लाम को सहयोग देने के लिए खर्च किया।

विवाह के समय महिला को अपने पति से आर्थिक उपहार (महर) प्राप्त करने का अधिकार है।

यह महर क़ानूनी रूप से उसका अपना है और इसका उपयोग कोई और नहीं कर सकता। यदि उसको तलाक़ दे दी जाए तो जो कुछ उसने तलाक़ से पहले प्राप्त किया था, और विवाह के बाद उसने व्यक्तिगत रूप से जो कुछ कमाया है, उसे रखने का उसे अधिकार है। उसकी सम्पत्ति पर उसके पहले पति का कोई अधिकार नहीं रह जाता। इससे महिला की आर्थिक सुरक्षा और स्वतन्त्रता सुनिश्चित होती है और तलाक़ की स्थिति में अपना ख़र्च चलाने के लिए अपने धन का उपयोग कर सकती है।

विवाह

एक महिला को विवाह-प्रस्तावों को स्वीकार अथवा अस्वीकार करने का अधिकार है और विवाह समझौते को पूरा करने के लिए उसकी स्वीकृति आवश्यक है। उसपर उसकी इच्छा के विरुद्ध विवाह के लिए दबाब नहीं बनाया जा सकता और यदि ऐसा सांस्कृतिक कारणों से होता है तो यह इस्लाम की स्पष्ट अवहेलना है। इसी सिद्धान्त के आधार पर, यदि वह विवाह से असन्तुष्ट है तो महिला को खुलअ लेने का अधिकार है।

इस्लाम में विवाह पारस्परिक शान्ति, प्यार और सहानुभूति पर आधारित है। अल्लाह तआला अपने सम्बन्ध में फ़रमाता है: *"और यह भी उसकी निशानियों में से है कि उसने तुम्हारी ही सहजाति से तुम्हारे लिए जोड़े पैदा किए, ताकि तुम उनके पास शान्ति प्राप्त करो। और उसने तुम्हारे बीच प्रेम और दयालुता पैदा की।"* (क़ुरआन, 30:21) पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल0) सर्वोकृष्ट चरित्र हैं और मुसलमानों के लिए आदर्श हैं। अपने घर-परिवार के लोगों के लिए मददगार रहने और अपने परिवार के लोगों के साथ सहानुभूति और प्यार का व्यवहार करने के मामले में आपका आदर्श एक ऐसी परम्परा है जिसे मुसलमान अपने नैतिक जीवन में लागू करने का प्रयास करते हैं। पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल0) ने अपनी पत्नियों के साथ बहुत अधिक आदर और सम्मान का व्यवहार किया और कभी बुरा-भला नहीं कहा। आपकी एक हदीस में स्पष्ट कहा गया है, *"तुममें से सबसे अच्छे वह लोग हैं जो अपनी पत्नियों के लिए सबसे अच्छे हैं।"*

सम्मान और हानि से सुरक्षा

इस्लाम में भावनात्मक, शारीरिक और मनोवैज्ञानिक रूप से उनके अधिकारों का उल्लंघन करने से रोका गया है और महिलाओं का अनुपयुक्त व्यवहार इस सामान्य नियम का अपवाद नहीं है। वास्तव में यदि सम्पूर्ण सन्दर्भ में अध्ययन किया जाए तो इस्लाम में कोई ऐसी शिक्षा नहीं है जो किसी तरह की घरेलू हिंसा का समर्थन करती है। एक प्रमुख

मुस्लिम महिला विद्वान डा0 जैनब अल्वानी के अनुसार, इस्लाम स्पष्ट रूप से किसी भी तरह के दमन और अधिकारों के हनन से रोकता है। यह कई बार बताया जा चुका है कि जो कोई इस्लाम के नाम पर अन्यायपूर्ण अधिकारों का प्रयोग करता है वह वास्तव में ऐसा सांस्कृतिक प्रभावों या व्यक्तिगत हितों के कारण करता है। इस्लामी क़ानून के अन्तर्गत अल्लाह की सभी रचनाएँ सम्मान करने योग्य हैं और उनको सुरक्षा दी गयी है।

शालीनता

एक ऐसे माहौल में जो विभिन्न माध्यमों से भौतिक रूप-रेखा पर लगातार जोर देता है, औरतों को लगातार सुन्दरता के न प्राप्त किए जा सकने वाले मानकों का सामना करना पड़ता है। जबकि मुस्लिम महिलाओं को उनके शालीन परिधान के कारण ग़लत ढंग से दबे हुए वर्ग के रूप में बाँटा जाता है। अपने आस-पास के समाज के द्वारा वह वस्तु के रूप में प्रयोग किए जाने से वास्तव में स्वतन्त्र हैं। यह शालीन रूप जिसमें पर्दा भी सम्मिलित है, उसकी शारीरिक बनावट की बजाए औरत के व्यक्तित्व और चरित्र को उजागर करता है और वह कैसा व्यक्तित्व है, इसकी गहरी समझ को विकसित करता है। इस सम्बन्ध में मुस्लिम महिलाएँ हज़रत ईसा मसीह की माँ मरियम की तरह हैं जो अपनी शालीनता और सतीत्व के लिए जानी जाती हैं।

अन्त में, इस्लाम अल्लाह द्वारा दिए हुए मार्गदर्शन और उसके पैग़म्बर के व्यवहार के आधार पर महिलाओं की नागरिक स्वतन्त्रता की रक्षा की व्यापक परम्परा रखता है। महिलाएँ इस्लामी क़ानून के अन्तर्गत अनेक अधिकारों और सुरक्षात्मक नियमों से सशक्त बनायी गयी हैं और समाज में उनको प्रतिष्ठित स्थान देकर सम्मानित किया गया है।

पिता

पैग़म्बर (सल्ल0) ने फ़रमाया,

"किसी पिता के पास अपनी सन्तान के लिए इससे बड़ा उपहार नहीं कि वह अपने बेटे के अन्दर शिष्ट आचरण उत्पन्न करने का प्रयास करे"।

पैग़म्बर (सल्ल0) ने फ़रमायाः,

"एक बाप अपने बच्चों को जो सबसे अच्छी चीज़ दे सकता हैं वह यह है कि उनको शिष्ट रहन-सहन और अच्छी शिक्षा प्रदान करे"।

पैग़म्बर (सल्ल0) ने फ़रमाया,

''एक व्यक्ति के सभी कर्म उसकी मृत्यु के साथ समाप्त हो जाते हैं परन्तु तीन चीज़ें समाप्त नहीं होतीं: ऐसा दान जो भविष्य के लिए लाभदायक हो, लाभदायक ज्ञान, और अपने बच्चों को ऐसा बनाना कि वह उसके लिए दुआएँ करें।

बच्चे

पैग़म्बर (सल्ल0) बच्चों से प्यार करते थे, अपनी मासूमियत और निश्छलता के कारण वह जीवन्त होते हैं। अल्लाह के निकट, अपने हृदय के निकट वह उन लोगों की ओर विशेष रूप से ध्यान देते जो हृदय की भाषा समझ सकते थे।। आप बच्चों को चूमते और उनके मासूमियत के स्तर तक पहुँच कर उन्हें अपने कन्धों पर बिठाते और उनके साथ खेलते, जो अपने सार के अनुसार अल्लाह की शाश्वत इबादत का प्रकटीकरण है। पैग़म्बर (सल्ल0) का व्यवहार इसका निरन्तर संस्मरण था। यदि आपकी नमाज़ किसी बच्चे के रोने से प्रभावित हो जाती तो पैग़म्बर (सल्ल0) अपनी नमाज़ छोटी कर देते मानो आप बच्चे की नमाज़ के प्रति सजग हो रहे हों।

पैग़म्बर (सल्ल0) बच्चों के प्रति बहुत दयालु थे और उन्हें *''जन्नत के फूल''* कहा करते थे। आप यह भी कहा करते थे, *''किसी व्यक्ति के लिए सौभाग्य की चीज़ों में नेक बच्चा भी सम्मिलित है''।*

यदि कोई मौसम का पहला फल लेकर आता तो पैग़म्बर (सल्ल0) सबसे पहले वहाँ उपस्थित सबसे छोटे बच्चे को देते। वह बच्चों का अभिवादन मैत्री भाव से गाल अथवा माथे पर चुम्बन द्वारा किया करते थे। एक बार जब आप कुछ बच्चों का अभिवादन चुम्बन द्वारा कर रहे थे तो एक बद्दू ने कहा, ''आप बच्चों को इतना अधिक प्यार करते हैं। मेरे दस बच्चे हैं, मैने उनमें से कभी किसी को नहीं चूमा''। पैग़म्बर (सल्ल0) ने उत्तर दिया, ''यदि अल्लाह ने तुम्हारे हृदय से प्यार छीन लिया हो तो मैं क्या कर सकता हूँ?'' आपका प्यार और आपकी दयालुता मुस्लिम बच्चों तक ही सीमित नहीं थी। वास्तव में आप प्रत्येक बच्चे की शुद्धता और निर्दोषता की घोषणा करते। ''प्रत्येक बच्चा अपनी शुद्ध प्रकृति पर जन्म लेता है''।

पैग़म्बर (सल्ल0) ने फ़रमाया, *''झूठ बोलना बुराई है चाहे यह मज़ाक में हो अथवा गम्भीरतापूर्वक हो। अपने छोटे बच्चों से झूठे वादे न करो''।*

माता-पिता - बच्चों के आपसी सम्बन्ध

इस्लाम बच्चों के पालन-पोषण की जिम्मेदारी पूरी तरह माता-पिता पर डालता है। शारीरिक देखभाल और खानपान के अतिरिक्त उनकी जिम्मेदारियों में इस्लामी संस्कृति सिखाना और मुस्लिम समुदाय के समाज का आदी बनाना भी है। शरीअत में आदेश दिया गया है कि माँ-बाप बच्चों को इस्लामी शिक्षा, इस्लामी कर्मकाण्ड, इस्लामी क़ानून और नैतिकता की शिक्षा देने का प्रबन्ध करें। माता-पिता उन्हें वृहत्तर परिवार और समाज की सेवा के जीवन के लिए तैयार करें और जब वह ग़लती करें तो उनको सुधारें और उन्हें हर समय अच्छे परामर्श और अच्छे आदर्श उपलब्ध कराएँ। बच्चों को आधुनिक शिक्षा अवश्य देनी चाहिए। बहुलतावादी समाज में, जिसमें अलग-अलग धर्म और विश्वास के लोग रहते हैं, बच्चों को विभिन्न धर्मों की मौलिक जानकारी देनी चाहिए और माता-पिता को अपने बच्चों में सहनशीलता की भावना और दूसरे धर्मों के दर्शन का सम्मान करने की भावना पैदा करनी चाहिए।

पैग़म्बर (सल्ल0) बच्चों से उनकी निश्छलता, सज्जनता और हर क्षण प्रस्तुत रहने की योग्यता के कारण प्यार करते थे। अल्लाह से निकट, उनके अपने दिल से निकट रहकर आप उन लोगों की सुनने के लिए तैयार रहते थे जो लोग दिल की भाषा समझते थे। आप बच्चों को चूमते, अपने कन्धों पर ढोते और उनके साथ खेलते भी थे।

वयोवृद्ध

इस्लाम की शिक्षाओं में बड़े-बूढ़े लोगों को भी बहुत अधिक महत्व और सम्मान प्रदान किया गया है और उनके जीवन के अन्तिम चरण में उनके अन्दर आशा और उत्साह की भावनाओं को जगाने का प्रयास किया गया है। हज़रत अनस (रज़ि0) रिवायत करते हैं कि पैग़म्बर (सल्ल0) ने फ़रमाया,

"यदि एक युवा व्यक्ति किसी बूढ़े व्यक्ति की सहायता, उसके बुढ़ापे के कारण करता है तो अल्लाह निश्चित रूप से उसके लिए ऐसे लोगों को नियुक्त करेगा जो उस समय उसका सम्मान करेंगे जब वह बूढ़ा हो जायेगा"।

पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल0) ने एक बार बताया कि

"फ़रिश्ता जिब्रील (अलै0) ने मुझे आदेश दिया कि मैं बड़े-बूढ़े लोगों को वरीयता प्रदान करुँ। उन्होंने शिक्षा दी कि 'खाना परोसते समय और समारोहों में बड़े-बूढ़े लोगों को अन्य लोगों की तुलना में वरीयता देनी चाहिए'"।

उन्होंने कहा, खाना परोसते समय बूढ़े व्यक्ति से प्रारम्भ करो।

पैग़म्बर (सल्ल0) ने फ़रमाया, *"जो व्यक्ति हमारे छोटों के प्रति स्नेह नहीं प्रकट करता है और जो हमारे बड़े-बूढ़े लोगों का सम्मान नहीं करता है वह हममें से नहीं (अर्थात मुसलमानों में से नहीं)"।*

सगे-सम्बन्धी

अल्लाह क़ुरआन में कहता है:

"सगे-सम्बन्धियों के साथ अच्छा व्यवहार करो"। (क़ुरआन, 4:36)

क़ुरआन कहता है माँ-बाप के बाद हमारे सगे सम्बन्धी हमारी दयालुता के सबसे अधिक अधिकारी हैं। हमारे सगे सम्बन्धी हमारे माता-पिता के द्वारा हमसे जुड़े होते हैं। अपने सगे सम्बन्धियों के साथ सम्बन्धों को क़ायम रखने से हमारा सामाजिक जीवन खुशहाल हो जाता है। जिस परिवार में सम्बन्धियों के साथ अच्छा सम्बन्ध नहीं होता वहाँ सामाजिक द्वेष उत्पन्न होता है। सुलेमान बिन आमिर (रज़ि0) पैग़म्बर (सल्ल0) से रिवायत करते हैं कि:

"किसी निर्धन व्यक्ति (जो रिश्तेदार न हो) को दान देकर सन्तुष्ट करना मात्र उसकी सहायता है परन्तु यही दान यदि किसी रिश्तेदार को दिया जाए तो यह दान भी है और अपने रिश्तेदार से सम्बन्ध स्थापित करने का प्रतीक भी है"।

इसका अर्थ यह है कि रिश्तेदारों पर खर्च करने का दोगुना बदला है। यह वास्तविकता है कि मनुष्य अपने सगे सम्बन्धियों से प्राकृतिक लगाव रखता है लेकिन यह भी वास्तविकता है कि ये सम्बन्ध बहुत नाज़ुक होते हैं। छोटी-छोटी घटनाएँ इन सम्बन्धों को प्रभावित कर देती हैं। पैग़म्बर (सल्ल0) कहते हैं कि इन सम्बन्धों को टूटने नहीं देना चाहिए। इन सम्बन्धों को बनाये रखने का हर संभव प्रयास करना चाहिए। हज़रत अब्दुल्लाह बिन उमर (रज़ि0) रिवायत करते हैं कि पैग़म्बर (सल्ल0) ने कहा था:

"अपने रिश्तेदारों से सम्बन्ध बनाये रखने का तात्पर्य यह नहीं है कि अपने रिश्तेदारों के सत्कर्मों के बदले में सत्कर्म किये जाएँ बल्कि वास्तव में इसका अर्थ है, जब सम्बन्ध टूट जाएँ तो सम्बन्ध स्थापित करना"।

इस्लाम में सामाजिक जीवन

पड़ोसी

इस्लाम ने जो विशेषाधिकार दिए हैं उनमें से पड़ोसियों को सबसे अधिक अधिकार प्राप्त हैं। जिन लोगों के साथ हम रहते-बसते हैं और पड़ोसी, और जिनके साथ हमारे सामाजिक सम्बन्ध होते हैं उन्हें छोड़ा नहीं जा सकता। हमारे ऊपर इनके, उन लोगों से अधिक अधिकार हैं जिनका हमसे कोई सम्बन्ध नहीं है। यहाँ पड़ोसियों को तीन वर्गों में वर्गीकृत किया गया है- वह पड़ोसी जो हमारे रिश्तेदार हैं, वह पड़ोसी जो हमारे रिश्तेदार नहीं हैं और वह लोग जो संयोगवश हमसे मिलते हैं यात्रा करते समय, कार्यालय में, स्कूल अथवा कॉलेज में और उन स्थानों पर जहाँ हम काम करते हैं, ऐसे लोग भी हमारे पड़ोसी हैं। कुरआन की निम्नलिखित आयतों में पड़ोसियों के प्रति सद्व्यवहार और दयालुता का परामर्श दिया गया हैः

"अच्छा व्यवहार करो सम्बन्धियों के साथ और अनाथों और निर्धनों और सम्बन्धी पड़ोसी और अजनबी पड़ोसी और पास बैठने वाले और यात्री के साथ और दासों के साथ"। (कुरआन, 4:36)

संसार के सभी धर्मों ने पड़ोसियों के साथ उदारतापूर्ण व्यवहार को महत्व दिया है। परन्तु इस्लाम ने मात्र सद्व्यवहार को ही महत्व नहीं दिया है बल्कि उसने पड़ोसी की धारणा को इतना व्यापक बना दिया है कि इसका उदाहरण कहीं और नहीं मिलता। पड़ोसी होने के अधिकार के लिए थोड़ी देर के लिए भी किसी तरह से साथ हो जाना पर्याप्त है। यदि यह साथ अधिक समय के लिए हो जाता है तो पड़ोसी का अधिकार उसी के अनुसार और अधिक मज़बूत हो जाता है।

हज़रत आयशा (रज़ि0) और हज़रत अब्दुल्लाह बिन उमर (रज़ि0) दोनों ने रिवायत किया कि पैग़म्बर (सल्ल0) ने फ़रमायाः

"फ़रिश्ता जिब्रील (अलै0) ने पड़ोसी के साथ उदारतापूर्ण व्यवहार पर इतना अधिक बल दिया कि मुझे डर लगने लगा कि वह उत्तराधिकार में पड़ोसियों को हिस्सा देने का आदेश न दे दें"।

इस्लाम मात्र इतना ही नहीं कहता कि पड़ोसियों को किसी भी तरह दुख न पहुँचाया जाए बल्कि वह इस बात पर बल देता है कि पड़ोसी हमारी ओर से नैतिक और सामाजिक सहायता का अधिकार रखते हैं। हमें उनके साथ सर्वाधिक शिष्ट व्यवहार करना चाहिए ताकि समाज का प्रत्येक सदस्य इस विश्वास के साथ जी सके कि वह अपने लोगों के बीच सुरक्षित है, और वह लोग किसी भी समय मेरे काम आ सकते हैं। इस सम्बन्ध में इस्लाम के व्यवहार का निचोड़ निम्नलिखित हदीस से समझा जा सकता है:

हज़रत अबू हुरैरा (रज़ि0) कहते हैं कि पैग़म्बर (सल्ल0) ने तीन बार कहा:

"अल्लाह की क़सम वह मोमिन नहीं है!"

"अल्लाह की क़सम वह मोमिन नहीं है!"

"अल्लाह की क़सम वह मोमिन नहीं है!"

जब आपसे पूछा गया कि वह व्यक्ति कौन है तो उन्होंने उत्तर दिया: "जिसका पड़ोसी उसकी शरारत से सुरक्षित न हो"।

यह हदीस स्पष्ट कर देती है कि पड़ोसी को कष्ट पहुँचाना ईमान (आस्था) के प्रतिकूल है। एक अन्य हदीस में हज़रत अब्दुल्लाह बिन अब्बास (रज़ि0) कहते हैं कि पैग़म्बर (सल्ल0) ने फ़रमाया:

"वह व्यक्ति ईमान वाला अथवा मुसलमान नहीं जिसका पेट भरा हो और उसका पड़ोसी भूखा रहे"।

एक दूसरे अवसर पर पैग़म्बर (सल्ल0) ने कहा:

"क्या तुम जानते हो कि पड़ोसी के क्या कर्त्तव्य हैं? जब वह तुमसे मदद माँगे तो उसकी मदद करो, परेशानी में यदि वह सहयोग माँगे तो उसे सहयोग दो, यदि उसे कर्ज की आवश्यकता हो तो उसे कर्ज दो, उसे कर्ज की राहत दो अगर उसे आवश्यकता हो, यदि वह बीमार पड़ जाए तो उसकी देखभाल करो। जब उसकी मृत्यु हो जाए तो उसकी शवयात्रा में जाओ। उसकी खुशियों और उपलब्धियों में उसे मुबारकवाद दो। यदि उसके ऊपर कोई मुसीबत पड़ जाए तो उसके साथ सहानुभूति प्रकट करो, उसके घर से ऊँचा अपना घर (उसकी अनुमति के बिना) न बनाओ ताकि इससे उसकी हवा में अवरोध न पैदा हो। उसे भयभीत न करो। यदि तुम कोई फल खरीदो तो उसमें से पड़ोसी को भी दो"।

निर्धन

जो लोग जहन्नम की आग में डाले जाएंगे उनसे जब पूछा जाएगा कि,

"तुमको क्या चीज़ नरक में ले गयी। वह कहेंगे हम नमाज़ पढ़ने वालों में से न थे। और हम निर्धनों को खाना नहीं खिलाते थे।" (क़ुरआन, 74: 42-44)

पैग़म्बर (सल्ल0) ने अपनी पत्नी हज़रत आयशा (रज़ि0) से कहा:"ऐ आयशा! किसी ज़रूरतमंद को अपने दरवाज़े से ख़ाली हाथ कभी मत लौटाओ। उसे कुछ न कुछ दो, चाहे तुम्हारे पास उसके लिए मात्र आधी खजूर ही हो। ऐ आयशा ग़रीबों से प्यार करो और उन्हें अपने निकट रखो,अल्लाह कियामत के दिन तुम्हें अपने निकट रखेगा।

पैग़म्बर (सल्ल0) ने बलपर्वूक कहा: *"किसी समारोह में यदि इस प्रकार खाना परोसा जाए जिसमें मात्र धनवान लोगों को ही आमन्त्रित किया गया हो, और जिससे निर्धन लोगों को अलग रखा गया हो वह खाना सबसे बुरा है"।*

पैग़म्बर (सल्ल0) के साथी जअफ़र (रज़ि0) निर्धनों से प्रेम करते थे, उनके साथ बैठते, उनके साथ ठहरते और उनके साथ बात करते। पैग़म्बर (सल्ल0) उन्हें अबुल मसाकीन (निर्धनों का पिता) कहकर पुकारते।

पैग़म्बर (सल्ल0) के एक अन्य साथी सअद (रज़ि0) की प्रवृत्ति कुछ अहंकारी थी और वह अपने आप को निर्धनों से ऊँचा समझते थे। पैग़म्बर (सल्ल0) ने उनको यह कहते हुए सम्बोधित किया, *"तुम्हारे पास जो भी सफलता और पूँजी है वह निर्धनों की मेहनत के कारण ही है"।*

रोगी

पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल0) विशेष रूप से रोगियों के पास जाने में रुचि लेते थे। वह उनके स्वास्थ्य के सम्बन्ध में पूछते, उनके बिस्तर के पास बैठते, रोगी के माथे पर हाथ फेरते, और यदि वह कुछ खाने के लिए माँगता तो वह इसकी व्यवस्था करते। आप (सल्ल0) रोगी की देखभाल करते, उसको साँत्वना देते और उससे कहते, "अगर अल्लाह चाहेगा तो तुम पुनः स्वस्थ हो जाओगे"। जिस क्षण भी आप किसी मुस्लिम अथवा ग़ैर मुस्लिम व्यक्ति की बीमारी की सूचना पाते तो आप उसे देखने जाते। यहाँ तक कि जब इस्लाम का शत्रु और कपटाचारियों का सरदार अब्दुल्लाह बिन उबई बीमार पड़ा तो आप उसको भी देखने गये।

नौकर

हज़रत अब्दुल्लाह बिन उमर (रज़ि0) ने पैग़म्बर (सल्ल0) से रिवायत किया कि वह कहते थेः

''मजदूर को उसकी मजदूरी, उसका पसीना सूखने से पहले दे दो''।

पैग़म्बर (सल्ल0) दासों के प्रति विशेष रूप से दयालु थे। आप कहा करते थे, ''वह तुम्हारे भाई और बहन हैं अतः जो तुम खाते हो उन्हें भी वही खिलाओ और जो तुम पहनते हो उन्हें भी वही पहनाओ''।

जब दासों को दास कहकर पुकारा जाता था तो अधिकतर वे अपमानित महसूस करते थे। पैग़म्बर (सल्ल0) ने अपने साथियों को परामर्श दिया कि उन्हें 'मेरा दास' अथवा 'मेरी दासी' न कहो बल्कि 'मेरा बेटा' और 'मेरी बेटी' कहो। उन्होंने दासों से भी कहा कि अपने मालिकों को स्वामी न कहें क्योंकि अल्लाह ही एक मात्र स्वामी है। आप (सल्ल0) उनके लिए इतने दयालु थे कि उन्होंने मृत्यु से पहले अपने सम्बोधन में कहाः ''दासों के सम्बन्ध में अल्लाह से डरो और उनका सम्मान करो''।

विकलांग

पैग़म्बर (सल्ल0) अपनी उमड़ती हुई सहानुभूति और प्यार के साथ उन लोगों के सम्बन्ध में चिन्तित रहते और उनपर विशेष ध्यान देते जो शारीरिक रूप से अथवा मानसिक रूप से विकलांग थे। सम्पूर्ण इतिहास में आज तक समाज अन्यायपूर्ण ढंग से कमज़ोरों और विकलांगों की अनदेखी करता आया है। यह लोग पहले भी वहिष्कृत और समाज के लिए अनचाहे बोझ के रूप में देखे जाते थे और आज भी देखे जाते हैं। दयालु पैग़म्बर ने उनको दयनीय दशा की गर्त से उठाकर प्रसन्नता के शिखर तक पहुँचाया और यह शिक्षा दी किः

''जो पृथ्वी पर हैं उनके प्रति दया करो और जो आसमान पर है वह तुम्हारे प्रति दया करेगा।''

पैग़म्बर (सल्ल0) की यह असाधारण घोषणा अपने अन्दर समाज के सभी उपेक्षित वर्गों को समेट लेती है जिनमें अन्धे, बहरे और मानसिक तथा शारीरिक रूप से विकलांग लोग सम्मिलित हैं।

अनाथ

माता-पिता और रिश्तेदारों के अधिकार सर्वाधिक महत्वपूर्ण हैं। इन लोगों के बाद समाज के कमज़ोर वर्ग हमारे दयालुतापूर्ण व्यवहार के अधिकारी हैं। इस सम्बन्ध में अनाथों और निर्धन व्यक्तियों का उल्लेख पहले किया गया है।

कुरआन कहता हैः

"और अनाथों और निर्धनों के साथ दयालुता का व्यवहार करो"।

(कुरआन, 4:36)

माता अथवा पिता की मृत्यु किसी बच्चे को प्यार, स्नेह और कभी-कभी आर्थिक स्थायित्व से वंचित कर देती है जिनका जीवन में बुनियादी महत्व है। अतः इन अनाथ बच्चों की देख-रेख समाज का कर्त्तव्य है। इन बच्चों को अपने माता अथवा पिता की कमी को महसूस होने का अवसर नहीं देना चाहिए। समाज की ओर से उनकी कोई अनदेखी उनके शारीरिक विकास को ही प्रभावित नहीं करेगी बल्कि उन्हें मानसिक और भावनात्मक रूप से भी कमज़ोर कर देगी। इस बात की प्रबल सम्भावना है कि ऐसे बच्चे जिनकी उचित ढंग से देखभाल न की गयी हो उनके अन्दर ऐसे निर्मम समाज के विरुद्ध विद्रोह की भावनाएँ उत्पन्न हों। अच्छे नागरिक बनने के बजाये वह असामाजिक तत्व बन सकते हैं।

कुरआन और पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल0) की हदीसों ने बार-बार अनाथ बच्चों की शैक्षिक आवश्यकताओं और उनकी सम्पत्ति पर ध्यान देने की आवश्यकता पर बल दिया है।

अनाथ अपने अधिकारों की रक्षा नहीं कर सकते क्योंकि, वह असहाय और कम समझ वाले होते हैं। उनके अधिकारों को छीन लेना सरल होता है। कुरआन ने यतीमों के अधिकारों का हनन करने वालों की निन्दा की है।

"जो लोग अनाथों की पूँजी अनधिकृत रूप से खाते हैं वह लोग अपने पेटों में आग भर रहे हैं और वह शीघ्र भड़कती हुई आग में डाले जायेंगे"।

(कुरआन, 4:10)

इस्लाम समाज को इन अनाथ बच्चों की देखभाल का उत्तरदायी ही नहीं बनाता बल्कि वह उन्हें अल्लाह से डरने वाले सुसंस्कृत नागरिक बनाने में उनकी सहायता करता है ताकि वे भविष्य में समाज के लिए एक पूँजी बन सकें।

सभी रचनाओं के लिए दया

कुरआन में अल्लाह की महत्वपूर्ण विशेषताएँ अल-रहमान (अत्यन्त दयावान) और अल-रहीम (अत्यन्त कृपाशील) बतायी गयी हैं। इन दोनों शब्दों के भाव में दया, प्रेम, उपकार, सहानुभूति, दयालुता और कृपा सम्मिलित हैं।

पैग़म्बर (सल्ल0) ने फ़रमायाः ''जब अल्लाह तआला ने समस्त चीज़ों को बनाया तो उसने उसके पास जो पवित्र किताब है जो सबसे ऊपर के आसमान में है, उसमें लिख दिया कि ''मेरी दया, मेरी यातना से बढ़कर है''। इसके बाद अल्लाह तआला फरमाता है कि उसने अपनी दया को सौ भागों में बाँट दिया, उसने निन्यानवे भागों को अपने पास रखा और एक भाग को अपनी रचनाओं के लिए पृथ्वी पर भेज दिया। इसी एक अंश के द्वारा समस्त रचनाओं में एक दूसरे के प्रति दयालुता का प्रकटीकरण होता है।

''सर्वशक्तिमान अल्लाह फ़रमाता है, ''हमने तुम्हें सम्पूर्ण रचनाओं के लिए दया बनाकर भेजा है। यह दया सम्पूर्ण संसारों के लिए है''।

(कुरआन, 21:107)

अल्लाह तआला ने पैग़म्बर (सल्ल0) को जो दया प्रदान की है वह मात्र मानवता तक ही सीमित नहीं है, बल्कि इस सबसे बड़े दैवीय उपकार में सभी रचनाएँ (सजीव व निर्जीव) साझीदार हैं।

कुरआन के व्याख्याकारों ने कहा है कि चूँकि कुरआन संसार में सारी दयालुता का स्रोत है, इसे सबसे पहले पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल0) को दिया गया जो मानवता के लिए दयालुता के सन्देश के एक मात्र वाहक हैं। इस प्रकार यह आयत ऐसी है जो बताती है कि पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल0) सम्पूर्ण रचनाओं के लिए दया बना कर भेजे गये थे। क्योंकि उनके बिना कुरआन का अवतरण नहीं होता।

कुरआन और पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल0) दोनों अल्लाह की सर्वत्र विद्यमान दया की अभिव्यक्ति हैं। इसका परिणाम उसकी अन्य अनेक विशेषताओं के अतिसिक्त एक ऐसे मनुष्य का चित्रण है, जो अपने अन्दर सहानुभूति और दया के आदर्शों को समेटे हुए है।

चिड़ियों और पशुओं के प्रति व्यवहार

"धरती में चलने-फिरने वाला कोई भी प्राणी हो या अपने दो परों से उड़नेवाला कोई भी पक्षी, ये सब तुम्हारी ही तरह के गिरोह हैं।" (क़ुरआन, 6:38)

"अल्लाह ने हर जीवधारी को पानी से पैदा किया, तो उनमें से कोई अपने पेट के बल चलता है और कोई उनमें दो टाँगों पर चलता है और कोई उनमें चार (टाँगों) पर चलता है।" (क़ुरआन, 24:45)

"सभी रचनाएँ अल्लाह का परिवार हैं और अल्लाह उस व्यक्ति से अधिक प्यार करता है जो उसके परिवार से प्यार करता है।"

यद्यपि जानवरों को मौलिक रूप से मानवता के हित के लिए पैदा किया गया है। इसके बावजूद इस्लामी नियम मुसलमानों से कुछ विशेष ज़िम्मेदारियों और कर्त्तव्यों की माँग करते हैं। क़ुरआन के अनुसार रचनाएँ और जन्तुओं के व्यावहारिक क्रम हमें क़ायनात में अल्लाह की निशानियों के पीछे विवेक और तर्क और बुद्धि की सूचना देते हैं। क़ुरआन ने चीटियों के विशेष सूचना तन्त्र के बारे में जीव-विज्ञानियों से पहले ही बता दिया था। (क़ुरआन, 27:18) और यह संकेत भी दिया है कि अल्लाह मधुमक्खियों को अपने वह्य संदेश प्राप्त करने योग्य मानता है। (क़ुरआन, 16:68,69) क़ुरआन शहद की औषधि विशेषताएँ भी बताता है। क़ुरआन में अनेक ऐसे अध्याय हैं जिनका नाम पशुओं और कीड़ों के नाम पर रखा गया है जैसे अल-बकरा (गाय, अध्याय 2), नमल (चीटी, अध्याय 27), अन-कबूत (मकड़ी, अध्याय 29), नहल (मधुमक्खी, अध्याय 16)। इस्लाम ने पशुओं की जान से खेलने या केवल मनोरंजन के लिए उनको यातना देने को कठोरता से मना किया है। पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल0) की निम्नलिखित हदीसें पशुओं के साथ आपके व्यवहार का चित्रण करती हैं:

- आपके एक साथी ने एक बार एक घोसले से एक चिड़िया का बच्चा ले लिया था जिसके कारण उस बच्चे की माँ घबराई हुई उसे ढूँढ रही थी, अचानक चिड़िया ने साथी (सहाबी) पर हमला कर दिया। पैग़म्बर (सल्ल0) ने अपने साथी से कहा कि चिड़िया के बच्चे को वापस उसके घोसले मे डाल दें और वहाँ उपस्थित साथियों से कहा, "तुम्हारे ऊपर अल्लाह की दयालुता उस दयालुता से बढ़कर है जो दयालुता यह चिड़िया अपने बच्चे के लिए रखती है"।

पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल0) ने चेतावनी देते हुए फ़रमायाः ''जो कोई किसी गौरेया या बड़े जानवर को उसके जीवित रहने का अधिकार दिए बिना मारता है तो वह इसके लिए क़यामत के दिन उत्तरदायी होगा।''

इस प्रकार पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल0) ने शिक्षा दी कि सम्मान प्राप्त करने, आवश्यकता पड़ने पर भोजन पाने और अच्छा व्यवहार किए जाने का जानवरों के अधिकार पर समझौता नहीं किया जा सकता। यह मानवता के कर्त्तव्यों का एक अंग है और इसे उनके आध्यात्मिक उत्थान के लिए एक शर्त समझा जाना चाहिए।

- पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल0) ने जीवित रचनाओं को जलाने से मना किया। जब आप चीटियों की एक ऐसी पहाड़ी से गुज़रे जो जलायी गयी दिखायी दे रही थीं, आपने पूछा, ''इसे किसने जला दिया?'' जब उनको बताया गया कि अमुक-अमुक ने इसे जला दिया है तो पैग़म्बर (सल्ल0) ने कहाः *''मात्र अल्लाह ही आग द्वारा दण्ड देने का अधिकार रखता है''।* इस प्रकार आपने लोगों को इस दुर्बल जीव को बचाने का निर्देश दिया।

- पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल0) प्रत्यक्ष रूप से हानिकारक वस्तुओं को भी अल्लाह द्वारा रचित व्यवस्था का अंग मानते थे। एक बार जब पैग़म्बर (सल्ल0) मक्का के निकट मिना नामक स्थान पर अपने साथियों के साथ थे। एक गुफा से एक साँप निकला और आपके साथियों ने उसे मारने का प्रयास किया परन्तु वह बच निकला। इस पर पैग़म्बर (सल्ल0) ने फरमाया, ''अल्लाह ने तुम्हें उसकी हानि से बचा लिया और उसने उसको तुम्हारी हानि से बचा दिया। पैग़म्बर (सल्ल0) का यह कथन कि ''अल्लाह ने उसको तुम्हारी हानि से बचा दिया है'' इसमें एक महत्वपूर्ण संकेत यह है कि साँप भी प्राकृतिक संसार में एक भूमिका का निर्वाह करता है। पैग़म्बर (सल्ल0) सम्पूर्ण रचनाओं को सांसारिक व्यवस्था का हिस्सा मानते थे।

- पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल0) विशेष रूप से बिल्लियों से प्यार करते थे, परन्तु सामान्य रूप से वह सदैव अपने साथियों को पशुओं के सम्मान की आवश्यकता के प्रति सचेत करते रहते थे। आपने एक बार अपने साथी को यह कहानी सुनायीः ''एक व्यक्ति प्रचंड गर्मी में एक मार्ग पर जा रहा था, उसने एक कूँआ देखा और वहाँ जाकर कूँए के अन्दर गया और अपनी प्यास बुझायी। जब वह ऊपर आया तो उसने एक कुत्ता देखा जो प्यास से हाँफ रहा था और अपने आप से कहाः ''यह कुत्ता उतना ही प्यासा है जितना

प्यासा मैं था। वह कूँए में दूसरी बार गया और अपने जूते (चमड़े का मोजा) को पानी से भरा और उसे अपने दाँतों से पकड़े हुए ऊपर आया। उसने उस पानी को कुत्ते को पीने के लिए दिया और अल्लाह ने उसे इस कर्म के लिए पुरस्कृत किया और उसके पापों को क्षमा कर दिया''। इसके बाद पैग़म्बर (सल्ल0) से पूछा गया, ''ऐ अल्लाह के पैग़म्बर, क्या हम पशुओं के साथ दयालुता के लिए भी पुरस्कृत किये जाते हैं''? पैग़म्बर (सल्ल0) ने उत्तर दियाः ''किसी भी जीवित रचना के साथ भलाई करने का पुरस्कार प्राप्त होता है''।

- एक अन्य अवसर पर पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल0) ने फ़रमायाः ''एक औरत को एक बिल्ली के कारण दंडित किया गया जिसने उस बिल्ली को उस समय तक क़ैद रखा जब तक वह मर न गयी। इस बिल्ली के कारण वह नरक में गयी। वह उसे क़ैद में रखकर न खाना देती थी, न पानी देती थी और उसे अपना शिकार खाने की अनुमति भी नहीं देती थी''। इन हदीसों द्वारा पैग़म्बर (सल्ल0) ने पशुओं के प्रति सम्मान पर बल देने को इस्लामी शिक्षाओं का अत्यन्त महत्वपूर्ण अंग बताया। आपने इस पहलू पर बल देने के लिए प्रत्येक अवसर का उपयोग किया।
- पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल0) ने सचेत किया थाः ''जो व्यक्ति किसी गौरैया या एक बड़े पशु को उसे जीवित रहने के अधिकार का सम्मान किये बिना मारता है तो वह उसके लिए क़यामत के दिन अल्लाह तआला के समक्ष उत्तरदायी होगा। इस प्रकार पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल0) ने शिक्षा दी कि किसी पशु के जीवन के अधिकार का सम्मान किया जाना चाहिए, इसको जिस चारे की आवश्यकता है उसे मिलना चाहिए और उसके साथ भला व्यवहार किया जाना चाहिए। इन अधिकारों से कोई समझौता नहीं किया जा सकता। यह मानवता के कर्त्तव्यों में से एक था और यह समझना चाहिए कि आध्यात्मिक विकास के लिए यह एक शर्त है।

हरी-भरी धरती

हज़रत अनस (रज़ि0) रिवायत करते हैं कि पैग़म्बर (सल्ल0) ने फ़रमायाः

"यदि कोई व्यक्ति कोई पौधा लगाता है और जनता अथवा अल्लाह की अन्य रचनाएँ इसके फल खाती हैं तो यह उस व्यक्ति की ओर से एक दान होगा"।

इस हदीस में सड़कों के किनारे छायादार वृक्ष लगाने, सामाजिक वन विकसित करने और पार्कों और वन्य संरक्षण पर बल दिया गया है। एक बार पैग़म्बर (सल्ल0) ने फ़रमायाः

"यदि कोई व्यक्ति किसी जंगल में एक ऐसा वृक्ष काटता है जो मुसाफिरों और पशुओं को छाया प्रदान करता है तो अल्लाह तआला क़ियामत के दिन उसको इस पर सज़ा देगा"।

इससे स्पष्ट होता है कि पैग़म्बर (सल्ल0) धरती को हरी-भरी रखने में कितनी रुचि रखते थे। जिस दुनिया में हम लोग रहते हैं, उसकी सुरक्षा की विचारधारा को पैग़म्बर (सल्ल0) ने पूर्णतः एक भिन्न दिशा प्रदान की। वह यह कि इनके हमारे ऊपर अधिकार हैं और ये क़ियामत के दिन अल्लाह के सामने हमारे कर्मों का रहस्य खोल देंगे।

इस प्रकार एक ईमानवाले की सोच यह होनी चाहिए कि अपने जीवन के अन्त में भी उसका अपनी प्रकृति के साथ निकट सम्बन्ध क़ायम रहे। यहाँ तक कि उसका अन्तिम दान जीवन और जीवन-चक्र के नवीनीकरण से सम्बन्धित हो।

हरित क्षेत्र

शहरों के बाहर विशेष रूप से जंगलों और वन्य जीवन के संरक्षण के लिए हिमा क्षेत्र छोड़े जाते थे। पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल0) ने मदीना के आस-पास के क्षेत्र को हिमा क्षेत्र घोषित किया था और शहर के अन्दर आपने अनेक हरम क्षेत्र स्थापित किये थे।

ऐसे क्षेत्रों में से एक क्षेत्र मदीना से 20 मील दूर अक़ीक़ की घाटी में स्थापित करने का आदेश दिया गया था जिसका नाम 'हिमा अल-नकी' था। इसे घोड़ों के लिए चरागाह निर्धारित किया गया था। पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल0) ने बड़ी संख्या में पेड़ लगाने की व्यवस्था की। जल्द ही यह क्षेत्र इतना हरा-भरा हो गया कि इससे गुज़रने वाले घुड़सवार को देखपाना संभव नहीं था। आप (सल्ल0) ने इसकी सीमा निर्धारित करने के लिए एक व्यक्ति को पेड़ के नीचे से आवाज़ लगाने के लिए कहा। जिस क्षेत्र तक उसकी आवाज़ नहीं पहुँच सकती थी उसे हिमा की बाहरी सीमा निर्धारित किया गया। इस क्षेत्र में पेड़ काटने की अनुमति नहीं थी।

एक बार पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल0) अक़ीक़ की घाटी से लौटे तो आपने अपनी चहेती पत्नी हज़रत आयशा (रज़ि0) से उसके सौन्दर्य और सौम्यता का वर्णन किया। इस वर्णन से प्रभावित होकर हज़रत आयशा (रज़ि0) ने अपना घर अक़ीक़ की घाटी में स्थानान्तरित करने का परामर्श दिया। मदीना के अनेक धनवान लोगों ने उस स्थान के पास अपना ग्रीष्मकालीन आवास बना लिया था। जल्द ही यह स्थान मदीना के नागरिकों के लिए एक सैरगाह बन गया, और मदीना के परिवार वहाँ मनोरंजन के लिए जाने लगे।

मुस्लिम सभ्यता के आरम्भिक युग के दौरान हरम और हिमा के क्षेत्र इस्लामी क़ानून या शरीअत के अविभाज्य अंग थे और वहाँ पशुओं के अधिकारों की सुरक्षा के लिए शरीअत या इस्लामी क़ानून मौजूद थे। अल्लाह तआला ने क़ुरआन में मार्गदर्शन किया है कि: *"सभी रचनाएँ जो धरती पर रेंगती हैं और वह जो अपने पंखों से उडती हैं वह तुम्हारे जैसे गिरोह हैं।"* (क़ुरआन, 6:38)

सामान्य इस्लामी सभ्यता भी प्रकृति प्रेम और संरक्षण की कामना को प्रतिबिम्बित करती थी।

प्राकृतिक संसाधन

प्रकृति अल्लाह की रचना है और इसके संसाधन मानवता के लिए उपहार हैं। इस प्रकार अल्लाह हमें आदेश देता है कि हम इसे न तो नष्ट करें और न इसके किसी अंश का अपव्यय करें।

"ऐ आदम की सन्तान, प्रत्येक नमाज़ के समय अपना वस्त्र पहनो और खाओ और पीओ। और अपव्यय न करो। निस्सन्देह अल्लाह अपव्यय करने वालों को पसन्द नहीं करता"। (क़ुरआन, 7:31)

प्राकृतिक संसाधनों का निर्ममतापूर्ण दोहन, प्रकृति के रचयिता और मानवता के विरुद्ध एक निर्मम अपराध है। पैग़म्बर (सल्ल0) ने अपने साथियों को प्राकृतिक अथवा अन्य संसाधनों का उपभोग करने में अत्यन्त सजग रहने की शिक्षा दी है। उदाहरण के लिए आपने उन्हें पानी का उपयोग करते समय प्रत्येक स्थिति में मितव्ययी रहने की शिक्षा दी।

एक बार पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल0) गुज़र रहे थे कि आपने अपने एक महत्वपूर्ण साथी सअद को वज़ू करते हुए देखा। आप (सल्ल0) ने देखा कि वह बहुत अधिक पानी का प्रयोग कर रहे हैं तो आपने उनसे कहा, "ऐ सअद क्यों इतना अपव्यय कर रहे हो"?, सअद (रज़ि0) ने पूछा "क्या वज़ू करते समय भी अपव्यय होता है", पैग़म्बर (सल्ल0) ने उत्तर दिया, "हाँ, बहते हुए पानी का उपयोग करते हुए भी"।

सभी शिक्षाओं में और धार्मिक कर्मकाण्डों में पानी एक केन्द्रीय तत्व है, क्योंकि, यह शारीरिक और आध्यात्मिक स्वच्छता का प्रतिनिधित्व करता है।

इस सम्बन्ध में पैग़म्बर (सल्ल0) ने फ़रमायाः

पैग़म्बर (सल्ल0) ने सअद और अपने अन्य साथियों को सिखाया कि पानी या प्रकृति के किसी अन्य तत्व को अपने आध्यात्मिक महल के निर्माण का साधारण साधन न समझें। इसके विपरीत अपने रचयिता की खोज के आध्यात्मिक अभ्यास में प्रकृति का सम्मान और इसका संयमपूर्ण प्रयोग स्वयं भी साधन हैं।

पैग़म्बर (सल्ल0) द्वारा किसी प्राकृतिक संसाधन का दुरुप्रयोग न करने का आग्रह "बहते हुए पानी का उपयोग करते समय भी" संकेत करता है कि वह प्रकृति

के सम्मान को महत्वपूर्ण सिद्धान्त के स्तर पर रखते थे, चाहे स्थिति कुछ भी हो अथवा परिणाम कुछ भी हो।

आज, बहुत से देश पानी की कमी के संकट का सामना कर रहे हैं, अब समय आ गया है कि यह ध्यान में रखते हुए कि अपने व्यक्तिगत जीवन में हम पानी का सावधानीपूर्ण प्रयोग किस प्रकार करें, अल्लाह के आभारी बनें और इस प्रकार, हम सभी को पैग़म्बर की इन चेतावनियों पर ध्यान देने की आवश्यकता है और हम किसी भी चीज़ को नष्ट करने तथा पृथ्वी पर बिगाड़ फैलाने से बचें।

एक पूर्व कैथोलिक नन, कारेन आर्मस्ट्राँग जो पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल0) की जीवनी की प्रसिद्ध लेखिका बनीं, पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल0) को ''हमारे युग का पैग़म्बर'' कहा है। उन्होंने लिखा है कि धरती और इसपर बसने वाली सभी रचनाओं- कीड़ों, पशुओं, पक्षियों, वृक्षों, चट्टानों, पहाड़ों, नदियों और समुद्रों- के सम्बन्ध में पैग़म्बर की शिक्षाएँ सदैव के लिए प्रासंगिक हैं।

आज. जब मानवता वातावरणीय आपदा, जलवायु असन्तुलन, ओज़ोन परत का क्षय, ग्लोबल वार्मिंग आदि खतरों का सामना कर रही है; हम ऐसी स्थिति में पैग़म्बर के कथन और आदर्श पर आधारित व्यापक साहित्य में लिखे बहुमूल्य ज्ञान की अनदेखी सहन नहीं कर सकते।

व्यक्तिगत जीवन

व्यक्तित्व का विकास

पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल0) लोगों का केवल मार्गदर्शन ही नहीं करते थे बल्कि आपने प्रशिक्षकों के एक बड़े गिरोह को प्रशिक्षित करके तैयार किया जो उस व्यापक क्षेत्र में फैल गए जो उनकी मृत्यु के बाद अगली सदी में इस्लाम के प्रभाव में आया। पैग़म्बर एक महान आध्यात्मिक सुधारक थे। आध्यात्मिक सुधारक को अरबी भाषा में मुज़क्की कहा जाता है। आपने अपने साथियों को इस तरह प्रशिक्षत किया कि वह लोगों का ऐसा गिरोह उठा सकें जो इस्लाम का जीवित आदर्श बन सके और जो मानवता के उच्च आदर्शों का पालन करने वाला हो। इस्लाम के इन ध्वजावाहकों ने उस ज्योति को आगे बढ़ाया जिसे पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल0) ने सातवीं सदी में मक्का में रोशन किया था।

अक्सर लोग धार्मिक लोगों को ग़लती से अल्लाह का अवतार बना देते हैं और उनके आदेशों को दिव्य आदेश की तरह अपनाते हैं। इस्लाम के पैग़म्बर ने हमेशा जो अल्लाह की ओर से अवतरित हुआ और जो वह स्वयं परामर्श और दृष्टिकोण के रूप में लोगों के सामने रखते थे। दोनों में स्पष्ट अन्तर करते थे। दिव्य सन्देश को शब्दशः और शुद्ध रूप में पहुँचाया जाता था और लोगों को स्पष्ट बता दिया गया था कि यह अल्लाह की ओर से है और इसकी प्रकृत्ति अनिवार्य की है। जबकि दैनिक मामलों में पैग़म्बर अपनी बीवियों, अपने साथियों और अपने आस-पास के लोगों से परामर्श लेते थे। आपने लोगों के सामने यह स्पष्ट कर दिया था कि वह एक मनुष्य हैं और सामूहिक मामलात को समाज के सदस्यों के परामर्श द्वारा हल करना पसन्द करते हैं। यद्यपि लोकतन्त्र शासन की धारणा की हैसियत से सातवीं शताब्दी की मानवता के मानसिक क्षितिज से अभी भी दूर था, पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल0) ने लोकतन्त्र के प्राक्कथन की हैसियत से शूरा की व्यवस्था को परिचित कराया। उन्होंने इसे बहुत स्पष्ट किया कि यद्यपि उनका मार्गदर्शन अल्लाह करता है लेकिन वह अपने फैसलों में ग़लती करने की मानवीय प्रवृत्ति

से मुक्त नहीं है और इसलिए वह किसी मामले में उन सभी लोगों का दृष्टिकोण माँगते थे जो दृष्टिकोण वाले होते थे।

पैग़म्बर (सल्ल0) अपने साथियों को परामर्श देने, अपने दृष्टिकोण को व्यक्त करने के लिए प्रेरित करते थे और निर्णय लेने में उनकी समझ और सोच को पर्याप्त रूप से ध्यान में रखते थे। वह जब लोगों के बीच में होते तो अक्सर लोगों के सामने प्रश्न उठाते ताकि उनके अन्दर जाँच-पड़ताल और प्रश्न करने की चिंगारी उभारें और उनकी आलोचनात्मक प्रतिभाओं को उभारते ताकि निर्णय लेने वालों में बुद्धि और विवेक केन्द्रीय स्थान प्राप्त कर सके, जिनके हाथों में वह शासन की विरासत देने वाले थे। अक्सर प्रश्न ऐसी भाषा में पूछे जाते जो साथियों की सोच को दिशा देते। वह प्रश्न इस्लाम की भावना के विपरीत मालूम होते थे और सुनने वालों को उस मामले में अधिक गहराई में सोचने के लिए प्रेरित करते थे। उदाहरण के लिए एक बार आपने फ़रमायाः "बलवान व्यक्ति वह नहीं है जो अपने दुश्मन पर काबू पा लेता है।" इस प्रश्न ने उनके आस-पास बैठे हुए साथियों के अन्दर जिज्ञासा को प्रेरित किया जिससे उनके अन्दर पैग़म्बर से यह पूछने की प्रेरणा मिली कि बलवान व्यक्ति फिर कौन है? कुछ क्षणों के बाद पैग़म्बर (सल्ल0) ने फ़रमाया कि बलवान व्यक्ति वह है जो अपने आप को उस समय नियन्त्रण में रखे जब वह क्रोध में हो।

कभी-कभी पैग़म्बर अलंकृत भाषा में बोलते। उदाहरण के लिए एक बार आपने अपने साथियों से कहा, "दौलत वह नहीं है जो मूल्यवान चीज़ें कोई अपने पास रखता है।" इस वाक्य ने साथियों को थोड़ी देर के लिए सोचने पर मजबूर किया। उसके बाद जल्द ही पैग़म्बर (सल्ल0) ने घोषणा की, "सच्ची दौलत आत्मा की दौलत है।"

कभी-कभी पैग़म्बर (सल्ल0) के कथन सामान्य प्रचलित नैतिक मूल्यों के विपरीत मालूम होते। उदाहरण के लिए एक बार आपने अपने साथियों से कहा कि अपने भाई की मदद करो चाहे वह अपने मामलों में न्याय पर हो या वह अत्याचार कर रहा हो। आपके साथी थोड़ी देर के लिए हैरान रह गए। यहाँ तक कि उनमें से एक साथी ने अपना आश्चर्य व्यक्त किया और आपसे कहा कि यह बात समझ में आती है कि मुसलमानो को उसकी मदद करनी चाहिए जो न्याय पर हो लेकिन कोई ऐसे शक्स की मदद कैसे करेगा जो अन्याय कर रहा हो। इस पर पैग़म्बर (सल्ल0) ने फ़रमाया, "अत्याचारी को अत्याचार से रोक दो, यही तुम्हारे पास उसकी सहायता का तरीक़ा है।"

एक दूसरे अवसर पर आपने अपने साथियों को चेतावनी दी कि केवल नमाज़ें और दुआएँ गुनाहों को नहीं धो सकतीं। बल्कि आपने ज़ोर दिया कि क़यामत के दिन लोगों के मानवाधिकारों के हनन के अपराध को क्षमा नहीं किया जाएगा। आपने लोगों को यह बात समझाने के लिए कि लोग अपने जैसे मनुष्यों के विरुद्ध जो गुनाह करते हैं वह कितने गंभीर हैं, आपने एक घुमावदार रास्ता अपनाया। आपने लोगों से पूछाः "क्या तुम जानते हो कि मोहताज कौन है?" उनके उत्तर आशा के अनुसार थे। अर्थात "मोहताज वह है जिसके पास न दिरहम हो और न संसाधन हों।"

लेकिन देखिए कि पैग़म्बर (सल्ल0) ने मोहताज शब्द को नया अर्थ देने के लिए इस अवसर का कैसा उपयोग किया और अपने अनुयायियों को दूसरे इंसानों के अधिकारों का हनन करने से हतोत्साहित किया। आपने फ़रमायाः "वास्तविक मोहताज वह है जो क़यामत के दिन अपने झोले में ढेर सारी नेकियाँ लेकर आएगा जिसमें नमाज़ें, रोज़े, ज़कात और सद्के भरे होंगे। लेकिन इसके साथ-साथ वह दूसरों के दावे को भी देखेगा जो शिकायत करेंगे कि उसने किसी को बुरा-भला कहा था। उनके पीठ-पीछे उनकी बुराई की थी, किसी का पैसा मार लिया था और उसके सिर पर किसी का खून होगा। इसके बाद उस व्यक्ति की नेकियाँ लेकर पीड़ितों को दे दी जाएँगी और उनके गुनाह उसकी झोली में डाल दिए जायेंगे और फिर आदेश दिया जाएगा कि उसे घसीट कर जहन्नम में डाल दिया जाए।

इस तरह पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल0) ने उन सामाजिक मूल्यों पर ज़ोर दिया जिनका अनुकरण करने की आशा ईमान वालों से की जाती है और इस बिन्दु की ओर ध्यान दिलाया कि फर्ज इबादतें करने से सामाजिक मूल्यों के हनन के गुनाहों को कम नहीं किया जा सकता जो मूल्य मनुष्य-मनुष्य के बीच सम्बन्धों को जोड़ते हैं। आपने अपने साथियों को आलोचनात्मक भावना के लिए प्रेरित किया और उनके अंधे अनुकरण या बुद्धि को नष्ट करने वाली यान्त्रिक नकल से आगे बढ़ने की उनकी योग्यता को उभारा। इसने आपके अनुयायियों के अन्दर एक तीव्र भावना उत्पन्न की कि वह सामाजिक व्यवहार के मामलों में लाल रेखा को लांघने से बचते रहें और अपने जैसे मनुष्यों के अधिकरों को पूरा करते रहें।

नैतिक अस्तित्व

इस्लाम मनुष्य को बुनियादी तौर पर एक नैतिक अस्तित्व के रूप में देखता है जिसे विचार करने, विचारों को व्यक्त करने और नैतिक चुनाव की योग्यता प्रदान की गयी है। एक नैतिक अस्तित्व के रूप में उसकी यह ज़िम्मेदारी है कि वह ऐसा वातावरण पैदा करे और उसे क़ायम रखे जो सदाचार, बन्धुत्व, सहयोग और सद्भाव की भावना के अनुकूल हो और वह बुराई निर्दयता और द्वेष के विरुद्ध संघर्ष करे। इनके प्रति तटस्थता और संवेदनहीनता का व्यवहार न केवल समाज में अनैतिक मूल्यों को प्रोत्साहित करता है, बल्कि व्यक्ति के पसंदीदा मूल्यों के आधार को भी कमज़ोर कर देता है। पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल0) को यह कहते हुए रिवायत किया गया है कि:

"यदि तुममें से कोई किसी बुराई को होते हुए देखे तो उसे चाहिए कि वह उसे अपने हाथ से रोक दे, यदि वह ऐसा न कर सके तो उसे अपनी ज़बान से रोकने का प्रयास करना चाहिए, यदि वह यह भी न कर सके तो उसे अपने हृदय में उसकी निन्दा करनी चाहिए और यह ईमान का सबसे कमज़ोर दर्जा है"।

त्याग

इस्लाम उत्तरदायित्व और नैतिक ज़िम्मेदारी की भावना विकसित करने पर ज़ोर देता है क्योंकि ये मानवाधिकारों और उत्तरदायित्व की भावना को विकसित करने के व्यावहारिक साधन हैं और इन्हीं के द्वारा इन मूल्यों को मानव चेतना में विकसित किया जा सकता है। मानवाधिकारों का प्रचार-प्रसार करना और उपदेश देना आसान है परन्तु यह असंभव नहीं तो अत्यन्त कठिन अवश्य है कि कोई व्यक्ति किसी दूसरे व्यक्ति को अपने जैसा समझे और वह अपनी पसंद और चाहतों के प्रति जितना संवेदनशील है उतना ही संवेदनशील वह दूसरी की पंसद और चाहतों के प्रति हो। इस उपलब्धि के लिए बड़े त्याग, समर्पण और सहानुभूति की आवश्यकता होती है।

पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल0) को यह कहते हुए रिवायत किया गया है कि एक

मुसलमान उस समय तक मुसलमान नहीं हो सकता जब तक वह दूसरों के लिए वही चीज़ पसन्द न करे जो अपने लिए पसन्द करता है।

मुस्कुराना दान है।

पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल0) ने फ़रमायाः

> ''प्रतिदिन जब सूरज निकलता है तो आदम की प्रत्येक सन्तान के लिए दान अनिवार्य हो जाता है''। फिर आपसे लोगों ने पूछा, ''हम प्रतिदिन दान में क्या दिया करें''?

पैग़म्बर (सल्ल0) ने उत्तर दियाः ''नेकी के दरवाज़े अनेक हैं..... भलाई का आदेश देना, बुराई से रोकना, रास्ते से हानिकारक चीज़ों को हटाना, बहरे की बात सुनना, अन्धे को रास्ता दिखाना, किसी को उसकी आवश्यकता की वस्तु तक मार्गदर्शन करना, यदि कोई दुख में हो तो अपने पैरों की ताक़त से उसकी सहायता के लिए दौड़ना और कमज़ोर की अपनी बाहों की ताक़त से मदद करना- ये सभी कार्य दान हैं जिनका तुम्हें आदेश दिया गया है''।

पैग़म्बर (सल्ल0) ने यह भी फ़रमाया, परोपकार का एक शब्द भी दान है। और मुस्कुराना भी दान है, जो मुस्कुराहट तुम अपने भाई या बहन के लिए प्रस्तुत करते हो वह दान है।

सामाजिक न्याय

इस्लामी दृष्टिकोण के अनुसार अल्लाह ने सभी संसाधनों को मनुष्य के लिए पैदा किया है (देखिये क़ुरआन, 31:20; 57:7)। ये संसाधन मात्र कुछ व्यक्तियों, कुछ परिवारों या कुछ गिरोहों के लिए ही नहीं हैं बल्कि पूरी मानवता के लिए हैं। (देखिये क़ुरआन, 2:29)। अतः मनुष्य से कहा गया है कि वह अल्लाह द्वारा प्रदान किये हुए संसाधनों में से खाये और पीये (देखिये क़ुरआन, 7:32; 28:77)। क़ुरआन में जीविका को अल्लाह का उपकार बताया गया है। (देखिये क़ुरआन, 2:198, 5:4, 17:66; 28:2, 62:10)

पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल0) को यह कहते हुए रिवायत किया गया हैः ''अपने परिवार के लिए जीविका के हलाल साधन तलाश करो'' क्योंकि हलाल रोज़ी तलाश करना अल्लाह के रास्ते में जेहाद है।

दान और परोपकार

इस्लामी परम्परा सहानुभूति, परोपकार, त्याग और दान पर बहुत अधिक ज़ोर देती है। क़ुरआन मुसलमानों को आदेश देता है कि वह निर्धनों और जरूरतमंदों पर ख़र्च करें। (देखिये क़ुरआन, 2:195, 219, 254, 264, 267, 274; 3:92; 14:31, 57:10-11; 76:8-9)

पैग़म्बर (सल्ल0) को यह कहते हुए रिवायत किया गया हैः "पूरी मानवता अल्लाह का परिवार है और उनमें से अल्लाह की दृष्टि में सबसे प्यारा बन्दा वह है जो अल्लाह के परिवार के लिए सबसे अधिक दयालु और लाभदायक है"।

पैग़म्बर (सल्ल0) ने यह भी फ़रमाया किः "एक व्यक्ति जो विधवाओं और निर्धनों को कुछ सेवाएँ उपलब्ध कराता है, वह उस व्यक्ति के बराबर है जो अल्लाह के रास्ते में जेहाद कर रहा हो या उसके बराबर है, जो अपना पूरा दिन रोज़े में व्यतीत करता हो और पूरी रात नमाज़ में व्यतीत करता हो"।

मुलाकात और अभिवादन

क़ुरआन कहता हैः

"और जब तुम्हारे पास वे लोग आयें जो हमारी आयतों को मानते हैं, तो कहोः "सलाम हो तुमपर!" (क़ुरआन, 6:54) *और तुम्हें जब सलामती की कोई दुआ दी जाये, तो तुम सलामती की उससे अच्छी दुआ दो या उसी को लौटा दो। निश्चय ही, अल्लाह हर चीज़ का हिसाब रखता है।* (क़ुरआन, 4:86)

"जब घरों में जाया करो तो अपने लोगों को सलाम किया करो, अभिवादन अल्लाह की ओर से नियत किया हुआ।" (क़ुरआन, 24:61)

पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल0) ने घोषणा कीः

"छोटा बड़ों को सलाम करे, जो चल रहा हो वह बैठे को सलाम करे और जो लोग कम संख्या में हों वह बड़ी संख्या के लोगों को सलाम करें। दो लोगों के बीच में बिना उन दोनों की अनुमति के जाकर मत बैठ जाओ।"

सज्जनता और सद्आचरण

पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल0) ने घोषणा कीः

"ऐ लोगों अल्लाह ने तुम्हारे लिए इस्लाम को दीन या धर्म के रूप में चुन लिया है। सज्जनता और सद्आचरण के द्वारा इस पर अमल करना बेहतर बनाओ।"

विनम्रता और ईमान

पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल0) ने घोषणा कीः

"प्रत्येक धर्म का एक विशेष चरित्र होता है और इस्लाम का चरित्र विनम्रता है।"

"विनम्रता और ईमान आपस में एक-दूसरे से जुड़े हुए हैं और इनमें से कोई भी अगर छूट जाए तो दूसरा भी समाप्त हो जाता है।"

अल्लाह अच्छाई को पसन्द करता है

पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल0) ने घोषणा कीः

"सर्वशक्तिमान अल्लाह भला है और भलाई को पसन्द करता है। वह शुद्ध है और शुद्धता को पसन्द करता है।"

"अल्लाह तुम्हारे शरीर और चेहरे को नहीं देखता बल्कि वह तुम्हारे दिलों और कर्मों को देखता है।"

दया

पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल0) ने घोषणा कीः

"अल्लाह उन लोगों पर दया नहीं करता जो लोगों पर दया नहीं करते।"

"जो लोग अल्लाह की रचनाओं के प्रति दयालु होते है। अल्लाह उनपर अपना स्नेह और दयालुता उड़ेल देता है, तुम ज़मीन की रचनाओं पर दया करो ताकि अल्लाह तुमपर दया कर सके।"

वास्तविक प्रेम

"पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल0) ने एक बार अपने एक साथी को वास्तविक प्रेम का रहस्य बताया थाः लोग जिन चीज़ों से प्यार करते हैं, उससे दूर रहो तो लोग तुमसे मुहब्बत करने लगेंगे।"

अल्लाह तआला ने पैग़म्बर को सन्देश दिया है कि वह प्यार का मार्ग अपनाएँः

"मेरा बन्दा मुझसे अपनी चुनी हुई इबादतों के माध्यम से निकट होता जाता है। यहाँ तक कि मैं उससे प्यार करने लगता हूँ; और जब मैं उससे प्यार करता हूँ तो मैं उसका कान बन जाता हूँ जिससे वह सुनता है, वह आँख बन जाता हूँ जिससे वह देखता है, वह हाथ बन जाता हूँ जिससे वह पकड़ता है, और पैर बन जाता हूँ जिससे वह चलता है।"

अल्लाह से प्रेम अल्लाह से निकटता और स्वार्थ से ऊपर उठने का उपहार देता है। अल्लाह का प्रेम ऐसा प्रेम है जिसमें निर्भरता नहीं है, एक ऐसा प्रेम है जो स्वतन्त्र करता है और व्यक्तित्व को ऊँचा उठाता है।

सहयोग

"..... हक़ अदा करने और ईश-भय के काम में तुम एक-दूसरे का सहयोग करो। और हक़ मारने और ज्यादती के काम में एक-दूसरे का सहयोग न करो। ....." (क़ुरआन, 5:2)

"..... और सब मिलकर अल्लाह की रस्सी को मज़बूती से पकड़ लो और विभेद में न पड़ो ..... ।" (क़ुरआन, 3:103)

आभार

पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल0) ने फ़रमायाः

"जो व्यक्ति लोगों का आभार व्यक्त नहीं करता वह अल्लाह का आभार व्यक्त नहीं करता।"

वादों को पूरा करना

क़ुरआन कहता हैः

"ऐ लोगों जो ईमान लाये हो अपने समझौतों (वादों और सन्धियों) को पूरा करो।" (क़ुरआन, 5:1)

ईमानदारी

क़ुरआन कहता है:

"और जब नाप कर दो तो, नाप पूरी रखो। और ठीक तराज़ू से तौलो, यही उत्तम और परिणाम की दृष्टि से भी अधिक अच्छा है। ....." (क़ुरआन, 17:35)

"और जब बात कहो, तो न्याय की कहो, चाहे मामला अपने नातेदार ही का क्यों न हो।" ..... (क़ुरआन, 6:152)

सच बोलना

अल्लाह तआला क़ुरआन में फ़रमाता है:

"ऐ ईमान लानेवालो! अल्लाह का डर रखो और सच्चे लोगों के साथ हो जाओ।" (क़ुरआन, 9:119)

"और जब नाप कर दो तो, नाप पूरी रखो और ठीक तराज़ू से तौलो।" (क़ुरआन, 33:24)

पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल0) ने फ़रमाया:

"मुझे छः चीज़ों की गारंटी दो तो मैं तुम्हें जन्नत का वचन देता हूँ। जब तुम बोलो तो सच बोलो, वादों को पूरा करो, अमानतों को दो, अपने सतीत्व की रक्षा करो और अपनी निगाहें नीची रखो। और अपने हाथों को अत्याचार से रोके रखो।"

"निश्चित रूप से सत्यवादिता नेकी की ओर ले जाती है और नेकी जन्नत की ओर ले जाती है।"

अमानतदारी

क़ुरआन कहता है:

"निःसन्देह मैं तुम्हारे लिए एक अमानतदार रसूल हूँ। अतः अल्लाह का डर रखो और मेरा कहा मानो।" (क़ुरआन, 26:107-108)

"अल्लाह तुम्हें आदेश देता है कि अमानतों को उनके हक़दारों तक पहुँचा दिया करो। ....." (क़ुरआन, 4:58)

सामाजिक परिवर्तन

क़ुरआन कहता हैः

"अल्लाह उन लोगों की परिस्थितियों को नहीं बदलता, जब तक वे स्वयं अपने आप को न बदल डालें।" (क़ुरआन, 13:11)

शालीनता

पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल0) ने फ़रमायाः

"अल्लाह शालीन है और शालीनता को पसन्द करता है।"

बातचीत में सज्जनता

इस्लाम में बातचीत में सज्जनता एक धार्मिक नेकी है और अशिष्टता गुनाह है। क़ुरआन घोषणा करता हैः

"लोगों से भली बात करो।" (क़ुरआन, 2:83)

और पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल0) ने फ़रमायाः

जो अल्लाह के सच्चे बन्दे हैं और क़यामत के दिन पर ईमान रखते हैं। उन्हें या तो शालीनता से बोलना चाहिए या खामोश रहना चाहिए।

व्यापार

क़ुरआन व्यापार करने के लिए प्रेरित करता हैः

"अपने मालिक से धन माँगने में कोई गुनाह नहीं है। फिर जब नमाज़ पूरी हो जाए तो धरती में फैल जाओ और अल्लाह का उदार अनुग्रह (रोज़ी) तलाश करो" (क़ुरआन, 62:10)

अल्लाह के पैग़म्बर ने फ़रमाया,

"अल्लाह उस व्यक्ति पर अपनी दया करें जो खरीदता और बेचता है तो दयालुता और आसानी का व्यवहार करता है और जब वह कर्ज़ वापस माँगता है तो वह उसे दे देता है।"

दूसरों की कमियाँ छिपाना

"जो लोग इस संसार में दूसरों की कमियों को छिपाते हैं, अल्लाह तआला उनकी कमियों को क़ियामत के दिन छिपा देगा।"

किसी के घर में प्रवेश से पहले उससे अनुमति लो

"ऐ ईमान लानेवालो। अपने घरों के सिवा दूसरों के घरों में प्रवेश न करो, जब तक कि रज़ामन्दी हासिल न कर लो और उन घरवालों को सलाम न कर लो। यही तुम्हारे लिए उत्तम है, कदाचित तुम ध्यान रखो। फिर यदि उनमें किसी को न पाओ तो उनमें प्रवेश न करो जब तक कि तुम्हें अनुमति प्राप्त न हो।"

(क़ुरआन, 24:27-28)

"व्यक्ति को अपने मेहमान के साथ-साथ अपने घर के दरवाज़ें तक (विदा करने के लिए) जाना चाहिए।" (हदीस)

सफाई आधा ईमान है

पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल0) ने फ़रमाया कि "सफाई आधा ईमान है। इस्लाम धर्म सफाई पर आधारित है।"

पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल0) हमेशा अपने शरीर और कपड़ों को साफ रखते थे, वह नियमित रूप से नहाते थे और अपने साथियों को भी स्वच्छ रहने का निर्देश देते थे।

पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल0) हमेशा अपने साथियों को अपना सेहन और बाज़ार साफ रखने का आदेश देते थे।

बन्धुत्व

"तुममें से प्रत्येक अपने भाई का दर्पण है, यदि तुम अपने भाई में कोई ग़लत चीज़ देखो तो उसे उस ग़लती से छुटकारा पाने का आदेश दो।" "ईमान वाले एक दूसरे के लिए एक भवन की ईंटों की तरह हैं। जिसका एक भाग दूसरे भाग को सहारा देता है।" (हदीस)

' कमज़ोरों के मित्र बनो '

पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल0) ने अपने मुस्लिम अनुयायियों को दमन के विरुद्ध और दलित वर्गों के पक्ष में आवाज़ उठाने के लिए उभारा, क़ुरआन कहता हैः कमज़ोरों के मित्र बनो और क्रूर शासकों और उनके भ्रष्ट तरीकों का प्रतिरोध करो।

क़ुरआन आगे कहता हैः

"तुम्हें क्या हुआ है कि अल्लाह के मार्ग में और उन कमज़ोर पुरूषों, औरतों और बच्चों के लिए युद्ध न करो, जो प्रार्थनाएं करते हैं कि "हमारे रब! तू हमें इस बस्ती से निकाल, जिसके लोग अत्याचारी हैं। और हमारे लिए अपनी ओर से तू कोई समर्थक नियुक्त कर और हमारे लिए अपनी ओर से तू कोई सहायक नियुक्त कर।" (क़ुरआन, 4:75)

उच्च शिक्षा और ज्ञान

पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल0) ने घोषणा कीः

"गोद से कब्र तक ज्ञान प्राप्त करते रहो। अपने आप को जानने के लिए ज्ञान प्राप्त करो। अल्लाह तआला ने विवेक से अधिक अच्छी कोई चीज़ नहीं पैदा की है अथवा अल्लाह ने विवेक से अधिक सुन्दर और पूर्ण कोई चीज़ नहीं पैदा की है।"

"एक घण्टे का चिन्तन एक वर्ष की इबादत से बेहतर है। ज्ञान प्राप्त करने में अधिक समय लगाना अधिक समय तक इबादत करने से बेहतर है। रात में एक घण्टे शिक्षा देना पूरी रात नमाज़ पढ़ने से बेहतर है।"

चरित्र और व्यवहार

पीठ पीछे बुराई

क़ुरआन की आयतें और हदीसें आचरण और व्यवहार को जो महत्व प्राप्त है, उसको दर्शाती हैं। उनमें से कुछ निम्नलिखित हैं।

अल्लाह तआला क़ुरआन में फ़रमाता हैः

"ऐ ईमान लाने वालो! बहुत से गुमानों से बचो, क्योंकि कतिपय गुमान गुनाह होते हैं। और न टोह में पड़ो और न तुममें से कोई किसी की पीठ पीछे निन्दा करे--- क्या तुममें से कोई इसको पसन्द करेगा कि वह अपने मरे हुए भाई का माँस खाये? वह तो तुम्हें अप्रिय होगा ही।--- और अल्लाह का डर रखो निश्चय ही अल्लाह तौबा कबूल करने वाला अत्यन्त दयावान है"। (क़ुरआन, 49:12)

पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल0) फ़रमाते हैं;

'यदि कोई मुझसे यह प्रतिज्ञा करे कि वह अपनी ज़ुबान नियन्त्रण में रखेगा, अपने सतीत्व की रक्षा करेगा, दूसरों के सम्बन्ध में बुरी बात न कहेगा और किसी पर आरोप नहीं लगाएगा और पीठ पीछे निन्दा नहीं करेगा और व्यभिचार और ऐसे पापों से बचेगा तो मैं उसके लिए अवश्य जन्नत का वादा करुँगा"।

सन्देह

पैग़म्बर (सल्ल0) ने फ़रमायाः

"सन्देह करने के प्रति सावधान रहो क्योंकि सन्देह झूठी सूचना पर आधारित हो सकता है, दूसरे की टोह में न पड़ो, दूसरों की छिपी हुई कमियों का रहस्य न खोलो"। (हदीस)

झूठ बोलना

अल्लाह तआला क़ुरआन में फ़रमाता हैः

".....तो मूर्तियों की गन्दगी से बचो और बचो झूठी बात से"।

(क़ुरआन, 22:30)

और फ़रमाया हैः

".....और यदि वह झूठा हो तो उसपर अल्लाह की फटकार हो"।

(क़ुरआन, 24:7)

पैग़म्बर (सल्ल0) ने फ़रमाया;

सबसे बड़ा धोखा यह है कि तुम अपने भाई (बहन) से कोई बात कहो जिसे वह सच समझ ले हालाँकि तुम झूठ बोल रहे हो।

पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल0) ने यह भी फ़रमाया;

उस व्यक्ति के लिए तबाही है जो लोगों को हँसाने के लिए झूठ बोलता है! उसके लिए तबाही है! उसके लिए तबाही है!

गुमान करना पाप है

झूठे गुमान करना या दूसरे लोगों के प्रति बुरी बात अकारण कहना छोड़ देना चाहिए; 'ईमानवालों बहुत अधिक गुमान करने से बचो- कुछ गुमान गुनाह होते हैं- एक-दूसरे की टोह में न पड़ो या पीठ पीछे बुराई न करोः इसके अतिरिक्त किसी व्यक्ति को सुनी-सुनायी कहानियों में विश्वास नहीं करना चाहिए और अफवाहों और गपशप पर ध्यान नहीं देना चाहिए जो अधिकतर आधे सच या सफेद झूठ या पूरे झूठ पर आधारित होते हैं। ईमानवालों को परामर्श दिया गया है कि किसी व्यक्ति पर या किसी घटना पर टिप्पणी करने से पहले उसकी जाँच कर लें और दूसरों के बारे में अपना दृष्टिकोण प्रकट करने में पूरी तरह आत्म-संयम से काम लेंः

अल्लाह तआला क़ुरआन में फ़रमाता हैः

"ईमानवालों बहुत अधिक गुमान करने से बचो क्योंकि कुछ गुमान गुनाह होते हैं" (क़ुरआन, 49:12)

"ऐ लोगों जो ईमान लाये हो! यदि कोई अवज्ञाकारी तुम्हारे पास कोई खबर लेकर आये तो उसकी छान-बीन कर लिया करो। कहीं ऐसा न हो कि तुम किसी

ग़िरोह को अनजाने में तकलीफ और नुकसान पहुँचा बैठो, फिर अपने किये पर पछताओ"। (क़ुरआन, 49:6)

क़ुरआन फ़रमाता है कि

"अच्छी उत्तम बात की मिसाल एक अच्छे शुभ वृक्ष के सदृश है जिसकी जड़ गहरी जमी हुई हो और उसकी शाखाएँ आकाश में पहुँची हुई हों और फिर अपने पालनहार की अनुमति से वह हर समय अपना फल दे रहा हो....."।

(क़ुरआन, 14, 24-25)

और क़ुरआन बुरी बात की मिसाल आगे देता हैः

"और अशुभ एवं अशुद्ध बात की मिसाल एक अशुभ वृक्ष के सदृश है जिसे धरती के ऊपर ही से उखाड़ लिया जाए और उसे कुछ भी स्थिरता प्राप्त न हो"।

(क़ुरआन, 14, 26)

क़ुरआन में एक स्थान पर और कहा गया हैः

"ऐ लोगों जो ईमान लाये हो! न पुरुषों का कोई गिरोह दूसरे पुरुषों की हँसी उड़ाए, संभव है वे उनसे अच्छे हों और न स्त्रियाँ स्त्रियों की हँसी उड़ायें, संभव है वे उनसे अच्छी हों; और न अपनों पर ताने कसो और न आपस में एक दूसरे को बुरी उपाधियों से पुकारो। ईमान के बाद अवज्ञाकारी का नाम जुड़ना बहुत ही बुरा है"। और जो व्यक्ति बाज़ न आये, तो ऐसे ही व्यक्ति जालिम हैं"।

(क़ुरआन, 49, 11)

अपमानजनक पाप

अल्लाह तआला क़ुरआन में फ़रमाता हैः

"और जो व्यक्ति कोई ग़लती या गुनाह की कमाई करे, फिर उसे किसी निर्दोष पर थोप दे, तो उसने एक बड़े लांछन और खुले गुनाह का बोझ अपने ऊपर ले लिया।" (क़ुरआन, 4:112)

फ़िज़ूलखर्ची

क़ुरआन कहता हैः

"..... और फिज़ूलख़र्ची न करो। निश्चय ही फिज़ूलख़र्ची करनेवाले शैतान के भाई हैं और शैतान अपने रब का बड़ा ही कृतघ्न है।" (क़ुरआन, 17:26-27)

अहंकार

क़ुरआन कहता हैः

"धरती में अकड़ कर न चलो न तो तुम धरती को फाड़ सकते हो और न लम्बे होकर पहाड़ों को पहुँच सकते हो।" (क़ुरआन, 17:37)

"..... अल्लाह किसी इतरानेवाले, बड़ाई जताने वाले को पसन्द नहीं करता।" (क़ुरआन, 57:23)

कामनाएँ

पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल0) ने फ़रमायाः

"मैं तुम्हारे मामले में निर्धनता से नहीं डरता हूँ बल्कि इससे डरता हूँ कि तुम सांसारिक वस्तुओं की कामना उसी तरह करने लगोगे जिस तरह दूसरों ने किया और यह तुम्हें उसी तरह नष्ट कर देगी जिस तरह तुमसे पहले के लोगों को नष्ट किया।"

ईर्ष्या

पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल0) ने घोषणा कीः

"ईर्ष्या से दूर रहो क्योंकि जिस तरह से आग लकड़ी को जलाती है उसी तरह ईर्ष्या सत्कर्मों को जलाती है।"

"किसी मुसलमान की छवि को अन्यायपूर्ण ढंग से आहत करने से बड़ा कोई और अत्याचार नहीं है।"

व्यंग करना

पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल0) ने फ़रमायाः

"दूसरों की परेशानी पर ख़ुशी न मनाओ, क्योंकि अल्लाह उसकी परेशानी दूर कर सकता है और तुम्हें उसकी जगह पर रख सकता है।

जमाखोरी

क़ुरआन कहता है:

"जो लोग उस चीज़ में कृपणता से काम लेते हैं जो अल्लाह ने अपनी उदार कृपा से उन्हें प्रदान की है, वे यह न समझें कि यह उनके हित में अच्छा है, बल्कि यह उनके लिए बुरा है। जिस चीज़ में उन्होने कृपणता से काम लिया होगा, वही आगे क़ियामत के दिन उनके गले का तौक़ बन जाएगी।"

(क़ुरआन, 3:180)

"..... जो लोग सोना और चाँदी एकत्र करके रखते हैं और उन्हें अल्लाह के मार्ग में ख़र्च नहीं करते, उन्हें दुखद यातना की शुभ-सूचना दे दो।"

(क़ुरआन, 9:34)

अवैध सम्पत्ति

ऐसा धन या सम्पत्ति जिसे अवैध तरीक़े से हासिल किया गया हो और जो कोई इसका उपयोग करे और अपनी आवश्यकताओं के लिए उसे ख़र्च करे वह उसे बहुत अधिक हानि पहुँचाती है? जैसा कि पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल0) ने चेतावनी दी है, "उसकी नमाज़ें अल्लाह के पास कबूल नहीं होंगी, उसकी दुआएँ कबूल नहीं होगी। अल्लाह से उसकी शिकायतों को नहीं सुना जाएगा और यदि उसने अच्छे कर्म किए होंगे तो उनसे उसे कोई लाभ नहीं होगा। परलोक में अल्लाह की विशेष अनुकम्पा और उपकार का वह भागीदार नहीं होगा।"

पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल0) ने घोषणा की:

"यदि कोई व्यक्ति कोई वस्तु बेईमानी से कमाता है और फिर उसका एक अंश दान में दे देता है तो उसका दान स्वीकार नहीं किया जाएगा, और यदि वह उसमें से अपनी आवश्यकता के लिए ख़र्च करता है तो उसमें कोई सम्पन्नता नहीं होगी और यदि उसमें से अपने वारिसों के लिए छोड़ जाता है तो उसकी मौत के बाद वह जहन्नम के साधन का काम करेगा। जान लो कि अल्लाह बुराई से बुराई को नहीं मिटाएगा (आर्थत दान और जक़ात अवैध सम्पत्ति में से देने पर कभी मुक्ति नहीं मिल सकती)। एक अपवित्रता दूसरी अपवित्रता को दूर नहीं कर सकती, यह उसे शुद्ध नहीं कर सकती।"

आपने आगे फ़रमाया, "अल्लाह पवित्र है और वह केवल वही नज़्र क़बूल करता है जो शुद्ध हो।"

बेईमानी और धोखा

क़ुरआन कहता है:

"तबाही है घटा कर देनेवालों के लिए, जो नापकर लोगों से लेते हैं तो पूरा-पूरा लेते हैं, किन्तु जब उन्हें नापकर या तौलकर देते हैं तो घटाकर देते हैं।"

(क़ुरआन, 83:1-3)

पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल0) व्यक्तिगत रूप से औचक निरीक्षण करते थे, एक बार आपने एक व्यापारी को गीले अनाज के ऊपर सूखे अनाज रखे हुए पाया। पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल0) ने अपना हाथ अनाज के ढेर के अन्दर मिलावट की जाँच के लिए डाला और पाया कि उसने ऐसा खरीदारों को धोखा देने के लिए किया है। आप (सल्ल0) ने व्यापारी से कहा, 'तुमने ऐसा क्यों किया?' व्यापारी ने कहा कि ऐसा बारिश के कारण हुआ है। इसपर पैग़म्बर (सल्ल0) ने फरमाया, वह व्यक्ति हममें से नहीं जो दूसरों को धोखा देता है।

शरारत और भ्रष्टाचार

क़ुरआन कहता है:

"..... खाओ और पीयो अल्लाह का दिया और धरती में बिगाड़ फैलाते मत फिरो।" (क़ुरआन, 2:60)

लालच

सन्तोष सफलता और सम्पन्नता की कुंजी है और लालच पूर्णतः इसके विपरीत है।

हममें से अधिकतर लोगों का विश्वास है कि सम्पत्ति हमारे लिए सम्पन्नता लायेगी। यह हमें विलासिता के साधन तो अवश्य प्रदान कर सकती है परन्तु सुख नहीं दे सकती । सुख हमारी प्रकृति की आन्तरिक अनुभूति है। भौतिक सम्पन्नता को पागलों की तरह तलाश करके प्राप्त नहीं किया जा सकता। वास्तव में वह सन्तोष ही है जो हमें सुख के संसार में ले जाता है। जहाँ दिल स्वयं अपने आप के साथ शान्ति में रहता है। शरीर और आत्मा लालच के चंगुल से मुक्त हो जाते हैं। लालच और लोलुपता का कोई अन्त नहीं है। जितना इसको कोई सन्तुष्ट करता है उतनी ही यह गुणोत्तर समानुपात में बढ़ती है। पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल0) की निम्नलिखित हदीस मनुष्य की प्राकृतिक प्रवृत्ति पर पर्याप्त प्रकाश डालती है:

"यदि आदम की सन्तान को सोने से भरी एक घाटी भी दे दी जाये तो वह इस तरह की दो घाटियों की इच्छा करेगा, क्योंकि उसके मुँह को धूल के अतिरिक्त कोई चीज नहीं भरती। और अल्लाह उस व्यक्ति को क्षमा करता है जो उससे तौबा करता है"।

मनुष्य सदैव धन और भौतिक सम्पन्नता की खोज में रहता है। अधिक से अधिक कमाने के लिए संघर्ष करना उसकी प्रकृति में बसा हुआ है। वह सदैव धनवान बनने के अवसर ढूँढता रहता है। धनवान बनने, अपने जीवन स्तर को विकसित करने, अपनी जीवन शैली में और साधन जोड़ने, तीव्र गति से चलने वाली कारों का सपना देखने और प्राकृतिक वातावरण में भव्य महलों की अभिलाषा रखता है। संक्षेप में, किसी व्यक्ति की अभिलाषाओं की सूची अन्तहीन होती है। वह अपने सपनों को साकार करने और महत्वाकांक्षाओं को पाने में कोई कसर नहीं छोड़ता। हम भौतिक साधनों की खोज में इतने वशीभूत हो जाते हैं कि हम जीवन के खेल में नैतिक मूल्यों को अक्सर भूल जाते हैं।

इस संसार से अपने सम्पूर्ण विलासितापूर्ण साधनों का प्रेम हमें परलोक की तलाश से दूर कर सकता है। हमें सदैव याद रखना चाहिए कि हमारे अस्तित्व का मुख्य उद्देश्य अल्लाह की इबादत करना है।

हमारा पालनहार भौतिक विलासिताओं की अन्धी दौड़ से हमें सचेत करता है और वैभव की क्षणभंगुर चमक को सांसारिक लुभावनापन बताकर उसका उपहास करता है। क्योंकि यह हमें अल्लाह की इबादत करने के मुख्य उद्देश्य से दूर कर देता है। कुरआन की यह आयत इसी वास्तविकता को स्पष्ट कर रही हैः

"और तुम्हारी सम्पत्ति और तुम्हारी सन्तान वह चीज़ नहीं जो तुमको हमारा निकटवर्ती बना दे, हाँ जो ईमान लाया और उसने अच्छा कर्म किया, ऐसे लोगों के लिए उनके कर्म का दो गुना बदला है। और वह ऊँचे घरों (स्वर्ग में) में सन्तोषपूर्वक रहेंगे"। (कुरआन, 34:37)

भ्रष्टाचार

अब जबकि हम लालच के कारण तक पहुँच गए हैं इसलिए हमें कहने दीजिए कि दुनिया की लालच ही हमें आर्थिक केक में से दूसरों का हिस्सा झपटने के लिए प्रेरित करती है। अवैध साधनों द्वारा दुनिया के लालच को पूरा करने की कोई कोशिश समाज को न्याय और समता से वंचित कर देती है। सामान्य भाषा में इसे घूस कहा जाता है जो हमारे समाज में प्रचलित है।

पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल0) ने अपने अनुयायियों और साथियों को सम्पन्न बनने के लिए अवैध साधनों को अपनाने के विरुद्ध सचेत किया। एक अवसर पर कर संग्राहक (तहसीलदार) कर संग्रह करके वापस आये तो उन्होंने एकत्र सामान को पैग़म्बर (सल्ल0) के सामने पेश किया और कहा कि यह सरकारी माल है और यह मुझे उपहार के रूप में दिया गया है; जो सामान उन्होंने दिखाया था उसमें से कुछ को कर के रूप में एकत्र किया हुआ बताया गया जबकि एक दूसरा भाग अपने उपहार के रूप में बताया। पैग़म्बर (सल्ल0) ने इसमें भष्ट्राचार की बू महसूस की। आपने तुरन्त सभा में अपने साथियों को सम्बोधित किया और कहा इस संग्राहक को देखो जो कहता है, *'यह ज़कात का हिस्सा है और यह मेरा है जो उपहार के रूप में मिला है'। अब इसे अपने घर पर ठहरने दो और फिर देखो कि क्या कोई अब भी उपहार देने के लिए आता है।'*

शराब और जूआ

इन दोनों पर प्रतिबन्ध का आदेश बाद में अवतरित हुआ। अल्लाह तआला क़ुरआन में फ़रमाता है;

> *"ऐ ईमान लाने वालो! यह मदिरा और जूआ और ये (देवताओं और मूर्तियों आदि के) थान और पाँसे शैतान के गन्दे काम हैं तो इनसे बचो ताकि तुम सफल हो सको"।* (क़ुरआन, 5:90)

जूआ और शराब की आदत समाज के लिए व्यापक रूप से ख़तरनाक है। यह लोगों को उत्पादक गतिविधियों से दूर रखती है और उन्हें अवैध साधनों से धन कमाने के लिए प्रेरित करती है। अधिकतर मामलों में यह परिवारों को आर्थिक रूप से नष्ट कर देती है जिससे वह कर्ज़दार और बेसहारा हो जाते हैं। इससे बढ़कर यह समाज के नैतिक ताने-बाने को कमज़ोर कर देती है।

प्रसिद्ध ब्रिटिश इतिहासकार अर्नाल्ड जे. टायनबी ने एक बार टिप्पणी की थी कि इस्लाम का मानवता पर सर्वाधिक मूल्यवान और प्रभावी योगदान शराब और जूआ पर प्रतिबन्ध लगाना है।

रिबा या व्याज या सूदखोरी

इस्लामी अर्थव्यवस्था ऐसे सभी लेन-देन से रोकती है जिसमें व्याज सम्मिलित हो। इस्लाम में व्याज और महाजनी व्याज में अन्तर नहीं किया गया है। इस्लाम केवल शून्य व्याज की दर की अनुमति देता है अर्थात व्याज बिल्कुल नहीं होना चाहिए। जब भी व्याज या महाजनी व्याज का नाम लिया जाता है तो यह इस्लाम में प्रतिबन्धित है।

व्याज न तो व्यापार है और न लाभ है। यह शोषण और सम्पत्ति के केन्द्रीकरण का साधन है। कुरआन कहता है:

"उनका कहना है: "व्यापार भी तो ब्याज के सदृश है।", जबकि अल्लाह ने व्यापार को वैध और ब्याज को अवैध ठहराया है।" (कुरआन, 2:275)

"तुम जो कुछ ब्याज पर देते हो, ताकि वह लोगों के मालों में सम्मिलित होकर बढ़ जाये, तो वह अल्लाह के यहाँ नहीं बढ़ता।" (कुरआन, 30:39)

"ऐ ईमान लानेवालो! बढ़ोत्तरी के ध्येय से ब्याज न खाओ, जो कई गुना अधिक हो सकता है। और अल्लाह का डर रखो, ताकि तुम्हें सफलता प्राप्त हो। (कुरआन, 3:130)

ऐ ईमान लानेवालो! अल्लाह का डर रखो और जो कुछ ब्याज बाक़ी रह गया है उसे छोड़ दो, यदि तुम ईमान वाले हो। फिर यदि तुमने ऐसा न किया तो अल्लाह और उसके रसूल से युद्ध के लिए ख़बरदार हो जाओ। और यदि तौबा कर लो तो अपना मूलधन लेने का तुम्हें अधिकार है। न तुम अन्याय करो और न तुम्हारे साथ अन्याय किया जाए। (कुरआन, 2:278-279)

व्याज आधुनिक स्वतन्त्र बाजार अर्थव्यवस्था का अभिन्न अंग है। ज़कात जो सम्पत्ति को धनी की ओर से निर्धन की ओर फैलाने का माध्यम है उसके विपरीत व्याज सम्पत्ति को निर्धन से धनवान की ओर ले जाता है। आधुनिक अर्थव्यवस्थाएँ व्याज पर आधारित हैं। यह माना जाता है कि व्याज के बिना जीवन व्यतीत करना असंभव है। इस झूठी धारणा को इस्लामी बैंकों और निवेश वाली कम्पनियों की ओर से समस्त संसार में चुनौती मिल रही है।

गर्भपात और गरीबी का भय

क़ुरआन कहता हैः और जब उनमें से किसी को बेटी की शुभ-सूचना मिलती है तो उसके चेहरे पर कलौंस छा जाती है और वह घुटा-घुटा रहता है (क़ुरआन, 16:58)

इस्लाम से पहले सातवीं शताब्दी के अरब समाज में बालिकाओं की हत्या सामान्य रीति थी। वह अपनी बेटियों को तीन कारणों से मार डालते थे और क़ुरआन ने उन तीनों का उल्लेख किया है। पहला यह कि वह अपने बच्चों को अपने देवताओं को खुश करने के लिए बलि चढ़ाते थेः (क़ुरआन, 6:37 और क़ुरआन, 6:140)

दूसरे वह अपने बच्चों को ग़रीबी के डर से क़त्ल करते थे। क़ुरआन ने इसके विरुद्ध उन्हें चेतावनी दी और किसी भी व्यक्ति के लिए अपने बच्चों की हत्या को पूर्णतः अवैध घोषित कियाः

"और निर्धनता के भय से अपनी संतान की हत्या न करो, हम उन्हें भी रोज़ी देंगे और तुम्हें भी। वास्तव में उनकी हत्या बहुत ही बड़ा अपराध है।"

(क़ुरआन, 17:31)

यह आयत परिवार नियोजन की जड़ को ही काट देती है जो प्राचीनकाल से लेकर हमारे युग तक जारी है। यह आवश्यकताओं का डर था जो लोगों को बच्चों की हत्या या गर्भपात कराने के लिए प्रेरित करता था। हमारे युग में इनके साथ अन्य साधन भी जुड़ गए हैं अर्थात गर्भ-निरोधक उपाय और प्रसव से पहले भ्रूणलिंग परीक्षण (अल्ट्रासाउण्ड) कराना।

एक नवजात बेटी परिवार के लिए अपमान का कारण थी और वह उस अपमान से बचने के लिए जीवित दफन कर दी जाती थी। प्रत्येक दस में से एक व्यक्ति यह अपराध कर बैठता था। इस कृत्य में पुरुष ही नहीं अपितु स्त्रियाँ भी भागीदार होती थीं। माएँ अपनी बेटी को दफ़न करने के लिए पिता के हवाले कर देती थीं। इस प्रकार की रीतियाँ वर्तमान युग के संसार में भी कन्या भ्रूण हत्या के रूप में प्रचलित हैं। यूनीसेफ की वर्ल्ड चिल्ड्रेन रिपोर्ट के अनुसार भारत में लड़कों की संख्या लड़कियों से अधिक है। भारत में 1000 लड़कों पर मात्र 880 लड़कियाँ हैं। विश्व लिंग अनुपात से भी स्पष्ट होता

है कि संसार में एक हज़ार लड़कों पर 995 लड़किया हैं। लड़कियों की जन्म दर में कमी, कन्या भ्रूण हत्या के कारण आ रही है।

प्रति वर्ष लगभग 70 मिलियन बेटियाँ जन्म से पहले ही मौत के घाट उतार दी जाती हैं, इन आँकड़ों से मानवता का सिर शर्म से झुक जाना चाहिए और प्रत्येक ऐसे व्यक्ति को झिंझोड़ देना चाहिए जिसके सीने में दिल हो। लेकिन आज भी हमें यह विश्वास करने पर विवश किया जाता है कि हम सभ्य दुनिया में रहते हैं और मानवाधिकारों का सम्मान करते हैं।

सांस्कृतिक रूप से संतान के रूप में बेटों को पसंद करना और जन्म पूर्व लिंग परीक्षण की सुविधा, इन दोनों ने मिलकर भ्रूण का लिंग पहिचानने और कन्या भ्रूण होने पर उसका गर्भपात कराने का रास्ता दिखाया है, ताकि लोग मात्र बेटों का ही जन्म होने दें।

कुरआन क़ियामत के दिन के उत्तरदायित्व के संदर्भ में इसका उल्लेख करता है और कहता है कि कन्याओं की हत्या करने वालों से पूछा जायेगा कि उन्होंने अपनी बेटियों की हत्या क्यों कीः

"क़ियामत के दिन जब जीवित दफन हुई लड़की से पूछा जायेगा कि उसे किस पाप में मारा गया"। (कुरआन, 81:8-9)

पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल0) ने स्पष्ट रूप से बताया कि बेटी का जन्म किसी परीवार के लिए अपमान की बात नहीं है बल्कि यह गर्व की बात है। जो व्यक्ति अपनी दो लड़कियों का पालन-पोषण अच्छी तरह करता है वह उन लोगों में से होगा जो क़ियामत के दिन आप (सल्ल0) के निकट खड़े होने का सौभाग्य प्राप्त करेंगे।

नस्लवाद

इस्लाम ने नस्ल या रंग के आधार पर भेदभाव का उन्मूलन कर दिया। इस्लाम से पहले सातवीं शताब्दी के अरब समाज में नस्लवाद मक्का में कबीलावाद के पर्दे में जारी था। मक्का में क़ुरैश के लोग विशेष रूप से अपने आप को और अरब के लोग साधारण रूप से अपने आप को दूसरों की तुलना में श्रेष्ठ समझते थे। पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल0) दिव्य सन्देश के साथ आए और यह घोषणा कीः

"कोई अरब किसी ग़ैर अरब से श्रेष्ठ नहीं है और कोई गोरा व्यक्ति किसी काले व्यक्ति से श्रेष्ठ नहीं है।"

"अगर एक काले हब्शी मुसलमान को मुसलमानों के ऊपर शासक बना दिया जाए तो उसका आज्ञापालन किया जाना चाहिए।"

"श्रेष्ठता केवल नेकी और अल्लाह से डर में निहित है।" (क़ुरआन, 49:13)

हम सब जानते हैं कि आज भी काले हब्शियों और पिछड़े वर्गों के साथ कथित रूप से सुसंस्कृत गोरी नस्लें और उच्च जाति के लोग कैसा व्यवहार करते हैं। लगभग चौदह सदी पहले इस्लाम के पैग़म्बर (सल्ल0) के ज़माने में काले दास हज़रत बिलाल (रज़ि0) की दशा पर विचार कीजिए। इस्लाम के प्रारम्भिक दिनों में नमाज़ के लिए अज़ान देने की भूमिका को एक सम्मान समझा जाता था और यह भूमिका इन्हीं काले दास को प्रदान की गयी थी। मक्का पर विजय के बाद पैग़म्बर (सल्ल0) ने उन्हें अज़ान देने का आदेश दिया। काले दास हज़रत बिलाल (रज़ि0) ने काबा की छत पर चढ़ कर अज़ान दी जो मुस्लिम संसार का सर्वाधिक ऐतिहासिक और पवित्र स्थान है।

आतंकवाद

पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल0) ने कहाः

"अल्लाह शिष्टाचार के कारण वह कुछ देता है जो वह हिंसा अथवा अन्य चीज़ के लिए नहीं देता"।

पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल0) ने यह भी कहाः

"क़यामत के निकट असंख्य हत्याएँ सामान्य हो जायेंगी जब हत्यारा अपने शिकार को नहीं जानेगा और शिकार यह नहीं जानेगा कि उसकी हत्या क्यों की गयी और उसकी हत्या किसने की"।

1400 वर्ष पहले पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल0) ने उस दुखद परिस्थिति की भविष्यवाणी की थी जिसका आज हम सामना कर रहे हैं और आतंकवादी हमलों में लाखों लोग मारे जा रहे हैं। दुश्मन देश सैनिक छापे मार रहे हैं और विभिन्न देशों के विरुद्ध प्रतिबन्ध और बहिष्कार किये जा रहे हैं और विभिन्न देशों में पुलिस और सैनिक कारवाई द्वारा अपने नागरिकों की हत्याएँ की जा रही हैं।

निर्दोष लोग मारे जा रहे हैं उन्हें पता नहीं है कि उन्हें किसने मारा और क्यों मारा? और हत्यारे नहीं जानते कि वह किसको मार रहे हैं और इसी प्रकार ऐसे लोगों को मारा जा रहा है जिनकी हत्यारों से कोई शत्रुता नहीं है।

इस्लामी जीवन के कुछ विशेष पहलू

भोजन और पेय पदार्थ

भोजन और पेय पदार्थ हमारे स्वास्थ्य, विकास और मन को प्रभावित करते है। इस्लाम ने हमारे भोजन और पेय पदार्थों के सम्बन्ध में नियम बताए हैं। इस्लाम एक स्वस्थ और नैतिक समाज स्थापित करना चाहता है। वह सभी अच्छी और शुद्ध चीज़ों को खाने और पीने की अनुमति देता है।

कुरआन कहता है:

"ऐ लोगो! धरती में जो हलाल और अच्छी-सुथरी चीज़ें हैं उन्हें खाओ और शैतान के पदचिन्हों पर न चलो। निःसन्देह वह तुम्हारा खुला शत्रु है।"

(कुरआन, 2:168)

मुसलमानों को *बिस्मिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम* (अल्लाह के नाम से जो अत्यधिक दयावान और बड़ा कृपाशील है) कहकर खाना शुरु करना चाहिए और यह दुआ पढ़ते हुए खाना समाप्त करना चाहिए: "सारी प्रशंसा अल्लाह के लिए है जिसने हमें खिलाया, पिलाया और मुसलमान बनाया।"

पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल0) ने हमसे दाहिने हाथ से खाने और खाने से पहले और बाद में हाथ धोने का आदेश दिया है। यह अच्छा है कि बहुत अधिक न खाया जाए जिससे पेट पूरा भर जाए। पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल0) ने हमसे यह भी कहा कि कोई भी पेय एक बार में न पीयें, इसके बजाए रुक-रुक कर पीये और तीन बार में पीना अच्छा है।

इस्लाम ने केवल उन्हीं चीज़ों से रोका है जो अशुद्ध और हानिकारक हैं। इस्लामी क़ानून (शरीअत) में वैध चीज़ों को हलाल और अवैध चीज़ों को हराम कहा जाता है। इस्लाम निम्नलिखित जानवरों का माँस खाने से मना करता है।

क. मुर्दार जानवरों (अर्थात जो प्राकृतिक रूप से मरे हों)

ख. जिन्हें अल्लाह का नाम लिए बिना ज़बहः किया गया हो।

ग. जिन जानवरों का गला घोट कर मारा गया हो।

घ. सुअर

ड. माँसाहारी जानवर

च. जिन जानवरों को जंगली दंरिदों ने खाया हो।

इस्लाम जानवरों का खून खाने से भी मना करता है (2:173; 5:3; 6:145; 16:115)। इस्लाम जानवरों के जीवन का सम्मान करने और उनके कल्याण पर भी ध्यान देने की शिक्षा देता है। यह अल्लाह के बहुत से उपकारों में से एक उपकार है कि उसने शाकाहारी जानवरों को मानवता के उसकी अनुमति से खाने के लिए पैदा किया। शर्त यह है कि हम उनको उस तरह ज़बहः करें जिस तरह अल्लाह ने आदेश दिया है। ज़बहः करते समय अल्लाह का नाम लिया जाना चाहिए। जिन जानवरों को अवैध ढंग से ज़बहः किया गया हो उनका माँस या उस माँस से बनी हुई वस्तुएँ खाना अवैध है।

मादक पेय हराम हैं

सभी प्रकार के नशीले (मादक) पेय जैसे वीयर, शराब और स्प्रिट को निषेध किया गया है। मादक पेय एक स्वस्थ समाज के लिए उपयुक्त नहीं हैं।

क़ुरआन कहता हैः

"ऐ ईमान लानेवालो! ये शराब और जूआ और देवस्थान और पाँसे तो गंदे शैतानी काम हैं। अतः तुम इनसे अलग रहो, ताकि तुम सफल हो। शैतान तो बस यही चाहता है कि शराब और जूए के द्वारा तुम्हारे बीच शत्रुता और द्वेष पैदा कर दे और तुम्हें अल्लाह की याद से और नमाज़ से रोक दे, तो क्या तुम बाज़ न आओगे?" (क़ुरआन, 5:90-91)

शराब पीने से समाज में गंभीर सामाजिक समस्याएँ पैदा होती हैं। यह अनेक बुराईयों और अपराधों का कारण बनता है। इस्लाम समाज को स्वस्थ्य और शान्त रखने के लिए सभी बुराईयों को जड़ से मिटाना चाहता है।

इस्लामी जीवन व्यवस्था के अन्दर बहुत लाभकारी नियम हैं। हमें इन नियमों का जितना अच्छी तरह हो सके, पालन करना चाहिए। हमें इस्लामी क़ानून और नियमों से बचने के लिए बहाना तलाश नहीं करना चाहिए बल्कि अल्लाह के आदेशों का पालन करने के लिए हमें गंभीर प्रयास करना चाहिए।

परिधान (वस्त्र)

सर्वशक्तिमान अल्लाह ने मनुष्य को सर्वश्रेष्ठ ढाँचे पर पैदा किया है और वह अपने बन्दो से चाहता है कि वह अच्छे और सज्जन परिधान पहनें। हमें यह मन में रखना चाहिए कि हम सबसे अच्छे प्राणी हैं और हमारा वस्त्र इस सम्मान का दर्पण होना चाहिए। उपयुक्त पहनावा निर्लज्जता और अनैतिक व्यवहार से बचाने में मदद करता है और हमारे व्यक्तित्व को सौन्दर्य प्रदान करता है।

क़ुरआन कहता हैः

> *''ऐ आदम की संतान! हमने तुम्हारे लिए वस्त्र उतारा है कि तुम्हारी शर्मगाहों को छुपाए और रक्षा और शोभा का साधन हो। और धर्मपरायणता का वस्त्र-वह तो सबसे उत्तम है, यह अल्लाह की निशानियों में से है, ताकि वे ध्यान दें।'*
>
> (क़ुरआन, 7:26)

इस्लाम सादगी और विनम्रता को प्रोत्साहित करता है। अहंकार का प्रदर्शन करने वाले वस्त्र को पसन्द नहीं किया गया है। वस्त्र की शैली स्थानीय रीतियों और मौसम की हालतों पर आधारित होती है लेकिन उपरोक्त निर्देश उनपर भी लागू होते हैं।

हज़रत अब्दुल्लाह बिन उमर (रज़ि0)फ़रमाते हैंः ''मैंने अल्लाह के पैग़म्बर से पूछाः ''ऐ अल्लाह के पैग़म्बर, क्या मैं बारीक और अच्छे कपड़े पहनूँ तो घमण्ड और अहंकार का अपराधी बनूँगा?'' पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल0) ने उत्तर दिया, ''अच्छे कपड़े पहनना मनोरम लगता है और वस्त्र की मनोरमता अल्लाह को पसन्द है।''

पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल0) ने आगे कहा, ''नमाज़ पढ़ते समय सबसे अच्छे वस्त्र पहनो, (दूसरे शब्दों में पूरे वस्त्र पहनो) मनुष्य पर अल्लाह का अधिक अधिकार है कि वह उसके सामने अच्छे वस्त्र पहनकर जाए।''

दूसरे शब्दों में आकर्षक वस्त्र पहनने का अर्थ अहंकार नहीं है। अहंकार यह है कि दूसरों के अधिकारों की अनदेखी की जाए और दूसरे लोगों को नीच समझा जाए।

त्यौहार

इस्लाम में त्यौहार आभार व्यक्त करने, खुशी और आनन्द का अवसर होते हैं। प्रतिवर्ष इस्लाम में दो त्यौहार ईदुल फित्र और ईदुल अज़हा आते हैं। ये त्यौहार श्रद्धापूर्वक अल्लाह को खुश करने के लिए मनाए जाते हैं, केवल अपनी खुशी के लिए नहीं।

ईदुल फित्र

ईदुल फित्र रमज़ान के महीने के बाद पहली शव्वाल (इस्लामी कलैण्डर का दसवाँ महीना) को मनाया जाता है। इस दिन एक महीने के रोजे के बाद मुसलमान सामूहिक रूप से खुले मैदान में या एक मस्जिद में नमाज़ पढ़कर खुशी और आनन्द प्रकट करते हैं। वह एक महीने का रोज़ा पूरा करने की क्षमता देने पर अल्लाह का आभार प्रकट करते हैं। इस दिन विशेष पकवान तैयार किए जाते हैं और लोग अपने दोस्तों और रिश्तेदारों से मिलने जाते हैं और बच्चों को उपहार देते हैं। साधारण रूप से मुसलमान इस दिन अपने सबसे अच्छे कपड़े पहनते हैं।

ईदुल अज़हा

ईदुल अज़हा का त्यौहार इस्लामी कलैण्डर के 12वें महीनें में ज़िलहिज्जा की दस तारीख को पड़ता है। ईदुल अज़हा हज़रत इब्राहीम (अलै0) द्वारा अल्लाह के आदेश का पालन करते हुए अपने बेटे हज़रत इस्माईल की कुर्बानी के लिए पूरी तरह तैयार होने की वर्षगाठ है। अल्लाह तआला ने हज़रत इब्राहीम की श्रद्धा और आज्ञापालन को स्वीकार कर लिया और उनसे अपने बेटे के बदले में एक दुम्बा ज़बहः करने के लिए कहा। यह महान महत्वपूर्ण अवसर हर साल हज के दिनों में आता है और इसको ईदुल फित्र की तरह ईदगाह में ईद की नमाज़ पढ़कर मनाया जाता है। नमाज़ के बाद जिन मुसलमानों के अन्दर बकरा, भेड़ या ऊँट ज़बहः करने की आर्थिक क्षमता हो वह अल्लाह को खुश करने के लिए उसे ज़बहः करते हैं। कुर्बानी के इस जानवर का गोश्त स्वयं भी खाया जाता है और अपने रिश्तेदारों, पड़ोसियों और ग़रीबों में बाँटा भी जाता है। यह कुर्बानी मुसलमान की इस भावना का प्रकटीकरण होती है कि यदि आवश्यकता हो तो वह अपनी सबसे प्यारी सम्पत्ति को अल्लाह के मार्ग में कुर्बान कर सकता है। यही इस त्यौहार की शिक्षा है। (देखिए क़ुरआन, 22:37)

जुमे की नमाज़

जुमे की नमाज़ सामूहिक रूप से पढ़ी जाती है। इसमें सभी बालिग मुसलमान मर्द सम्मिलित होते हैं। यह महिलाओं के लिए अनिवार्य नहीं है। लेकिन यदि घर की ज़िम्मेदारियों के प्रभावित होने का डर न हो तो वह भी इस नमाज़ में सम्मिलित हो सकती हैं।

इस नमाज़ के लिए लोग दोपहर के तुरन्त बाद एकत्र होते हैं। मस्जिद या नमाज़ के हॉल में पहुँचने पर लोग चार या अधिक रकअतें सुन्नत नमाज़ पढ़ते हैं और उसके बाद इमाम खुत्बा (उपदेश) देते हैं। खुत्बा के बाद इमाम दो रकअत फर्ज नमाज़ें पढ़ाते हैं। फर्ज नमाज़ों के बाद छः या अधिक रकअतें सुन्नत या नफ्ल नमाज़ों की पढ़ी जाती हैं। यह नमाज़ें लोग अलग-अलग पढ़ते हैं।

मुसलमान एक समुदाय हैं। जुमे की नमाज़ एक सामुदायिक नमाज़ है। हर हफ्ते जुमे के दिन एक क्षेत्र में रहने वाले मुसलमान यह नमाज़ अदा करने के लिए एकत्र होते हैं। इस नमाज़ को मुसलमानों की साप्ताहिक ईद या त्यौहार कहा गया है।

मस्जिदें पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल0) के ज़माने में इस्लामी गतिविधियों का केन्द्र हुआ करती थीं, लेकिन आजकल ऐसा नहीं है।

जुमे की नमाज़ किसी एक क्षेत्र में रहने वाले मुसलमानों के साप्ताहिक सम्मेलन का अवसर है। यह उनको मिलने, सामुदायिक समस्याओं पर विचार-विमर्श करने का अवसर उपलब्ध कराता है। यह एकता, सहयोग और समझ विकसित करता है।

एक इस्लामी देश में, देश का मुखिया अथवा उसका प्रतिनिधि अथवा स्थानीय अमीर से आशा की जाती है कि वह प्रतिदिन की पाँच नमाज़ें राजधानी की केन्द्रीय मस्जिद में या स्थानीय केन्द्रीय मस्जिद में जुमे की नमाज़ पढ़ाएगा। मदीना के इस्लामी राज्य के पहले मुखिया पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल0) मस्जिद-ए नबवी में सभी नमाज़ें पढ़ाया करते थे।

मुस्लिम संसार

जनसंख्या

मुसलमान जहाँ कहीं भी रहते हैं, वह आपस में मिलकर एक उम्मत या राष्ट्र बनाते हैं। भौगोलिक क्षेत्र, रंग, नस्ल या भाषा की बजाए यह ईमान (विश्वास,आस्था) है जो इस्लाम के सभी मानने वालों को एक बंधन में बाँधता है। इस्लामी राज्य की नागरिकता भौगोलिक सीमाओं द्वारा निर्धारित हो सकती है।

जनसंख्या की अधिकता के आधार पर पूरे संसार में 53 मुस्लिम देश हैं। दुनिया की कुल मुस्लिम आबादी लगभग 1.7 मिलियन है जो एक महत्वपूर्ण मानव संसाधन है।

पिछली सदी के चौथे और पाँचवें दशक के दौरान अनेक मुस्लिम देशों ने स्वतन्त्रता प्राप्त कर ली। आज का मुस्लिम जगत संसार के मध्य क्षेत्र में फैला हुआ है जो प्रशान्त महासागर के सेनेगल और मोरक्को से लेकर पूर्व में इण्डोनेशिया के द्वीपों तक, और उत्तर से दक्षिण भूमध्य सागर के तुर्की के तट से लेकर सोमालिया तक फैला हुआ है। मुस्लिम जगत 53 सम्प्रभुता सम्पन्न देशों पर आधारित है जो विकास के विभिन्न चरणों से गुज़र रहे हैं और इस जगत में 60 से अधिक भाषाएँ बोली जाती हैं और इनकी नस्लीय पृष्ठभूमि में पर्याप्त बहुलता है जिनमें अरब और भारतीय, तुर्क और पठान, चीनी और मलाई, उज्बेक और हौसा सम्मिलित हैं।

शीत युद्ध की समाप्ति ने मध्य एशिया में छः नये मुस्लिम राज्यों; उज्बेकिस्तान, कजाकिस्तान, किरगिज़िस्तान, तुर्कमानिस्तान, ताजकिस्तान और आजर बैजान को स्वतन्त्रता प्रदान की। यूरोप में अल्बानिया ने अपने स्टालिनवादी अतीत को त्याग दिया और बोस्निया हर्जिगोविना यूगोस्लाविया से अलग हो गया और इसपर सर्ब सेनाओं ने आक्रमण कर दिया।

संसार के मुस्लिम अल्पसंख्यक

अन्तर्राष्ट्रीय मुस्लिम समुदाय या उम्मत मुस्लिम दुनिया से भी अधिक व्यापक है। यह राष्ट्रीय सीमाओं से बढ़कर एक अस्तित्व है जिसका समान धार्मिक सभ्यता और इतिहास है और परस्पर एकता की भावना है। उम्मत की एक तिहाई आबादी ग़ैर मुस्लिम देशों

में अल्पसंख्यक के रूप में रहती है।

भारतीय मुसलमान जिनकी जनसंख्या 120 मिलियन है वह संसार के सबसे बड़े मुस्लिम अल्पसंख्यक हैं। लगभग 60 मिलियन मुसलमान चीन में रहते हैं और फिलीपीन्स, वर्मा, थाईलैण्ड और श्रीलंका में मुस्लिम अल्पसंख्यकों की बड़ी जनसंख्या रहती है।

प्रवास

50 के दशक में अनेक मुस्लिम देशों के स्वतन्त्र होने के बाद मुसलमान पश्चिम की ओर प्रवास करते रहे हैं। यूरोप में यह प्रवास एक पूर्व स्थापित मार्ग से सम्पन्न हुआ। पूरे मुस्लिम जगत के परिवारों ने अपने उपनिवेशवादी स्वामियों के देशों में अपना नया घर बनाने का प्रयास किया। इस प्रकार भारत, पाकिस्तान और बाँग्लादेश के मुसलमान ब्रिटेन और अमेरिका में गए। अल्जीरियाई, मोरो और टयूनिशियाई मुसलमान फ्राँस गए। इण्डोनेशिया और सूरीनाम (सूरीनाम दक्षिणी अमेरिका का उत्तरी देश है) के लोग हॉलैण्ड गए। युद्धों के दौरान तुर्की और जर्मनी के सम्बन्धों के कारण जर्मनी में पर्याप्त तुर्की समुदाय रहने लगा। इस समय लगभग 20 मिलियन मुसलमान यूरोपीय देशों में रह रहे हैं।

संसाधन

सभी मुस्लिम देश मिलकर दुनिया के दो तिहाई तेल का उत्पादन करते हैं। लगभग 70 प्रतिशत रबर, लगभग 75 प्रतिशत जूट, 67 प्रतिशत मसाले, दो तिहाई नारियल का तेल, 50 प्रतिशत फास्फेट और चालीस प्रतिशत टीन का उत्पादन करते हैं। ये देश दुनिया के कपास, चाय, कॉफी, ऊन, यूरेनियम, मैग्नीज़, कोबाल्ट और अन्य अनेक सामान और खनिज की एक बड़ी मात्रा पैदा करते हैं। मुस्लिम देशों में प्राकृतिक गैसों का भी एक बड़ा भण्डार है।

यदि हम दुनिया के नक्शे पर नज़र डालें तो हम देखते हैं कि मुस्लिम देश महत्वपूर्ण रणनीतिक जगहों पर स्थित हैं। भूमध्य सागर का 7 प्रतिशत भाग मुस्लिम देशों से घिरा हुआ है। लाल सागर और खाड़ी पूरी तरह मुस्लिम क्षेत्र में है। इतिहास की प्रक्रिया में मुसलमान अपनी महत्वपूर्ण एकता खो चुके हैं। इस एकता को मानवता के व्यापक हित के लिए एक बार फिर बहाल करने की आवश्यकता है।

मुसलमान, जिन्होंने एक ज़माने में विज्ञान और दुनिया की सभ्यता में बहुत अधिक योगदान दिया था, वह एक बार फिर ऐसा ही योगदान कर सकते हैं यदि वह इस्लाम के आधार पर एक हो जाएँ। मानवता का वास्तविक विकास केवल इस्लाम की शिक्षाओं का श्रद्धापूर्वक पालन करने से ही हो सकता है। हमें इस्लाम की कीर्ति की बहाली के लिए सोचा-समझा प्रयास करना चाहिए ताकि आज की समस्याओं से घिरी हुई दुनिया को रहने योग्य एक शान्तिपूर्ण स्थान बनाया जा सके। अतीत पर गर्व तभी सार्थक होगा जब वर्तमान को अतीत की रोशनी में सँवारा जा सके जिसमें भविष्य के लिए एक प्रण हो। मुस्लिम समुदाय के पास क्षमता है और इस्लाम की शिक्षाओं पर श्रद्धा के साथ अमल करने की ज़रूरत है।

निष्कर्ष

इसलिए यह आशा की जाती है कि मुसलमान विनम्रतापूर्वक अल्लाह की तरफ लौटेंगे और शैतान के बहकावे के विरुद्ध कठोर संघर्ष करेंगे ताकि वह ऐसे सच्चे दूत बन सकें जिनकी इस सभ्य धर्म को आवश्यकता है और दया, दानशीलता, सहनशीलता और सामान्य नेकी के दूत बनें जिसको यह धर्म निर्विवाद रूप से हर सदी में पैदा करता रहा है और उनसे यह आशा की जाती है कि वह सभी मनुष्यों को सफलता और प्रकाश और एक अल्लाह की इबादत की ओर आमन्त्रित करेंगे।

और इससे बढ़कर जिन लोगों ने सच्चाई को स्वीकार नहीं किया है, उनको आमन्त्रित किया जाता है कि वह उन साक्ष्यों और तर्कों पर गंभीर मनन करें जिनको इस पुस्तक में प्रस्तुत किया गया है। यह याद रखते हुए कि यह जीवन निश्चित रूप से एक उपहार है और एक अवसर है जिसे नष्ट नहीं करना चाहिए। आप अपने स्वामी से कैसे मिल सकेंगे जबकि आपको इस जीवन में मिला हुआ अवसर समाप्त हो जाएगा जिसे आपने अपनी व्यक्तिगत इच्छाओं की ओर दौड़ते हुए व्यतीत किया था और आपने अपने आप को उसके आगे अपनी शर्तों पर झुकने के अलावा उसकी इबादत के लिए नहीं झुकाया। कदम उठाइए इससे पहले कि देर हो चुकी हो, अन्यथा आपको आगे आने वाले परलोक के जीवन में अपने कदम न उठाने पर पछताना होगा।

आभार

मैं इस किताब को लिखने में सीधे सहायता करने और टिप्पणी करने वाले अनेक लोगों का आभार प्रकट करना चाहता हूँ। विशेष रूप से उन लेखकों का मै सच्चे दिल से आभारी हूँ जिनकी रचनाओं से इस किताब के संकलन और लेखन में मैंने मदद ली है।

अल्लाह से दुआ है कि वह उन सबपर कृपा करे और उनके प्रयासों को स्वीकार करे।

इस किताब के लेखन/ संकलन के पीछे किसी आर्थिक लाभ की नीयत या आशा नहीं है।

मैं इस किताब का हिन्दी अनुवाद करने के लिए श्री अब्दुल्लाह दानिश और इसकी हिन्दी टाईपिंग और सेटिंग करने के लिए श्री दिनेश कुमार सिंह का आभार प्रकट करना चाहूँगा जिन्होंने पूरे उत्साह, लगन और विनम्रता के साथ इसे सम्पन्न करने में सहयोग किया।

सर्वशक्तिमान अल्लाह की असीम कृपा ने मुझे इस कार्य को सम्पन्न करने में आवश्यक संसाधन, विवेक और उत्साह प्रदान किया। उसकी कृपा के बिना न तो यह मिशन सम्पन्न हो सकता था और न सार्थक हो सकता था। मैं अल्लाह से दुआ करता हूँ कि वह मुझे सम्पूर्ण मानवता के बीच शान्ति और प्रेम का सन्देश फैलाने के मार्ग की ओर मेरा मार्गदर्शन करे। आमीन!

जनवरी, 2014

सैयद हामिद मोहसिन
चैयरमैन, सलाम सेन्टर

सन्दर्भ सूची

1. मुहम्मद इन्साइक्लोपीडिया ऑफ सीरह	-	अफज़ालु र्रहमान
2. द इमरजेन्स ऑफ इस्लाम	-	डा0 मुहम्मद हमीदुल्लाह
3. द लाईफ ऑफ मुहम्द	-	हैकल
4. प्राफेट मुहम्मद	-	फतहुल्लाह गुलेन
5. इन्ट्रोडयूसिंग इस्लाम	-	जियाउद्दीन सरदार
6. इस्लाम इन फोकस	-	हमूदा अब्दलाती
7. इस्लाम	-	गुलाम सरवर
8. इस्लाम एण्ड द डेस्टिनी ऑफ मैन	-	गई ईटन
9. ला वाई डे महोमेट	-	कान्स्टेन्टाइन वर्गिल घेरग्यू
10. द फ्यूचर ऑफ इस्लाम	-	तारिक रमज़ान
11. दिस इज़ इस्लाम	-	डा0 के0के0 उस्मान
12. द होली कुरआन	-	अब्दुल्लाह यूसुफ अली
13. द कुरआन	-	डा0 नज़ीर अहमद

This document was created with the Win2PDF “Print to PDF” printer available at

https://www.win2pdf.com

This version of Win2PDF 10 is for evaluation and non-commercial use only.
Visit https://www.win2pdf.com/trial/ for a 30 day trial license.

This page will not be added after purchasing Win2PDF.

https://www.win2pdf.com/purchase/